श्रीरघुनाथतर्कवागीशप्रणीतः

आगमतत्त्वविलासः

ĀGAMATATTVA-VILĀSAḤ

भाषाभाष्यसंवलितः

भाषाभाष्यकारः

एस. एन. खण्डेलवाल

॥ श्रीः ॥

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला
505

श्रीरघुनाथतर्कवागीशप्रणीतः

आगमतत्त्वविलासः

भाषाभाष्यसंवलितः

[तृतीयो भागः]

भाषाभाष्यकारः
श्री एस० एन० खण्डेलवाल

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी

प्रकाशक

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन

(भारतीय संस्कृति एवं साहित्य के प्रकाशक तथा वितरक)
के. 37/117 गोपालमन्दिर लेन
पो. बा. नं. 1129, वाराणसी 221001
दूरभाष : 0542 2335263
ई-मेल : csp_naveen@yahoo.co.in

प्रथम संस्करण 2012 ई.
मूल्य : 300.00

ISBN : 978-93-80326-66-5 (Set)
978-93-80326-88-7 (Vol. III)

प्राप्तिस्थान

चौखम्बा पब्लिशिंग हाउस

4697/2, भू-तल (ग्राउण्ड फ्लोर)
गली नं. 21-ए, अंसारी रोड
दरियागंज, नई दिल्ली 110002
दूरभाष : 011 23286537
ई-मेल : chaukhambapublishinghouse@gmail.com

❖

चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान

38 यू. ए. बंगलो रोड, जवाहर नगर
पो. बा. नं. 2113, दिल्ली 110007

चौखम्बा विद्याभवन

चौक (बैंक ऑफ बड़ोदा भवन के पीछे)
पो. बा. नं. 1069, वाराणसी 221001

THE
CHAUKHAMBA SURBHARATI GRANTHMALA
505

ĀGAMATATTVA-VILĀSAḤ

of

Raghunātha Tarka-Vāgīśa

[VOL : 3]

Hindi Commentary by

Sri S. N. Khandelwal

Chaukhamba Surbharati Prakashan
Varanasi

ISBN : 978-93-80326-66-5 (Set)
978-93-80326-88-7 (Vol. III)

Publishers :
CHAUKHAMBA SURBHARATI PRAKASHAN
(Oriental Publishers & Distributors)
K. 37/117, Gopal Mandir Lane
Post Box No. 1129
Varanasi 221001
Tel. : 2335263
e-mail : csp_naveen@yahoo.co.in

Also can be had from :
CHAUKHAMBA PUBLISHING HOUSE
4697/2, Ground Floor
Gali No. 21-A, Ansari Road
Daryaganj, New Delhi 110002
Tel. : 32996391
e-mail : chaukhambapublishinghouse@gmail.com

CHAUKHAMBA SANSKRIT PRATISHTHAN
38 U.A. Bungalow Road, Jawahar Nagar
Post Box No. 2113
Delhi 110007

CHOWKHAMBA VIDYABHAWAN
Chowk (Behind to Bank of Baroda Building)
Post Box No. 1069
Varanasi 221001

विषयानुक्रमणी

॥ श्रीः ॥

श्रीरघुनाथतर्कवागीशप्रणीतः

आगमतत्त्वविलासः

भाषाभाष्यसंवलितः

तृतीयः परिच्छेदः

मन्त्रदेवताः

अथ मन्त्रादिभिर्देवता निरूप्यते। तत्रादौ गणेशः—

पञ्चान्तकं शशिधरं बीजं गणपतेर्विदुः ।

पञ्चान्तको गकारः। शशिनादसंवलिता विन्दुः। तथा चैकाक्षरोऽयं मन्त्रः॥१॥

अब मन्त्रादि के साथ देवता का निरूपण करते हैं। सर्वप्रथम गणेश के मन्त्रादि का निरूपण करते हैं। शशिधर (बिन्दुयुक्त) पञ्चान्तक (ग) को गणेशबीज (गम्) जानना चाहिये। पञ्चान्तक—ग। शशि-नादयुक्त विन्दु। गणेशबीज है—गम्। इससे यह एकाक्षर बीजमन्त्र है।।१।।

अथ पूजाप्रयोगः—प्रातःकृत्यादिपीठन्यासान्तं सामान्यपद्धत्युक्तरीत्या विधाय हृत्पद्मस्य केसरेषु मध्ये च तीव्रां ज्वालिनीं नन्दां भोगदां कामरूपिणीं उग्रां तेजोवतीं सत्यां विघ्ननाशिनीञ्च पीठशक्तिं प्रणवादिनमोऽन्तेन विन्यस्य तदुपरि ॐ सर्वशक्तिकमलासनाय नमः इति पीठमन्त्रं न्यसेत्।

तत ऋष्यादिन्यासः। गणकऋषिर्निवृत् छन्दः गणेशो देवता। ततः कराङ्गन्यासौ। गां अङ्गुष्ठाभ्यां नम इत्यादिना गां हृदयाय नम इत्यादिना च॥२॥

अब पूजाप्रयोग कहते हैं—प्रातःकृत्य पद्धति से पीठन्यास के अन्त तक कार्य

सामान्य पूजापद्धति के अनुसार करके हृत्पद्म के केशरसमूह में प्रदक्षिणक्रम से तथा मध्य में तीव्रा, ज्वालिनी, नन्दा, भोगदा, कामरूपिणी, उग्रा, तेजोवती, सत्या तथा विघ्ननाशिनी के नाम के आगे ॐ एवं अन्त में नमः लगाकर (जैसे—ॐ तीव्रायै नमः) न्यास करना चाहिये। तत्पश्चात् हृदय के ऊपरी भाग में 'ॐ गं सर्वशक्तिकमलासनाय नमः' इस पीठमन्त्र का न्यास करना चाहिये। इस मन्त्र के ऋषि हैं—गणक, निवृत् छन्द है तथा गणेश देवता हैं। इसका विनियोग इस प्रकार किया जाता है—अस्य श्रीगणेशमन्त्रस्य गणकऋषिः निवृच्छन्दः गणेशो देवता गकारो बीजं विन्दुः शक्तिः सर्वकामसिद्ध्यर्थे गणेशपूजने विनियोगः। तदनन्तर इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करना चाहिये—मस्तक पर—ॐ गणकाय ऋषये नमः। मुख में—ॐ निवृच्छन्दसे नमः। हृदय में—ॐ गणेशाय देवाय नमः। गुह्य में—ॐ गकाराय बीजाय नमः। दोनों पैरों पर—ॐ विन्दुबीजाय नमः। इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करने के उपरान्त ॐ गां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ॐ गीं तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ गूं मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ गैं अनामिकाभ्यां हुं, ॐ गौं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्, ॐ गः करतलकरपृष्ठाभ्यां अस्त्राय फट्—इस प्रकार से करन्यास करना चाहिये। इसके अनन्तर अंगन्यास इस प्रकार काना चाहिये—ॐ गां हृदयाय नमः, ॐ गीं शिरसे स्वाहा, ॐ गूं शिखायै वषट्, ॐ गैं कवचाय हुम्, ॐ गौं नेत्रत्रयाय वौषट् (जिन देवताओं को दो नेत्र हों; जैसे—राम, कृष्ण, हनुमान आदि, उनके लिये नेत्रत्रयाय वौषट् के स्थान पर 'नेत्राभ्यां वौषट्' का प्रयोग करना चाहिये), ॐ गः करतलकरपृष्ठाभ्यां अस्त्राय फट्। यह अंगन्यास होता है। उसके पश्चात् निम्नवत् ध्यान करना चाहिये।।२।।

ध्यानम्

सिन्दूराभं त्रिनेत्रं पृथुतरजठरं हस्तपद्मैर्दधानं
दन्तं पाशाङ्कुशेष्टान्युरुकरविलसद्बीजपूराभिरामम्।
बालेन्दुज्योतिमौलिं करिपतिवदनं दानपूरार्द्रगण्डं
भोगीन्द्राबद्धभूयं भजत गणपतिं रक्तवस्त्राङ्गरागम्॥३॥

इति वरम्। तथा च दक्षिणवामयोरर्द्धे अङ्कुशपाशौ अधश्च स्वकीयं दन्तं वरञ्च दधानमित्यर्थः। एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूजार्घ्यं संस्थाप्य पीठपूजां विधाय केशरेशु मध्ये च तीव्रादिपीठमन्वन्तं सम्पूज्य, मूलेन मूर्त्तिं प्रकल्प्य, पुनर्ध्यात्वावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणपूजां कुर्यात्। कर्णिकायां पूर्वादि दिक्षु ॐ गणाधिपतये नमः। एवं गणेशाय, गणनायकाय, गणक्रीड़ाय। ततः केशरेषु मध्ये च तीव्रादिपीठमन्वन्तं सम्पूज्य, मूलेन मूर्त्तिं प्रकल्प्य, पुनर्ध्यात्वावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं

विधायावरणपूजां कुर्यात्। कर्णिकायां पूर्वादि दिक्षु ॐ गणाधिपतये नमः। एवं गणेशाय, गणनायकाय, गणक्रीड़ाय। ततः केशरेषु अग्नि-निर्ऋतिवाय्वीशानकोणेषु मध्ये दिक्षु च गां हृदयाय नम इत्यादिना पूजयेत्। पत्रमध्ये पूर्वादितः वक्रतुण्डमेकदन्तं महोदरं गजाननं लम्बोदरं विकटं विघ्नराजं धूम्रवर्णं सम्पूज्य दलाग्रेषु ब्राह्मयादीन् मातॄः पूर्वादितः सम्पूज्य तद्वहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। पुरश्चरणं चतुर्लक्षजपः। मोदकपृथुकलाजशक्तिवक्षुपर्वनारिकेलतिलसु-पक्वकदलीफलैरष्टाभिर्द्रव्यैर्दशांशहोमः॥४॥

इस ध्यान का अर्थ है कि सिन्दूर के समान रक्त वर्णधारी, तीन नेत्रों वाले, अत्यन्त स्थूल उदर वाले, ऊर्ध्व के बाँयें तथा दाहिने हाथों में अंकुश तथा पाशधारी, वाम तथा दक्षिण निचले हाथों में अपना (टूटा हुआ) दाँत तथा वरमुद्रा वाले, बृहदाकृति सूड़ में अनार का फल धारण करने से रमणीय लगने वाले, बाल चन्द्र के उज्ज्वल मुकुट को धारण करने वाले, हस्ति के समान मुख वाले, जिनके गाल निरन्तर मद के प्रवाह से गीले हो रहे हैं, सर्वश्रेष्ठ सर्पों का आभूषण पहनने वाले, लाल वस्त्र पहने हुये, लाल रंग के अंगराग से रंजित गणपति का मैं भजन करता हूँ।

ध्यान के उपरान्त गणपति मुद्रा दिखानी चाहिये।

इष्ट = वरमुद्रा। दक्षिण तथा वाम ऊर्ध्व हस्त में अंकुश तथा पाश एवं नीचे वाले दोनों हाथों में अपना (खण्डित) दांत तथा वरमुद्रा वाले—यह अर्थ है। ध्यान, मानसपूजा क्रमशः करना चाहिये। तदनन्तर विशेष अर्घ्य स्थापित करके पीठपूजा करके केशर के मध्य में तीव्रादि पीठशक्ति तथा पीठमन्त्र की पूजा करके मूल मन्त्र द्वारा मूर्त्ति की कल्पना करने के बाद पुनः ध्यान करने के उपरान्त आवाहन करने के पश्चात् पञ्च पुष्पाञ्जलि निवेदन-पर्यन्त कार्य करके आवरण-पूजन करना चाहिये। कर्णिका के पूर्व दिक् में ॐ गणाधिपतये नमः, इसी प्रकार ॐ गणेशाय नमः, ॐ गणनायकाय नमः, ॐ गणक्रीड़ाय नमः मन्त्रों द्वारा चार गणाधिपति की पूजा करनी चाहिये। तत्पश्चात् केशरसमूह के अग्निकोण, नैर्ऋत्य कोण, वायुकोण तथा ईशान कोण में, मध्य में तथा दिक्-समूह में ॐ गां हृदयाय नमः, ॐ गीं शिरसे स्वाहा, ॐ गूं शिखायै वषट्, ॐ गैं कवचाय हुम्, ॐ गौं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ गः करतलपृष्ठाभ्यां नमः मन्त्र से अंगसमूह का पूजन करना चाहिये।

पत्र के मध्य में पूर्वादि क्रम से 'ॐ वक्रतुण्डाय नमः' इस प्रकार से अर्थात् प्रत्येक नाम के आदि में 'ॐ' तथा अन्त में 'नमः' लगाकर वक्रतुण्ड, एकदन्त,

महादेव, गजानन, लम्बोदर, विकट, विघ्नराज तथा धूम्रवर्ण का पूजन करना चाहिये। पत्र के आगे पूर्वादि क्रम से प्रत्येक नाम के आदि में 'ॐ' तथा अन्त में 'नमः' लगाकर इन मातृगणों का पूजन करना चाहिये—ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, इन्द्राणी, चामुण्डा तथा महालक्ष्मी। इसके अनन्तर दल के बाहरी भाग में अपने पूर्वादि दिक्-समूह में (साधक के पूर्व दिशा से) दक्षिणावर्त्त क्रम से (प्रदक्षिणक्रम से) बीजयुक्त, वाहनयुक्त, जातियुक्त, अधिपतियुक्त, हेति(आयुध)युक्त, मूल पारिषदयुक्त इन्द्र, अग्नि आदि लोकपालों का पूजन करना चाहिये। एतदर्थ इन मन्त्रों का प्रयोग करना चाहिये—

इन्द्र के लिये—ॐ लं इन्द्राय सुराधिपतये सायुधाय सपरिवाराय सशक्तिकाय गणेशपारिषदाय नमः।

अग्नि के लिये—ॐ रं अग्नये तेजोऽधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय सशक्तिकाय गणेशपारिषदाय नमः।

यम के लिये—ॐ यं यमाय प्रेताधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय सशक्तिकाय गणेशपारिषदाय नमः।

निर्ऋति के लिये—ॐ क्षं निर्ऋतये रक्षोऽधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय सशक्तिकाय गणेशपारिषदाय नमः।

वरुण के लिये—ॐ वं वरुणाय जलाधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय सशक्तिकाय गणेशपारिषदाय नमः।

वायु के लिये—ॐ यं वायवे प्राणाधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय सशक्तिकाय गणेशपारिषदाय नमः।

सोम के लिये—ॐ सं सोमाय ताराधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय सशक्तिकाय गणेशपारिषदाय नमः।

ईशान के लिये—ॐ हं ईशानाय गणाधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय सशक्तिकाय गणेशपारिषदाय नमः।

निर्ऋति तथा वरुण के मध्य में—ॐ ह्रीं अनन्ताय नागाधिपतये सायुधाय सपरिवाराय सशक्तिकाय गणेशपारिषदाय नमः।

(पूर्व) इन्द्र और ईशान के मध्य में—ॐ आं ब्रह्मणे प्रजाधिपतये सायुधाय सपरिवाराय सशक्तिकाय गणेशपारिषदाय नमः।

यही मन्त्रसमूह लोकपालगण की पूजा के लिये भी हैं। इनके पूजन में धूपदान से विसर्जन-पर्यन्त कर्म करना चाहिये।

गणेशमन्त्र के चार लाख जप से पुरश्चरण सम्पन्न होता है। जपान्त में लड्डू,

चिवडा, लावा, सत्तू, ईख के पोर, नारियल, भूसी हटायी गयी धोयी सफेद तिल तथा पके केले से चालीस हजार होम, चार हजार तर्पण, चार सौ अभिषेक तथा चालीस ब्राह्मणों को भोजन एवं दक्षिणा प्रदान करना चाहिये।।३-४।।

विशेष—आवरण देवता के पूजन का स्थान है—केशरसमूह में अग्नि, नैर्ऋत्य, वायु तथा ईशान कोण, देवता का पुरोभाग तथा चारो दिशा। देवता के पुरोभाग की कर्णिका में नेत्र की तथा दिक्-समूह में अस्त्र की पूजा होती है। अंगदेवतागण (हृदयादि) का यथाक्रम से ध्यान इन वर्णों में करना चाहिये—तुषारवर्ण, स्फटिकवर्ण, श्यामवर्ण, नीलवर्ण, कृष्णवर्ण, तथा अरुण वर्ण स्त्रीरूपा वरदाभय मुद्राधारिणी तथा प्रधान देवता की देहस्वरूपा ध्यान करना चाहिये।

यहाँ जो तिल को शुद्ध करने के लिये कहा गया है, उसमें तिल को जल से धोकर गणेशगायत्री से उसे शुद्ध करना चाहिये। गणेशगायत्री इस प्रकार है—ॐ एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि तन्नो विघ्नः प्रचोदयात्।

महागणपतिमन्त्रान्तरम्

अथ मन्त्रान्तरम्। प्रणवः लक्ष्मीबीजं कामबीजं भूबीजं विघ्नबीजं गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा। यथा निबन्धे—

श्रीशक्तिस्मरभूविघ्नबीजानि प्रथमं वदेत्।
ङेऽन्तं गणपतिं पश्चाद् वरान्ते वरदं पदम्॥५॥
उक्त्वा सर्वजनं मेऽन्ते वशमानय ठद्वयम्।
अष्टाविंशत्यक्षरोऽयं ताराद्यो मनुरीरितः॥६॥

इत्यष्टाविंशत्यक्षरः।

अब महागणपति का मन्त्रान्तर (अन्य मन्त्र) कहते हैं। प्रणव (ॐ), लक्ष्मीबीज (श्रीं), मायाबीज (ह्रीं), कामबीज (क्लीं), भूबीज (ग्लौं), विघ्नबीज (गं), गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा—इनके संयोग से मन्त्र बनता है। मन्त्रोद्धार होता है—ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा। यह महागणेश का अट्ठाईस अक्षरों वाला मन्त्र है। निबन्ध में कहा भी गया है कि प्रथमतः श्रीबीज (श्रीं), तदनन्तर क्रमशः शक्तिबीज (ह्रीं), कामबीज (क्लीं), भूबीज (ग्लौं) एवं विघ्नबीज (गं) कहे। इसके बाद ङेऽन्त (चतुर्थी विभक्त्यन्त) गणपति अर्थात् 'गणपतये' कहे। तत्पश्चात् वर शब्द के अन्त में वरद पद लगाये अर्थात् 'वरवरद' कहे। तदनन्तर 'सर्वजनं मे' कहकर अन्त में 'वशमानय' तथा 'ठद्वय' (स्वाहा) कहे। आदि में प्रणव रहेगा। इसका भी मन्त्रोद्धार होता है—ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गणपतये वरवरद सर्वजन मे वशमानय स्वाहा। यह अट्ठाईस अक्षरों का महागणपतिमन्त्र है।।५-६।।

भूबीजन्तु ग्लौमिति। यथा तन्त्रे—स्मृतिस्थं मांसमौ विन्दुयुक्तं भूबीजमीरितम्। स्मृतिर्गकारः। मांसं लकारः। विघ्नबीजं गमिति। तथा च ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा। इत्यष्टाविंशत्यक्षरो मन्त्रः॥७॥

भूबीज = ग्लौं। तन्त्र में कहा है कि स्मृतिस्थं मासमौ विन्दुयुक्तं भूबीजमीरितम्। स्मृति = ग। स्मृतिस्थ = गकार में स्थित मं स 'ल' अर्थात् 'ग्ल'। उसमें 'औ' विन्दुयुक्त करने से 'ग्लौं' भूबीज का उद्धार होता है। विघ्नबीज = गं। इसी से उस २८ अक्षर वाले मन्त्र का उद्धार हुआ है—ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा'।।७।।

विशेष—इस मन्त्र के गणक ऋषि, निवृत् गायत्री छन्द, महागणपति देवता, 'ग' बीज तथा स्वाहा शक्ति है।

अस्य ध्यानम्—

नवरत्नमयं द्वीपं स्मरेदिक्षुरसाम्बुधौ।
तद्वीचिधौतपर्यन्तं मन्दमारुतसेवितम्॥८॥
मन्दारपारिजातादिकल्पवृक्षलताकुलम्।
तद्भूतरत्नच्छायाभिररुणीकृतभूतलम्॥९॥
उद्यद्दिनकरेन्दुभ्यामुद्भासितदिगन्तरम्।
तस्य मध्ये पारिजातं नवरत्नमयं स्मरेत्॥१०॥
ऋतुभिः सेवितं षड्भिरनिशं प्रीतिवर्द्धनैः।
तस्याधस्तान्महापीठे रचिते मातृकाम्बुजे।
षट्कोणान्तस्त्रिकोणस्थं महागणपतिं स्मरेत्॥११॥

इक्षुसागर में नवरत्नमय द्वीप का स्मरण करे। यह द्वीप चारो ओर इक्षुसागर की तरंगों से धुला तथा मन्द वायु से सेवित है।

यह द्वीप मन्दार, पारिजात-प्रभृति कल्पवृक्ष तथा लता से व्याप्त है। वहाँ का भूतल द्वीप के रत्नों की प्रभा से (जो वहीं सम्भूत हैं) अरुण वर्ण का प्रतीयमान है।

(इस पूजा में पीठन्यास द्वारा पृथ्वीन्यास के पश्चात् इक्षुसमुद्र, नवरत्नमय द्वीप, नवरत्नमय पारिजात का तथा क्षीरसमुद्र का भी न्यास करना चाहिये।)

इस द्वीप की दिशायें उदीयमान सूर्य तथा चन्द्र के द्वारा उद्भासित हैं। इसके मध्य में नवरत्नमय पारिजात का स्मरण करना चाहिये।

यह पारिजात वृक्ष प्रीतिवर्द्धक छः ऋतुओं से सेवित है। उसके अधोभाग में रचित महापीठ के मातृकापद्म कर्णिकास्थित षट्कोण के मध्यवर्त्ती अधोमुख त्रिकोण में महागणपति का ध्यान करना चाहिये।।८-११।।

हस्तीन्द्राननमिन्दुचूड़मरुणच्छायं त्रिनेत्रं रसा-
दाश्लिष्टं प्रियया सपद्मकरया साङ्कस्थया सन्ततम्।
बीजापूरगदाधनुस्त्रिशिखयुक्चक्राजपाशोत्पलं,
व्रीह्यग्रस्वविषाणरत्नकलशान् हस्तैर्वहन्तं भजे।।१२।।

महागणपति का ध्यान बताते हैं। गज के समान मुख वाले, चन्द्रमा को चूड़ा में धारण करने वाले, अरुण वर्ण, तीन नेत्रों वाले, अनुराग के कारण गोद में स्थित पद्मधारिणी प्रिया को अपने ऊर्ध्व वाम हस्त से आलिंगन में लिये हुये, निचले बाँयें हाथ से लेकर दाहिने अधोहस्त तक में क्रमशः अनार, गदा, ईख, धनुष, त्रिशूल, चक्र, पद्म, पाश एवं उत्पल धारण करने वाले तथा शुण्डाग्र में धान की मंजरी से शोभित रत्नपूर्ण कलशधारी महागणपति का मैं भजन करता हूँ।।१२।।

गण्डपालीगलद्दानपुरलालसमानसान्।
द्विरेफान् कर्णतालाभ्यां वारयन्तं मुहुर्मुहुः।।१३।।

कराग्रधृतमाणिक्यकुम्भवक्त्रविनिःसृतैः।
रत्नवर्यैः प्रीणयन्तं साधकं मदविह्वलम्।।१४।।

कपोल से निकले मद की लालसा से मँडरा रहे भ्रमरों को कानों को हिलाकर भागते हुये, शुण्डाग्र में माणिक्य घट में मुखनिःसृत रत्नवर्षण के द्वारा साधकगण की प्रीति को बढ़ाने वाले, मद से विह्वल, माणिक्यमय मुकुटधारी, रत्नाभरण-भूषित महागणपति का मैं भजन करता हूँ।।१३-१४।।

विशेष—ध्यान के पश्चात् यथाक्रमेण मानसोपचार पूजा, विशेषार्घ्य-स्थापन, पीठपूजा, तीव्रादि पीठशक्ति-पूजन, मूल मन्त्र से मूर्त्ति-कल्पना, पुनः ध्यान, आवाहनादि से पञ्चपुष्पाञ्जलिदान-पर्यन्त कर्म करके आवरणदेवता का पूजन करना चाहिये। इसमें प्रथम त्रिकोण में गणनायक-पूजा, क्रमशः वक्ष्यमाण विधान से त्रिकोण के बाहर चारो दिशाओं में अग्रस्थ बिल्ववृक्ष के अधोभाग में श्री तथा श्रीपति की, दक्षिण वटवृक्ष के अधोभाग में गौरी तथा गौरीपति की, पश्चिम में पीपल वृक्ष के अधोभाग में रति तथा रतिपति की, उत्तर में प्रियंगु वृक्ष के अधोभाग में मही तथा वराह भगवान् की, देवता के आगे लक्ष्मीसहित गोपनायक की, छः कोणों के अग्रकोण में सिद्धि के साथ आमोद की, अग्निकोण में समृद्धि के साथ प्रमोद की, ईशान कोण में कान्ति के साथ सुमुख

की, नैर्ऋत्य कोण में मदनावती के साथ दुर्मुख की, राक्षसकोण में मदद्रवा के साथ विघ्न की, वायु कोण में द्राविणी के साथ विघ्नहर्त्ता की, षट्कोण के दोनों पार्श्वों में महागणपति के दक्षिण में वसुधारा के साथ शंखनिधि की एवं बाँयें वसुमति के साथ पद्मनिधि की, केशरों में अंगपूजा, पत्र के मध्यस्थल में ब्राह्मी आदि मातृवर्ग की पूजा, बहिर्भाग में वज्रादि अस्त्रों की पूजा करके जप तथा होमान्त में आत्म-समर्पणादि कर्म करना चाहिये।

बीजपूरं दाड़िमफलम्। पुरश्चरणं चतुश्चत्वारिंशत्सहस्राधिकचतुर्लक्षजपः। दशांशहोमः पूर्वोक्तद्रव्यैः। अधिकं ग्रन्थान्तरेऽनुसन्धेयम्॥१५॥

बीजपूर—अनार का फल। मन्त्र का पुरश्चरण चार लाख चौवालीस हजार जप से सम्पन्न होता है। मोदकादि आठ वस्तुओं से जप का दशांश होम करना चाहिये। अधिक जानने के लिये अन्य ग्रन्थों का अवलोकन करना चाहिये।।१५।।

विशेष—मोदकादि आठ वस्तु हैं—मोदक, चूड़ा अथवा चिवडा, धान का लावा, सत्तू, ईख का पोर, नारियल, छोटी सफेद तिल एवं पका केला।

इस मन्त्र का चार लाख चौवालीस हजार जप करने के पश्चात् चार हजार चार सौ तर्पण एवं चार सौ चालीस अभिषेक करने के उपरान्त चौवालीस ब्राह्मणों को भोजन तथा दक्षिणादि से तृप्त करना चाहिये।

मायापुटितनिजबीजान्ते महागणपतये स्वाहा इति द्वादशाक्षरः। तेन ह्रीं गं ह्रीं महागणपतये स्वाहा इति द्वादशाक्षरो मन्त्रः॥१६॥

मायाबीज द्वारा पुटित निजबीज (गं) के अन्त में 'महागणपतये स्वाहा' लगाने से इस प्रकार का मन्त्रोद्धार होता है—ह्रीं गं ह्रीं महागणपतये स्वाहा। यह श्री गणेश का द्वादशाक्षर मन्त्र कहा गया है।।१६।।

विशेष—इस महागणपति मन्त्र के लिये करांगन्यास इस प्रकार किया जाता है—ॐ ह्रीं अंगुष्ठाभ्यां नमः, ॐ गं तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ ह्रीं मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ महागणपतये अनामिकाभ्यां हुं, ॐ स्वाहा कनिष्ठाभ्यां वौषट्, ॐ ह्री गं ह्रीं गणपतये स्वाहा करतलपृष्ठाभ्यां फट्। इसी प्रकार अंगन्यास तथा उसके पश्चात् व्यापकन्यास भी करना चाहिये।

मुक्तागौरं मदगजमुखं चन्द्रचूड़ं त्रिनेत्रं
हस्तैः स्वीयैर्दधतमरविन्दाङ्कुशौ रत्नकुम्भम्।
अङ्कस्थायाः सरसिजरुचस्तद्ध्वजालम्बिपाणे-
र्देव्या यो नौ विनिहतकरं रत्नमौलिं भजामः॥१७॥

अब ध्यान करना चाहिये। उपर्युक्त ध्यानश्लोक का अर्थ इस प्रकार है—मुक्ता के समान गौर वर्ण, मदस्रावी, गज के मुख के समान मुख अर्थात् गजानन, चन्द्रचूड़ (जिसके शिर पर चन्द्रमा है), त्रिनेत्र, अपने दाहिने तथा बाँयें ऊर्ध्व हस्त द्वारा पद्म एवं अंकुश धारण किये हुये, दाहिने हस्त द्वारा रत्नभरे घट को धारण करने वाले, अपनी गोद में स्थित दाहिने हाथ में स्थित कमल के वर्णसदृश रंगों वाली अपनी प्रिया की योनि में वाम हस्त की अंगुलियाँ न्यस्त किये हुये रत्नमौलि शक्तिगणपति का मैं भजन करता हूँ।।१७।।

तद्ध्वजेति। तल्लिङ्गालम्बिपाणेरित्यर्थः। देव्या स्वप्रियाया इत्यर्थः। पुरश्चरणमेकलक्षजपः। अपूपैर्दशांशहोमः। अन्यदन्यत्र॥१८॥

तद्ध्वजालम्बिपाणेः—अपने लिंग के अग्रभाग का स्पर्श करने वाली। देव्याः—निजप्रिया। इस मन्त्र का पुरश्चरण एक लाख जप से होता है। अपूप द्वारा दश हजार होम करना चाहिये। शारदातिलक आदि ग्रन्थों में इनसे सम्बद्ध अन्यान्य विषयों का अवलोकन करना चाहिये।।१८।।

विशेष—जिस प्रकार से महागणपति-पूजा का विधान है, उसी प्रकार से शक्ति-गणपति का भी पूजन किया जाता है। पूर्ववत् ध्यान, मानसोपचार पूजन, विशेष अर्घ्य-स्थापन, तीव्रादि ९ शक्ति तथा पीठमन्त्र से पीठपूजा, तत्पश्चात् पुनः ध्यान से आवाहनादि, पुष्पाञ्जलि-पर्यन्त सब कार्य करके आवरण-पूजन करना चाहिये। प्रथम आवरण है—पञ्चमिथुन, द्वितीय है—आमोदादि, अस्त्रमन्त्रसमूह है तृतीयावरण, ब्राह्मी आदि मातृकायें हैं चतुर्थ आवरण, लोकपालगण का है पञ्चम आवरण एवं वज्र आदि अस्त्रों षष्ठ आवरण में पूजित होते हैं।

मन्त्रान्तरम्—ॐ ह्रीं गं ह्रीं वशमानय स्वाहा। यथा—

शक्तिरुद्धं निजं बीजं वशमानय ठद्वयम्।
ताराद्यो मनुराख्यातो रुद्रसंख्याक्षरान्वितः ॥१९॥

अब एकादशाक्षर मन्त्र कहते हैं। शारदातिलक में कहा गया है कि शक्ति (ह्रीं) द्वारा रुद्ध अर्थात् पुटित निजबीज (गं) तत्पश्चात् 'वशमानय' तथा 'स्वाहा'। इसमें तार (प्रणव) आदि में लगाया जायेगा। मन्त्रोद्धार होता है—ॐ ह्रीं गं ह्रीं वशमानय स्वाहा।।१९।।

विशेष—इस मन्त्र का ऋष्यादि न्यास भी करना चाहिये। यहाँ 'गं' बीज है और स्वाहा शक्ति है। उसका अंगन्यास इस प्रकार होता है—ॐ ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः, ॐ ह्रीं गं ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ वशं मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ आनय अनामिकाभ्यां

हुँ, ॐ स्वाहा कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्, ॐ ह्रीं गं ह्रीं वशमानय स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां अस्त्राय फट्। इन्हीं समस्त मन्त्रों से अंगन्यास भी किया जाता है।

तस्य ध्यानम्—

हस्तैर्विभ्रतमिक्षुदण्डवरदौ पाशाङ्कुशौ पुष्करः
स्पृष्ट्वा स्वप्रमदावराङ्गमनयाश्लिष्टं ध्वजाग्रस्पृशा।
श्यामाङ्ग्या विधृताजया त्रिनयनं चन्द्रार्कचूडं जवा-
रक्तं हस्तिमुखं स्मरामि सततं भोगातिलोलं विभुम्॥२०॥

इनका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—अपने हाथों में ईख का दण्ड, वरमुद्रा, पाश तथा अंकुश धारण करने वाले, अपने शुण्ड के अग्रभाग से अपनी स्त्री के वरांग (उत्तमांग) का स्पर्श करने वाले, लिंगस्पर्शिनी पद्मधारिणी श्यामांगी प्रिया द्वारा आलिंगित, त्रिनयनधारी, अर्धचन्द्र से युक्त मस्तक वाले, जवापुष्प के समान रक्त वर्ण, सर्वदा भोग के अत्यन्त लोलुप विभु गजेन्द्रवदन गणेश का मैं स्मरण करता हूँ।।२०।।

पुरश्चरणं लक्षत्रयम्। इक्षुदण्डैराज्ययुक्तैरपूपैर्दशांशहोमः। अन्य-दन्यत्र॥२१॥

इस मन्त्र का पुरश्चरण तीन लाख जप से सम्पन्न होता है। घृतयुक्त ईख से अथवा अपूप द्वारा तीस हजार हवन करना चाहिये। इससे सम्बद्ध अन्य विषयों के लिये शारदातिलक आदि ग्रन्थों का अवलोकन करना चाहिये।।२१।।

विशेष—यहाँ इस ग्रन्थ में अथवा तन्त्रसार में विरिगणपति की पूजापद्धति का उल्लेख नहीं किया गया है। वह शारदातिलक में उक्त है। अतः शारदातिलक के अनुसार उसका विवेचन यहाँ किया जा रहा है।

विरिगणपति का छब्बीस अक्षरों का मन्त्र होता है— ह्रीं विरि विरि गणपतये सर्वलोकं मे वशमानय स्वाहा। इसके ऋषि गणक हैं, गायत्री छन्द है, विरि गणपति देवता हैं, ह्रीं बीज है तथा स्वाहा शक्ति है। इसका अंगन्यास इस प्रकार होता है— ॐ ह्रीं विरि विरि हृदयाय नमः, ॐ ह्रीं गणपतये शिरसे स्वाहा, ॐ ह्रीं वरवरद शिखायै वषट्, ॐ ह्रीं सर्वलोकं कवचाय हुम्, ॐ ह्रीं वशमानय नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ ह्रीं अस्त्राय फट्। इस मन्त्र का ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

सिन्दूराभमिभाननं त्रिनयनं हस्तेषु पाशाङ्कुशौ,
बिभ्राणं मधुमत्कपालमनिशं साद्धेन्दुमौलिं भजे।
पुष्ट्याक्लिष्टतनुं ध्वजाग्रकरया पद्मोलसद्धस्तया
तद्योन्याहितपाणिमात्तवसुमत्पात्रोल्लसत्पुष्करम् ।।

अर्थात् सिन्दूर के समान रक्तवर्ण, तीन नेत्रों वाले, उपरि दाहिने हाथ में पाश, उपरि वाम हस्त में अंकुश, दाहिने नीचे वाले हाथ में मधु से भरा कपाल, अर्धेन्दु मौलि, पद्मद्वय द्वारा उज्ज्वल, ध्वजाग्र-स्पर्शी ऊर्ध्व हस्त द्वारा पुष्टि की आलिंगित देह, पद्म से उल्लासित नीचे के बाँयें हाथ की अंगुलियाँ पुष्टि की योनि में प्रविष्ट, दाहिने हाथ में धन से पूर्ण पात्र से उल्लासित, पुष्करधारी विरिगणपति का मैं सर्वदा भजन करता हूँ।

ध्यान के पश्चात् महागणपति की पूजाविधि के अनुसार ही शेष समस्त कर्मों को सम्पादित करते हुये इनका भी पूजन करना चाहिये।

अथ हेरम्बः

पञ्चान्तको विन्दुयुतो वामकर्णविभूषितः ।
तारादिहृदयान्तोऽयं हेरम्बमनुरीरितः ॥२२॥

तथा च गूं नमः इति चतुरक्षरः।

अब हेरम्ब का मन्त्र कहा जाता है। वाम कर्ण (ऊ) से विभूषित बिन्दुयुक्त पञ्चान्तक (ग) को आदि में प्रणव (ॐ) एवं अन्त में हृदय (नमः) लगाकर हेरम्ब का मन्त्र बनता है। मन्त्रोद्धार इस प्रकार होता है—ॐ गूं नमः। चार अक्षरों का यह हेरम्ब गणपति का मन्त्र कहा गया है।।२२।।

विशेष—इस मन्त्र के गणक ऋषि हैं, गायत्री छन्द है, हेरम्ब गणपति देवता हैं, गकार बीज है तथा विन्दु शक्ति है। गं बीज से इसका षडंगन्यास किया जाता है। पूर्ववत् तीव्रादि पीठपूजा करके 'हुं हुं महासिंहाय गां हेरम्बासनाय नमः' से पीठन्यास किया जाता है।

अस्य ध्यानम्—

मुक्ताकाञ्चननीलकुन्दघुसृणच्छायैस्त्रिनेत्रान्वितै-
र्नागास्यैर्हरिवाहनं शशिधरं हेरम्बमर्कप्रभम् ।
दृप्तं दानमभीतिमोदकरदान् टङ्कं शिरोक्षात्मिकां
मालां मुद्गरमङ्कुशं त्रिशिथकं दोर्भिर्दधानं भजे ॥२३॥

अब ध्यान कहते हैं—मोती के समान, स्वर्ण के समान, कुन्द के समान तथा कुमकुम के समान वर्ण वाले, तीन नेत्रों से युक्त, ऊर्ध्व आदि (एक ऊर्ध्वमुख तथा चारो दिशाओं के चार मुख) पाँच हस्तिमुख द्वारा उपलक्षित, सिंह वाहन वाले, चन्द्रधारी, सूर्य के समान प्रभा वाले, दृप्त हाथों के समूह द्वारा वर, अभय, मुद्रा,

मोदक, अपना दाँत, टंक (परशु), मुण्ड (कपाल), अक्षमाला, मुद्गर, अंकुश तथा त्रिशिख (त्रिशूल) धारण करने वाले हेरम्ब का मैं भजन करता हूँ।।२३।।

हरिवाहनं सिंहवाहनम्। शिरो मुण्डम्। अक्षात्मिका मालामक्षमालाम्। पुरश्चरणं लक्षत्रयम्। होमश्च घृताक्ततिलैर्दशांशः। अन्यदन्यत्र॥२४॥

हरिवाहन = सिंहवाहन। शिर = मुण्ड, कपाल। अक्षात्मिका अक्षमाला। पुरश्चरण— तीन लाख जप। घृतमिश्रित तिल से तीन लाख होम। इससे सम्वद्ध अन्य विषय अन्य ग्रन्थों में देखना चाहिये।।२४।।

विशेष—ध्यान से लेकर पूर्वकथित रूप से पुष्पाञ्जलि निवेदन तक समस्त कर्म करके षड्ङ्गन्यास मन्त्र से षडंग देवता का पूजन करके उपर लिखे पद्म (चक्र)-स्थित पत्रों में विघ्न, विनायक, शूर, वीर, वरद, इभवक्त्र, एकरद तथा लम्बोदर का पूजन करना चाहिये। पत्र के आगे इन्द्रादि लोकपाल एवं उसके बाहर वज्रादि अस्त्रसमूह का पूजन करके धूपदान से विसर्जन तक सभी कर्म सम्पादित करना चाहिये। यह तन्त्रसार का वचन है। शारदातिलक में इसके सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा गया है।

मन्त्रान्तरम्—गं क्षिप्रप्रसादनाय नमः इति दशाक्षरः। यथा निबन्धे—

संवर्त्तको नेत्रयुतः पार्श्वो वह्न्यासने स्थितः।
प्रसादनाय हृन्मत्रः स्वबीजाद्यो दशाक्षरः॥२५॥

नेत्र (इ) से युक्त संवर्त्तक (क्ष); इससे होता है—क्षि। वह्न्यासन (र)-स्थित पार्श्व 'प' अर्थात् 'प्र'। तदनन्तर 'प्रसादनाय' लगाये। इसके पश्चात् हृन्मन्त्र (नमः)। पहले 'ग' बीज (गं) लगाये। अब मन्त्रोद्धार होता है—गं क्षिप्रप्रसादनाय नमः। यह गणेश का दशाक्षर मन्त्र है।।२५।।

विशेष—इस मन्त्र के गणक ऋषि, विराट् छ, क्षिप्रप्रसादन विघ्न देवता, गं बीज तथा 'आय' शक्ति है।

अथ ध्यानम्—

पाशाङ्कुशौ कल्पलतां विषाणं दधत्स्वशुण्डाहितबीजपूरः।
रक्तस्त्रिनेत्रस्तरुणेन्दुमौलिर्हारोज्ज्वलो हस्तिमुखोऽवताद्वः॥

पुरश्चरणं लक्षजपः। तिलैर्मधुरत्रयेणाष्टद्रव्यैर्वायुतहोमः। अन्यदन्यत्र॥२६॥

दाहिने ऊर्ध्व वाले हाथ में पाश, बाँयें ऊर्ध्व वाले हाथ में अंकुश, दाहिने निचले हाथ में कल्पलता तथा बाँयें निचले हाथ में विषाण (दाँत) धारण करने वाले, अपने शुण्ड के अग्रभाग में अनार धारण करने वाले, लाल वर्ण, त्रिनेत्र, बाल चन्द्रमा मस्तक पर धारण करने वाले, हार से उज्ज्वल गणपति गजानन तुम सबकी रक्षा करें।

इसका पुरश्चरण एक लाख जप से होता है। त्रिमधुर में तिल को सान कर अथवा मोदक, चिवड़ा, धान का लावा, सत्तू, ईख का पोर, नारियल, धुली सफेद तिल तथा केला—इन आठ को मिलाकर दश हजार हवन करना चाहिये। अन्य विषय शारदातिलक में देखना चाहिये।।२६।।

विशेष—एकाक्षर मन्त्रोक्त पीठ पर इनका पूजन करके सर्वप्रथम अंगदेवता का पूजन करना चाहिये। तदनन्तर विघ्नविनायक, वीर, शूर, वरद, इभवक्त्र, एकदन्त तथा लम्बोदररूपी आठ विघ्न की पूजा करके पूर्वोक्त पत्र के आगे ब्राह्मी-प्रभृति का पूजन, तदनन्तर पत्र के बहिर्भाग में लोकपालगण तथा उनके अस्त्रों का पूजन करना चाहिये। तदनन्तर धूपदान से लेकर विसर्जन-पर्यन्त कर्म करना चाहिये।

अथ हरिद्रागणेशः

पञ्चान्तको धरासंस्थो विन्दुभूषितमस्तकः ।
एकाक्षरो महामन्त्रः सर्वकामफलप्रदः ॥२७॥

पञ्चान्तको गकारः। धरा लकारः। तथा च ग्लं इत्येकाक्षरो मन्त्रः।

अब हरिद्रागणेश का मन्त्र कहते हैं। पञ्चान्तक गकार धरा (लकार) में स्थित होने पर तथा मस्तक बिन्दु से विभूषित होने पर वह 'ग्लं' एकाक्षर महामन्त्र होता है, जो समस्त कामनाओं के फलों को देने वाला है।।२७।।

पञ्चान्तक 'ग'। धरा (ल) विन्दुयुक्त होकर एकाक्षर मन्त्र 'ग्लं'।

विशेष—इस मन्त्र के वशिष्ठ ऋषि, गायत्री छन्द, हरिद्रागणपति देवता, गकार बीज तथा लकार शक्ति है। बीज से ही षड़ङ्गन्यास किया जाता है।

अथ ध्यानं—

हरिद्राभं चतुर्बाहुं हारिद्रवसनं विभुम् ।
पाशाङ्कुशधरं देवं मोदकं दन्तमेव च ॥२८॥

पुरश्चरणं चतुर्लक्षम्। हरिद्राचूर्णमिश्रितत्रिमधुरयुक्ततण्डुलैरयुतहोमः। अन्यदन्यत्र॥२९॥

इनका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—हल्दी के समान रंग वाले, चतुर्बाहु, हल्दी के रंग के वस्त्र पहने, पाश अंकुश मोदक तथा अपने दाँत को धारण किये हुये विभु देवता हरिद्रागणेश का मैं ध्यान करता हूँ।

इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचार पूजा, विशेष अर्घ्य-स्थापन, पीठपूजा, पुनः ध्यान तथा आवाहनादि करके पूजा करनी चाहिये।

इस मन्त्र का पुरश्चरण चार लाख जप से होता है। हरिद्रा के (हल्दी के) चूर्ण से त्रिमधुरयुक्त तण्डुल से दश हजार हवन किया जाता है। अन्य विषय अन्य ग्रन्थों में देखना चाहिये।।२८-२९।।

अथ मन्त्रान्तरम्—

इन्द्रबीजं समुद्धृत्य निजबीजं समुद्धरेत्।
चतुर्दशस्वरेणाढ्यं विन्दुभूषितमस्तकम्।
एकाक्षरीं महाविद्या कथिता पद्मयोनिना ।।३०।।

इन्द्रबीजं लकारः। निजबीजं गकारः। स तु उपरिस्थस्तथा च ग्लौं इत्येकाक्षरमन्त्रः। अस्य ध्यानानि महागणपतिवत्।।३१।।

अब मन्त्रान्तर कहते हैं। इन्द्रबीज (ल) को निजबीज (ग) तथा चतुर्दश स्वर (औ) से युक्त करके उसे बिन्दु से भूषित करने पर मन्त्रोद्धार होता है—ग्लौं। इस एकाक्षरी महाविद्या 'ग्लौं' को ब्रह्मा ने पद्म से उत्पन्न कहा है।

इन्द्रबीज ल। निजबीज ग। यह गकार 'ल' के ऊपर है। अत: 'ग्लौं' मन्त्र होता है। इनका ध्यान-पूजन आदि महागणपति के समान ही होता है।।३०-३१।।

अयं मन्त्रो बहुधा, यथा—

लक्ष्माद्यां वाथ कूर्चाद्यां मायाद्यां वा जपेत्सुधीः।
कामाद्यां वधुबीजाद्यां वागाद्यां प्रजपेत्सदा।
ॐकाराद्यां महाविद्यां निजबीजादिकां तथा ।।३२।।
द्व्यक्षरी च महाविद्या त्र्यक्षरी चास्त्रसंयुता।
चतुर्वर्णात्मिका विद्या वह्निजायावधिः प्रिये ।।३३।।

यह मन्त्र अनेक प्रकार का होता है; जैसे—लक्ष्मी को आगे रखकर (श्रीं ग्लौं), कूर्चाद्या (हुं ग्लौं) अथवा मायाद्या (ह्रीं ग्लौं) इस प्रकार से साधकगण को जप करना चाहिये। इससे कामाद्या (क्लीं ग्लौं) वधूबीजाद्या (स्त्रीं ग्लौं) अथवा वागाद्या (ऐं ग्लौं) अथवा ओंकाराद्या (ॐ ग्लौं) रूप से जप करना चाहिये।

भगवान् कहते हैं कि हे प्रिये! निजबीज से युक्त होकर यह विद्या तीन अक्षरों की हो जाती है (गं ग्लौं), अस्त्रयुक्त (गं ग्लौ फट्) तथा वह्निजाया से युक्त होकर चतुर्वर्णी कही गयी है; जैसे—गं ग्लौं स्वाहा।।३२-३३।।

अथोच्छिष्टगणेशः

तन्त्रान्तरे—

हस्तिपदं समुच्चार्य पिशाचीति ततः पदम्।

देवराजं सनेत्रञ्च कान्तमीशस्वरान्वितम्।
वह्निजायावधिर्मन्त्रस्ताराद्यः सर्वकामदः ।।३४।।

अब उच्छिष्टगणेश का मन्त्र कहा जाता है। तन्त्रान्तर में कहा गया हैं कि हस्तिपद का उच्चारण करने के पश्चात् 'पिशाचि' कहे। नेत्र (इ) से युक्त देवराज (ल) तथा ईशस्वर (ए) से युक्त कान्त अर्थात् 'क' के पश्चात् वाला अर्थात् (ख)। प्रणवादि अर्थात् आदि में प्रणव तथा वह्निजायान्त अर्थात् अन्त में 'स्वाहा' लगाये। यह मन्त्र सर्वकाम-प्रदायक होता है।।३४।।

तथा चायं मन्त्रः—ॐ हस्तिपिशाचि लिखे स्वाहा। प्रणवस्थाने गमिति मन्त्रान्तरम्। हस्तिपिशाचि लिखेऽग्निवनिता गं तदादित इति तत्त्वबोध-वचनात्।।३५।।

इस प्रकार मन्त्रोद्धार होता है—ॐ हस्तिपिशाचि लिखे स्वाहा। किसी के मत से प्रणव (ॐ) के स्थान पर 'गं' से मन्त्रारम्भ होता है; क्योंकि वचन है कि 'हस्तिपिशाचि लिखे' तथा वह्निवल्लभा (स्वाहा) और आदि में 'गं'। मन्त्रोद्धार हुआ—गं हस्तिपिशाचि लिखे स्वाहा।।३५।।

तथा च—

सारभूतमिदं मन्त्रं न देयं यस्य कस्यचित्।
गुह्यं सर्वागमेष्वेव हितबुद्ध्या प्रकाशितम्।।३६।।

और भी कहते हैं कि यह सारभूत मन्त्र जिस किसी को नहीं देना चाहिये। यह समस्त आगमों में गुप्त है। हितबुद्धि हेतु इसे प्रकाशित किया गया है।।३६।।

न तिथिर्न च नक्षत्रं नोपवासो विधीयते।
यथेष्टचेष्टया मन्त्रः सर्वकामफलप्रदः।।३७।।

इस मन्त्र की आराधना में तिथि, नक्षत्रादि का बन्धन-नियम नहीं है। उपवास का भी विधान नहीं है। इच्छानुरूप चेष्टा से यह मन्त्र सर्वकामफलदायक होता है।।३७।।

अथास्य पूजा—प्रातःकृत्यादिप्राणायामान्तं विधाय न्यसेत्। शिरसि सुधीर-ऋषये नमः। मुखे निवृद्गायत्रीछन्दसे नमः। हृदि उच्छिष्टगणपतये देवतायै नमः। ततः प्रणवेण कराङ्गन्यासौ।।३८।।

अब इनकी पूजापद्धति कहते हैं। प्रातःकृत्य से प्राणायाम-पर्यन्त करके ऋष्यादि न्यास करना चाहिये। मस्तक में ॐ सुधीरऋषये नमः, मुख में ॐ निवृद्गायत्रीछन्दसे नमः, हृदये ॐ उच्छिष्टगणपतये देवतायै नमः। तदनन्तर प्रणव से करांगन्यास करके ध्यान करना चाहिये।।३८।।

ध्यानम्—

रक्तमूर्त्तिं गणेशञ्च सर्वाभरणभूषितम्।
रक्तवस्त्रं त्रिनेत्रञ्च रक्तपद्मासने स्थितम्॥३९॥
चतुर्भुजं महाकायं द्विदन्तं सस्मिताननम्।
इष्टञ्च दक्षिणे हस्ते दन्तञ्च तदधः करे॥४०॥
पाशाङ्कुशौ च हस्ताभ्यां जटामण्डलवेष्टितम्।
ललाटचन्द्ररेखाढ्यां सर्वालङ्कारभूषितम्॥४१॥

इसका ध्यान इस प्रकार किया जाता है कि रक्त वर्ण, त्रिनेत्र, रक्त पद्मासन पर बैठे हुये, चार बाहु वाले, दो दाँतों वाले, मुस्कराते मुख वाले, दाहिने ऊर्ध्व हस्त में वरमुद्रा, दाहिने अध: हस्त में दाँत, बाँयें उपरि हाथ में पाश, बाँयें नीचे वाले हाथ में अंकुशधारी, जटाजूट से मण्डित मस्तक वाले, चन्द्ररेखा से शोभित ललाट, समस्त अलंकारों से भूषित, महाकालरूप उच्छिष्टगणेश का ध्यान करता हूँ।।३९-४१।।

एवं ध्यात्वार्घ्यं संस्थाप्याष्टदलपद्मं लिखित्वा पुनर्ध्यात्वा यथाशक्ति पूजयेत्। ततः पत्रेषु पूर्वादिक्रमेण ॐ वक्रतुण्डाय स्वाहा। एवं एकदन्ताय, लम्बोदराय, विकटाय, विघ्नेशाय, गजवक्त्राय, विनायकाय, गणपतये मध्ये हस्तिमुखाय। सर्वत्र स्वाहान्तता। पुनर्देवं त्रिः सम्पूज्य यथाशक्ति जप्त्वा जपं समर्प्य बलिरूपं नैवेद्यमानीय ॐ उच्छिष्टगणेशाय महाकालाय एष बलिर्नम इति दद्यात्। अथवा ॐ ह्रीं ह्रीं ह्रैं हुं फट् स्वाहेति बलिं दद्यात्। ततः क्षमस्वेति विसृजेत्। अस्य पुरश्चरणं षोडशसहस्रजपः॥४२॥

इस प्रकार ध्यान करके अर्घ्य-स्थापन करने के बाद अष्टदल कमल बनाकर पुन: ध्यान करके शक्ति के अनुसार पूजन करे। तदनन्तर पत्रों में पूर्वादि क्रम से चतुर्थ्यन्त नाम के पूर्व ॐ एवं अन्त में नम: लगाकर वक्रतुण्ड, एकदन्त, लम्बोदर, विकट, विघ्नेश, गजवक्त्र, विनायक, गणपति एवं मध्य में हस्तिमुख का पूजन करना चाहिये। सभी नाम के अन्त में स्वाहा लगाये। इसके अनन्तर देवता की पूजा तीन बार करके यथाशक्ति जपोपरान्त बलिरूप नैवेद्य लाकर देवता को इस मन्त्र से प्रदान करें—ॐ उच्छिष्टगणेशाय महाकालाय एष बलिर्नम:। अथवा—ॐ ह्रीं ह्रीं ह्रैं हुं फट् स्वाहा। तदनन्तर 'क्षमस्व' कह कर बलि का विसर्जन करे। इस मन्त्र का पुरश्चरण सोलह हजार जप से सम्पन्न होता है।।४२।।

तथा च—

कृष्णा चतुर्थीमारभ्य यावत् शुक्लचतुर्थिकाम्।
सहस्रं हि जपेन्नित्यं योषिन्नियमपूर्वकम्॥४३॥

स्त्री-सहवास के नियमपालन पूर्वक (अर्थात् स्त्रीसहवास का त्याग न करे, अपितु नियम-प्रतिपालनपूर्वक सहवास करे) कृष्ण चतुर्थी से प्रारम्भ करके शुक्ल चतुर्थी-पर्यन्त प्रतिदिन मन्त्र का एक हजार मन्त्र जप करना चाहिये।।४३।।

स्नापयेन्मधुना नित्यं नैवेद्यं गुड़पायसम्।
भुक्तोच्छिष्टो जपेन्नित्यं गणेशोऽहं सदा प्रियः ।।४४।।

इस मन्त्र के देवता (उच्छिष्टगणपति) को मधु द्वारा नित्य स्नान कराना चाहिये। गुड़ तथा पायस का नैवेद्य प्रदान करना चाहिये। भोजन करके जूठे मुँह (विना मुख धोये) प्रतिदिन जप करना चाहिये। यह भावना रहे कि मैं गणेश हूँ और सदा गणेश को प्रिय रहूँ।।४४।।

श्वेतार्केणाकृतिं कृत्वा रक्तचन्दनकेन वा।
अङ्गुष्ठमात्रं प्रतिष्ठाप्य द्विजाग्निगुरुसन्निधौ।
जप्त्वा षोडशसाहस्रं सिद्धमन्त्रो भवेद् ध्रुवम् ।।४५।।

सफेद मदार की लकड़ी से अथवा रक्तचन्दन काष्ठ से अंगूठे के बराबर मूर्त्ति बनाकर ब्राह्मण, अग्नि अथवा गुरु के पास प्रतिष्ठा करके उसके मन्त्र का सोलह हजार जप करके साधक सिद्धमन्त्र हो जाता है, यह निश्चित है।।४५।।

योषिदिति। योषिदुपगमने नियमपुरःसरमित्यर्थः, न तु त्यागः; अप्रसङ्गा-दनौचित्यादनाचान्त इति दर्शनाच्च।।४६।।

योषित् का अर्थ है कि स्त्रीसंग में सभी नियम का पालन करते हुये मन्त्र का जप करना चाहिये, स्त्रीसंग का त्याग नहीं करना चाहिये। यहाँ त्याग का प्रसंग नहीं है। साधारण पूजा-विधि का त्याग करके उचित आचार तथा आचमनादि का पालन किये बिना ही इनकी पूजाविधि है।।४६।।

यथा—

उच्छिष्टश्चाशुचिर्भूत्वा जपपूजनमाचरेत्।
अनुच्छिष्टे न सिध्येत तस्मादेवं समाचरेत् ।।४७।।

कहा भी है कि आचमन के विना अशुचि अवस्था में ही उनके मन्त्र का जप तथा पूजानुष्ठान करना चाहिये। अनुच्छिष्ट (बिना जूठा मुख किये) अवस्था में इनका जपादि कभी सिद्ध नहीं होता। अतः उच्छिष्ट तथा अशुद्ध अवस्था में इनके जपादि का अनुष्ठान करना चाहिये।।४७।।

अथास्य प्रयोगः—

राजद्वारे तथारण्ये सभायां गोत्रसंसदि।
विवादे व्यवहारे च संग्रामे शत्रुसङ्कटे ॥४८॥
नौकायां विपिने वापि द्यूते च व्यसने तथा।
ग्रामे दाहे चौरविद्धे सिंहव्याघ्रादिसङ्कटे ॥४९॥
स्मरणादेव देवस्य सर्वं वै विद्रुतं भवेत्।
तत्सर्वं नश्यति क्षिप्रं भास्करेण तमो यथा।
अपमार्गसमिद्धोमे सौभाग्यं लभते ध्रुवम् ॥५०॥

अब इस मन्त्रप्रयोग के स्थान बताते हैं। राजद्वार में, महान् वन में, सभा में, सजातियों की सभा में, विवाद में, व्यवहार में, संग्राम में, शत्रुसंकट में, नौका, वन तथा द्यूत में, व्यसन में, ग्रामदाह में, चोरों के आघात में, सिंह-व्याघ्रादि के संकट में इन देवदेव के स्मरण से सब संकट उसी प्रकार संकट नष्ट होता है, जैसे कि सूर्य से अन्धकार नष्ट हो जाता है। अपामार्ग की समिधा से होम करने से निश्चित ही सौभाग्य प्राप्त होता है।।४८-५०।।

तथा—

वानरास्थिसमुद्भूतं कीलकं मन्त्रमन्त्रितम्।
निखनेन्मन्दिरे यस्य भवेदुच्चाटनं परम् ॥५१॥
अथ वीथ्यां खनेद्यस्य क्रयविक्रयतां हरेत्।
निखनेच्छौण्डिकागारे तन्मद्यं विकृतो भवेत् ॥५२॥

और भी कहा गया है कि इस मन्त्र से वानर की अस्थि की कील को एक सौ आठ बार अभिमन्त्रित करके जिसके घर में गाड़ दिया जाता है, उसका उच्चाटन हो जाता है। जिसकी दुकान में इसकी कील गाड़ दी जाती है, उसका क्रय-विक्रय नष्ट हो जाता है। जहाँ मदिरा बनती हो, वहाँ यदि इस कील को गाड़ दिया जाय तो वहाँ की मदिरा विकृत हो जाती है।।५१-५२।।

वेश्यागृहे तु निखनेद् ग्राहकं लभते न सा।
कन्यागृहे तु निखनेन्न विवाहो भवेद् ध्रुवम् ॥५३॥

वेश्या के घर में इस कील को गाड़ देने से उसे ग्राहक नहीं मिलते एवं कन्या के गृह में गाड़ देने से निश्चित रूप से उसका विवाह नहीं होता।।५३।।

मानुषास्थिसमुद्भूतं कीलकञ्चाभिमन्त्रितम्।
निखनेन्मन्दिरे यस्य मरणं तस्य निश्चितम्।
उद्धृते तु भवेत्स्वास्थ्यमिति सर्वस्य सम्मतम् ॥५४॥

मनुष्य के अस्थि की कील बनाकर उसे इस मन्त्र से अभिमन्त्रित करके जिसके भी घर में गाड़ दिया जाता है, उसका निश्चित रूप से मरण होता है। उसके मरण के पूर्व यदि उस कील को वहाँ से निकाल दिया जाये तो वह पुनः स्वस्थ हो जाता है, यह सबका मत है।।५४।।

यस्या नाम्ना जपेन्मन्त्रं सहस्त्रं स वशो भवेत्।
पञ्चसहस्त्रहोमेन उद्वहेत वशं स्त्रियम्।।५५।।

जिसके नाम से इस मन्त्र का एक हजार जप किया जाता है, वह वशीभूत हो जाता है। पाँच हजार होम करने से उत्तम कन्या से विवाह होता है।।५५।।

सहस्त्रं दशहोमेन राजामात्यो वशो भवेत्।
लक्षजापेन राजैव द्विलक्षे राजपंक्तयः।
दशलक्षेण तद्राष्ट्रं वश्यं तस्य च सर्वदा।।५६।।

दश हजार होम करने से मन्त्री वशीभूत होता है। मन्त्र के एक लाख जप से राजा तथा दो लाख जप से राजाओं का समूह वशीभूत होता है। इसके दश लाख जप से समस्त राष्ट्र सदा वशीभूत रहता है।।५६।।

अणिमादिमहासिद्धिः कोटिजापान्न संशयः।
खेचरत्वं भवेन्नित्यं सर्वज्ञत्वञ्च जायते।।५७।।

दस मन्त्र के एक करोड़ जप से निस्सन्देह रूप से अणिमादि महासिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। इससे आकाशगमन तथा सर्वज्ञता भी प्राप्त होती है।।५७।।

मन्त्रं लिखित्वा शिरसि कण्ठे वा धारयेद्यदि।
सौभाग्यं सर्वरक्षा च भवेत्तत्र सुनिश्चितम्।।५८।।

इत्युच्छिष्टगणेशप्रयोगः

इस मन्त्र को भोजपत्र पर लिखकर यदि मस्तक अथवा कण्ठ में धारण किया जाय तो निश्चित रूप से सौभाग्य मिलता है तथा समस्त विपत्तियों से रक्षा होती है।।५८।।

●

अथ सूर्यः

'ॐ घृणि सूर्य आदित्य' अष्टाक्षरोऽयम्।।१।।

अब सूर्य का प्रयोग कहते हैं। 'ॐ घृणि सूर्य आदित्य'—यह सूर्य का अष्टाक्षर मन्त्र है।।१।।

यथा निबन्धे—

तारो घृणिर्भृगुः पश्चाद् वामकर्णविभूषितः ।
वह्न्यासनो मरुच्छेषः सनेत्रोऽद्रिस्त्यपश्चिमः ।
अष्टाक्षरो मनुः प्रोक्तो भानोरभिमतप्रदः ॥२॥

जैसे शारदातिलक में कहा भी है—तार (ॐ), घृणि, तदनन्तर वामकर्ण (उ) से विभूषित भृगु (स), वह्न्यासन (वह्नि का आसन), मरुत् (य), तदनन्तर शेष (आ), तदनन्तर सनेत्र (इ), अद्रि (द), त्यपश्चिम (अन्त में 'त्य')। इससे मन्त्रोद्धार होता है— ॐ घृणि सूर्य आदित्य। यह अष्टाक्षर मन्त्र वेदादि में (नारायणीय उपनिषत् में) अभिमत फल को देने वाला कहा गया है।।२।।

घृणिरिति निर्विसर्गस्वरूपम्। भृगुर्दन्त्यसकारः। मरुत् यकारः। शेष आकारः। अद्रिर्दकारः। त्यपश्चिम त्यस्वरूपः पश्चिमस्थ इत्यर्थः॥३॥

घृणि विसर्गरहित वर्णद्वय स्वरूप है। भृगु अर्थात् दन्त्य सकार। मरुत् अर्थात् यकार। शेष अर्थात् आकार। अद्रि अर्थात् दकार। त्य पश्चिमत्य अर्थात् परवर्त्ती अर्थात् अन्त में।।३।।

विशेष—इस मन्त्र के देवनाग ऋषि हैं (प्रपञ्चसार तथा तन्त्रसार में देवभाग ऋषि कहा है), गायत्री छन्द है, दृष्ट-अदृष्ट फल के दाता आदित्य देवता हैं एवं 'रं' बीज है।

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादिप्राणायामान्तं विधाय पीठन्यासं कुर्यात्। हृदयस्य पूर्वादिदिक्षु मध्ये च प्रभूतं विमलं सारं समाराध्यं परमसुखं विन्यस्य आधारशक्त्यादि अं सूर्यमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः इत्यन्तं न्यसेत्। ततः केशरेषु मध्ये च रां दीप्तायै नमः। एवं रीं सूक्ष्मायै, रुं जयायै, रें भद्रायै, रैं विभूत्यै, रों विमलायै, रौं अमोघायै, रं विद्युतायै, रः सर्वतोमुख्यै इति पीठशक्तिर्न्यस्य तदुपरि ॐ ब्रह्मविष्णुशिवात्मकाय सौराय योगपीठाय नमः इति पीठमनुं न्यसेत्॥४॥

अब इनकी पूजापद्धति कहते हैं। प्रातःकृत्य से प्राणायाम तक के कृत्य करके पीठन्यास करना चाहये। हृदय के आग्नेयादि चार कोण में तथा मध्य में क्रमशः ॐ प्रभूताय नमः, ॐ विमलाय नमः, ॐ सराय नमः, ॐ समाराध्याय नमः, ॐ परमसुखाय नमः से न्यास करके आधारशक्त्यादि के न्यास से लेकर 'अं सूर्यमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः'-पर्यन्त न्यास करने के उपरान्त केशरसमूह तथा मध्य में 'रां दीप्तायै नमः, रीं सूक्ष्मायै नमः, रुं जयायै नमः, रें भद्रायै नमः, रैं विभूत्यै नमः, रों विमलायै नमः, रौं अमोघायै नमः, रं विद्युतायै नमः, रः सर्वतोमुख्यै नमः से नव

पीठशक्ति का न्यास करके उसके उपरि भाग में 'ॐ ब्रह्मविष्णुशिवात्मकाय सौराय योगपीठाय नमः' मन्त्र से पीठमन्त्र का न्यास करना चाहिये।।४।।

तत ऋष्यादिन्यासः। देवभागऋषिर्गायत्रीछन्दः आदित्यो देवता। ततः कराङ्गन्यासौ। सत्याय तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ब्रह्मणे तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा तर्जनीभ्यां स्वाहा। विष्णवे मध्यमाभ्यां वषट्। रुद्राय अनामिकाभ्यां हुं। अग्नये कनिष्ठाभ्यां वौषट्। सर्वाय करतलपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु॥५॥

तदनन्तर 'अस्य श्रीसूर्यमन्त्रस्य देवभाग ऋषिर्गायत्रीछन्दः आदित्यो देवता रं बीजं ॐ शक्तिः ममाभीष्टसिद्ध्यर्थं सूर्यपूजने विनियोगः कहकर विनियोग करना चाहिये। इसके पश्चात् इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करना चाहिये—मुख में ॐ गायत्रीछन्दसे नमः, हृदय में ॐ आदित्याय देवतायै नमः, गुह्य में ॐ रं बीजाय नमः, पादद्वय में ॐ ॐ शक्तये नमः।

तदनन्तर इस प्रकार करांग न्यास करना चाहिये—ॐ सत्याय तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा अंगुष्ठाभ्यां नमः, ॐ ब्रह्मणे तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ विष्णवे तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ रुद्राय तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा अनामिकाभ्यां हुं। ॐ अग्नये तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्, ॐ सर्वाय तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा करतलपृष्ठाभ्यां अस्त्राय फट्। इसी प्रकार करन्यास के पश्चात् हृदय-प्रभृति का भी अंगन्यास करे।।५।।

विशेष—इस अंगन्यास के उपरान्त अष्टांग न्यास भी करना चाहिये, यह राघवभट्ट का मत है। जैसे—हृदय में ॐ ॐ नमः, मस्तक में ॐ घृं नमः, शिखा में ॐ णिं नमः, दोनों बाहुओं में ॐ सू नमः, नेत्रत्रय में ॐ र्य नमः, दोनों करतलों में ॐ आ नमः, उदर में ॐ दि नमः, पृष्ठ में ॐ त्य नमः।

ततो मूर्त्तिन्यासः। शिरसि—ॐ आदित्याय नमः। मुखे—ॐ रवये नमः। हृदि—ओं भानवे नमः। गुह्ये—इं भास्कराय नमः। चरणयोः—अं सूर्याय नमः।

ततो मन्त्रन्यासः। शिरसि—ॐ नमः। मुखे—घृ नमः। कण्ठे—णि नमः। हृदि—सू नमः। कुक्षौ—र्य नमः। नाभौ—आ नमः। लिङ्गे—दि नमः। पादयोः—त्य नमः॥६॥

ऊपर मूलोक्त विधि से मूर्त्तिन्यास तथा मन्त्रन्यास करना चाहिये।।६।।

ततो ध्यानम्—

रक्ताब्जयुग्माभयदानहस्तं केयूरहाराङ्गदकुण्डलाढ्यम्।
माणिक्यमौलिं दिननाथमीडे बन्धूककान्तिं विलसत्त्रिनेत्रम्॥७॥

वाम तथा दक्षिण के ऊर्ध्व हस्तों में रक्त पद्म है। बाँयें अधःस्थित हस्त में अभय मुद्रा एवं दक्षिण के अधःहस्त में वरमुद्रा है। केयूर, हार, अंगद तथा कुण्डल से सुशोभित, माणिक्य से मढ़े मुकुट को पहने हुये, बन्धूकपुष्प के समान कान्ति वाले उज्ज्वल त्रिनेत्रधारी दिननाथ की मैं स्तुति करता हूँ।।७।।

एवं ध्यात्वा मानसैरभ्यर्च्यार्घ्यं संस्थाप्य गुरुपंक्तिं सम्पूज्य पीठपूजां कुर्यात्। ततः ॐ खं खखोल्काय नमः इति मन्त्रेण मूर्त्तिं कल्पयेत्। यथा—

तारादि खं खखोल्काय मनुना मूर्त्तिकल्पना।

ततः पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणान्यर्चयेत्। केशरेषु अग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च अङ्गन्यासमन्त्रैरभ्यर्च्य दिक्पत्रेषु पूर्वादितः ॐ आदित्याय नमः। एवं एं रवये नमः, उं भानवे नमः, इं भास्कराय नमः। विदिक्पत्रेषु उं उषायै नमः, पं प्रज्ञायै नमः, पं प्रभायै नमः, सं सन्ध्यायै नमः। पत्राग्रेषु ब्राह्म्याद्याः सम्पूज्य पुरतो अरुणं सम्पूज्य तद्बाह्ये पूर्वादितः चन्द्राय, मङ्गलाय, बुधाय, बृहस्पतये, शुक्राय, शनैश्चराय, राहवे, केतवे। ततः इन्द्रादीन् वज्रादींश्च सम्पूज्य धूपादि-विसर्जनान्तं कर्म समापयेत्॥८॥

इस प्रकार से ध्यान करके अब्ज तथा विल्वमुद्रा प्रदर्शित करके मानसोपचारेण पूजन करके ताम्रादि पात्र में विशेषार्घ्य स्थापित करके गुरुपंक्तिगण की पूजा करने के पश्चात् पीठपूजा करनी चाहिये। तत्पश्चात् 'ॐ खं खखोल्काय नमः' मन्त्र से मूर्त्ति की कल्पना करनी चाहिये। तदनन्तर पुनः ध्यान करके आवाहन से लेकर पुष्पाञ्जलि-निवेदन तक की विधि (यथाक्रमेण) सम्पन्न करके कर्णिका में आवरणगण की पूजा करनी चाहिये। कर्णिका के आग्नेयादि कोणों में, मध्य तथा दिक्समूह में (अर्थात् सम्मुख) अंगन्यास मन्त्रसमूह से अंगदेवताओं की अर्चना करके दिक्पत्रसमूह में पूर्वादि क्रम से ॐ आदित्याय नमः, एं रवये नमः, उं भानवे नमः, इं भास्कराय नमः, अं सूर्याय नमः मन्त्रों से पाँच सूर्यमूर्त्ति का पूजन करके कोणपत्रसमूह में उं उषायै नमः, पं प्रज्ञायै नमः, पं प्रभायै नमः, सं सन्ध्यायै नमः मन्त्र से उषादि सूर्यशक्तियों की पूजा करके, पत्र के अग्रसमूह में ब्राह्मी आदि अष्टमातृका का पूजन करके सामने अरुण की

पूजा सम्पन्न करने के पश्चात् पत्र के बाहर पूर्वादि दिक् में क्रम से ॐ चन्द्राय नमः, ॐ बुधाय नमः, ॐ बृहस्पतये नमः, ॐ शुक्राय नमः से तथा आग्नेयादि कोणों में क्रमशः ॐ मंगलाय नमः, ॐ शनैश्चराय नमः, ॐ राहवे नमः, ॐ केतवे नमः से पूजन करना चाहिये। तत्पश्चात् दल के बाहरी भाग में इन्द्रादि लोकपालों का और उसके भी बाहरी भाग में वज्रादि अस्त्रों का पूजन करने के पश्चात् धूपदान से लेकर विसर्जन-पर्यन्त कार्य सम्पन्न करना चाहिये।।८।।

विशेष—षड़ग देवता पूजनोपरान्त केशरसमूह में पूर्वोक्त अष्टांग की पूजा तथा दल के बाहरी भाग में चन्द्रादि ग्रह का पूजन उनके अपने-अपने बीजमन्त्रों से करना चाहिये। इसमें पूर्वादि में चन्द्र, बुध, गुरु तथा शुक्र की तथा आग्नेयादि कोणों में मंगल, शनि, राहु तथा केतु का पूजन करना चाहिये। दल के बाहरी भाग में 'ॐ सूर्यपारिषद्भ्यो नमः' मन्त्र से सूर्य के पारिषद गण का पूजन करना चाहिये।

अस्य पुरश्चरणमष्टलक्षजपः। क्षीराक्ताभिः क्षीरवृक्षसमिद्भिरष्टसहस्रहोमो वाचनिकः।।९।।

इस मन्त्र का पुरश्चरण आठ लाख जप है। क्षीर वृक्ष की समिधा द्वारा आठ हजार होम करे। यद्यपि अस्सी हजार होम करना चाहिये 'तत् सहस्त्रं प्रजूहुयात्' वचनानुसार आठ हजार होम ही कर्त्तव्य है।।९।।

ह्रां ह्रीं सः। अयं त्र्यक्षरः। अस्य प्रथमबीजं द्वितीयस्वरान्तम्। द्वितीयं चतुर्थः स्वरान्तम्। सर्वं पूर्ववत्। मन्त्रन्यासस्तु आधारादिपादपर्यन्तं ह्रां नमः। कण्ठादाधारपर्यन्तं ह्रीं नमः। मूर्द्धादिकण्ठपर्यन्तं सः नमः। कराङ्गन्यासौ षड्दीर्घभाजा मायाबीजेन।।१०।।

सूर्य का अन्य मन्त्र कहते हैं। 'ह्रां ह्रीं सः' यह त्र्यक्षर सूर्यमन्त्र है। प्रथम बीज द्वितीय स्वरान्त, द्वितीय बीज चतुर्थ स्वरान्त होता है। अन्यान्य सभी कर्म पूर्ववत् है (प्रथम मन्त्र की विधि ही इसकी विधि होती है); किन्तु मूलाधार से पादाग्र-पर्यन्त स्थान में ह्रां नमः, कण्ठ से मूलाधार-पर्यन्त स्थान में ह्रीं नमः, मस्तक से कण्ठ तक 'सः नमः' षड्-दीर्घयुक्त मायाबीज (ह्रीं) से कराङ्गन्यास करना चाहिये।।१०।।

विशेष—इस मन्त्र के ऋषि ब्रह्मा, छन्द गायत्री, तीक्ष्ण किरणों वाले सूर्य देवता, 'ह्रां' बीज एवं 'ह्रीं' बीज शक्ति है।

ततो ध्यानम्—

रक्ताम्बुजासनमशेषगुणैकसिन्धुं
भानुं समस्तजगतामधिपं भजामि।

पद्मद्वयाभयवरान्दधतं करााब्जै-
र्माणिक्यमौलिमरुणाङ्गरुचिं त्रिनेत्रम् ।।११।।

तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करना चाहिये—रक्तकमल पर बैठे हुये, अशेष गुणों के एकमात्र सागर, समस्त जगत् के अधिपति, हाथों में दो कमल, वरमुद्रा तथा अभय मुद्राधारी, माणिक्य में मण्डित किरीटधारी, जिनके अंग रक्त वर्ण के हैं, ऐसे तीन नेत्रों वाले भानु का मैं भजन करता हूँ।।११।।

सर्वमन्यत् पूर्ववत्। अङ्गपूजा तु अङ्गन्यासवत्। अस्य पुरश्चरणं द्वादशलक्षजपः। आज्येन मधुरासिक्ततिलैर्वा दशांशहोम।।१२।।

ध्यान के पश्चात् अन्य सब क्रिया पूर्ववत् करनी चाहिये। अंगपूजा भी अंगन्यास की तरह ही होती है। इस मन्त्र का पुरश्चरण बारह लाख जप से होता है। घी से अथवा शहद में लिपटे तिलों से दशांश हवन करना चाहिये।।१२।।

●

अथ मार्त्तण्डभैरवः

हकाररेफयकारचतुर्दशस्वरवामकर्णविन्दुभिरेकाक्षरः। यथा—आकाश-मग्निपवनसत्यान्तार्घीशविन्दुमदिति। सत्यान्त औकारः, अर्घीशः दीर्घोकारः इत्येकाक्षरः। स च विम्बबीजेन पुटितं कृत्वा जाप्यः। बिम्बबीजन्तु-टान्तं दहनं नेत्रेन्दुसहितं तदुदीरितम्। नेत्रश्चाविशेषादत्र दक्षिणम्। तेन ठ्रिं। तथा च ठ्रिं ह् र् य् ओ उं ठ्रिं इति त्र्यक्षरः।।१३।।

अब मार्त्तण्डभैरव का मन्त्र कहा जाता है। इ, रेफ, य, ओ, वाम कर्ण (उ) तथा बिन्दु मिलाकर मार्त्तण्डभैरव का बीज होता है। यह एकाक्षर बीज है। शारदातिलक के अनुसार आकाश (ह) अग्नि (र) पवन (य) सत्यान्त (ओ) अर्घीश (ऊ) तथा विन्दु; इस प्रकार मन्त्रोद्धार होता हैं—ह्र्यूँ।

सत्यान्त ओकार। अर्घीश अर्थात् दीर्घ ऊ। इससे एकाक्षर बीज होता है। विम्बबीज से पुटित करके जप करना चाहिये। बिम्बवीज है—टान्त (उ) दहन (र) नेत्र (इ) तथा इन्दु (अनुस्वार)। यहाँ कोई विशेष निर्देश न होने से नेत्र से दक्षिण नेत्र का तात्पर्य है। अत एव बीजोद्धार होता है—ठ्रिं। यह बिम्बबीज है। अतः मार्त्तण्डभैरव का मन्त्र है—ठ्रिं ह्र्यूँ ठ्रिं। यह त्र्यक्षर मन्त्र है।।१३।।

विशेष—इस स्वरद्वययुक्त मन्त्र का उच्चारण विज्ञ सद्गुरु के उपदेश से ही करना चाहिये। इसके ऋषि हैं—ब्रह्मा, निवृत् छन्द है, मार्त्तण्डभैरव देवता हैं, हं बीज है एवं

विन्दु शक्ति है। तन्त्रसार में पूर्ववत् ऋष्यादि न्यास कहा गया है। प्रातःकृत्य से लगाकर पीठन्यास तथा ऋष्यादि न्यास तक करके मूर्त्तिन्यास करना चाहिये। जैसे—

मध्यमाद्वय में—ॐ ट्रं सूर्याय नमः।

तर्जनीद्वय में—ॐ ट्रिं भास्कराय नमः।

अंगुष्ठद्वय में—ॐ ट्रुं भावने नमः।

अनामिकाद्वय में—ॐ ट्रें रवये नमः।

कनिष्ठाद्वय में—ॐ ट्रों दिवाकराय नमः।

मस्तक में—ॐ ट्रं सूर्याय नमः।

मुख में—ॐ ट्रिं भास्कराय नमः।

हृदय में—ॐ ट्रुं भानवे नमः।

गुह्य में—ॐ ट्रें रवये नमः।

पाददेश में—ॐ ट्रों दिवाकराय नमः।

इसके पश्चात् इस प्रकार करांग न्यास करना चाहिये—

ॐ ट्रां अङ्गुष्ठाभ्यां स्वाहा।

ॐ ट्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा।

ॐ ट्रूं मध्यमाभ्यां वषट्।

ॐ ट्रैं अनामिकाभ्यां हुं।

ॐ ट्रौं कनिष्ठाभ्यां अस्त्रायफट्।

ॐ ट्रः नेत्रत्रयाय वौषट्।

इसी प्रकार हृदयादि न्यास करना चाहिये—

ॐ ट्रां हृदयाय नमः।

ॐ ट्रीं शिरसे स्वाहा।

ॐ ट्रूं शिखायै वषट्।

ॐ ट्रैं कवचाय हुं।

ॐ ट्रौं अस्त्राय फट्।

ॐ ट्रः नेत्रत्रयाय वौषट्।

तदनन्तर मूल बीज द्वारा व्यापक न्यास करके ध्यान करना चाहिये।

अस्य ध्यानम्—

हेमाम्भोजप्रवालप्रतिमनिजरुचिः चारुषट्वाङ्गपद्मौ,
चक्रं शक्तिं सपाशं शृणिमतिरुचिरामक्षमालां कपालम्।

हस्ताम्भोजैर्दधानं त्रिनयनविलसद्वेदवक्त्राभिरामं
मार्तण्डं वल्लभार्द्धं मणिमयमुकुटं हारदीप्तं भजामः ।।१४।।

स्वर्ण, कमल तथा प्रवाल के समान रक्तवर्ण, आठ हाथों में से दक्षिण तथा वाम ऊर्ध्व दो हाथों में सुन्दर खट्वांग (कुल्हाडी) तथा कमल, दक्षिण तथा वाम के अधो अधो भाग के दो-दो हाथों में चक्र, शक्ति, पाश, अंकुश, अति मनोहर अक्षमाला तथा कपालधारी, वेदवक्त्र (चतुरानन) प्रति मुख में तीन नेत्र, मणिजटित मुकट वाले, हार से दीप्त मनोहर मार्त्तण्ड का मैं भजन करता हूँ।।१४।।

विशेष—इस प्रकार से ध्यान के उपरान्त मानसोपचार पूजनोपरान्त विशेषार्घ्य स्थापन करने के उपरान्त पूर्वोक्त क्रमानुसार पीठमन्त्र-पर्यन्त पूजन करके दीप्तादि संयुक्त सौर पीठ में पूर्वादि दिशा की कर्णिका में (क्रमानुसार) ॐ उं उषायै नमः, ॐ प्रं प्रज्ञायै नमः, ॐ प्रं प्रभायै नमः, ॐ सं सन्ध्यायै नमः मन्त्रों से इनकी पूजा करके विम्बबीज-पुटित नमः से अन्त होने वाले मूल मन्त्र से मूर्त्ति की कल्पना करे। पुनः ध्यान करके उस मूर्त्ति में देवता का आवाहन करके पञ्चपुष्पाञ्जलि-दानपर्यन्त कृत्य करके आवरणदेवता का पूजन करना चाहिये। पूर्व से (पूर्व दिशा से) प्रारम्भ करके सूर्य, भास्कर, भानु तथा रवि की पूजा सम्पन्न करके दिशा के कोणों में अर्थात् पूर्वादि दिग्गत केशर में अग्नि, नैर्ऋत, वायु तथा ईशान कोण में ॐ ह्रां हृदयाय नमः इत्यादि मन्त्र से पाँच आवरण देवों का पूजन करके अन्त में ईशान कोण में 'ॐ ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्' द्वारा नेत्र का पूजन करना चाहिये। तदनन्तर पूर्वकथित विधानानुसार बाहर चन्द्रादि अष्टग्रह का पूजन करके दल के बाहरी भाग में वज्रादि अस्त्रों के साथ लोकपालों का पूजन करके अर्घ्य प्रदान करने के उपरान्त धूपदान से लेकर विसर्जन-पर्यन्त समस्त कृत्यों का सम्पादन करना चाहिये।

अस्य पुरश्चरणं लक्षत्रयजपः। त्रिमधुराक्तकमलैर्दशांशहोमः।।१५।।

तीन लाख (विम्बबीजपुटित) मन्त्रजप से इसका पुरश्चरण सम्पन्न होता है। तत्पश्चात् कमल को त्रिमधुर से लिप्त करके तीस हजार हवन करना चाहिये।।१५।।

अथ अजपामन्त्रः। स च हंस इति द्व्यक्षरः।।१६।।

अब अजपा मन्त्र कहा जाता है। वह 'हंस' रूप से दो अक्षरों का होता है।।१६।।

यथा निबन्धे—

वियदर्धेन्दुललितं तदादिः सर्गसंयुतः।
अजपाख्यो मनुः प्रोक्तो द्व्यक्षरः सुरपादपः ।।१७।। इति।

निबन्ध में कहा गया है कि वियत् (ह) द्वारा युक्त (ललित) हो। उसके आदि में हकारादि अर्थात् हकार से पहले वाला वर्ण 'स' सर्ग (अर्थात् विसर्ग) से युक्त हो। इस प्रकार मन्त्रोद्धार होता है—हंसः। इसे अजपानामक दो अक्षरों वाला देवताओं का वृक्ष कहा गया है।।१७।।

अजपा इति रूढसंज्ञा, न तु तस्य जपाभावः। भानुलक्षं जपेन्मन्त्रमित्यस्य पुरश्चरणं नियमात्॥१८॥

'अजपा' यह रूढ़ संज्ञा है। इसका 'जप नहीं करना चाहिये' यह अर्थ नहीं करना चाहिये (अर्थात् जप करना चाहिये)। भानुलक्ष (अर्थात् बारह लाख) जप करने से इसका पुरश्चरण सम्पन्न होता है।।१८।।

अस्य ध्यानम्—

उद्यद्भानुस्फुरिततड़िदाकारमर्द्धाम्बिकेशं
पाशाभीतिवरदपरशुं सन्दधानं कराब्जैः।
दिव्याकल्पैर्नवमणिमयैः शोभितं विश्वमूलं
सौम्याग्नेयं वपुरवतु नश्चन्द्रचूड़ं त्रिनेत्रम्॥१९॥

इनका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—उदीयमान सूर्य तथा चमक रही तड़ित् के समान उज्ज्वल रक्त वर्ण देहधारी, जो आधे अम्बिका तथा आधे शिव हैं, बाँयें उपरि हाथ में पाश, नीचे के बाँयें हाथ में अभय, दाहिने नीचे वाले हाथ में वर तथा उपरि दाहिने हाथ में परशु है, ऐसे नूतन मणिमय दिव्य भूषणों से शोभित विश्व के मूल, चन्द्रचूड़, त्रिनेत्र, गिरिजापति, सोम तथा अग्निमय शरीर वाले हम सबकी रक्षा करें।।१९।।

विशेष—'हंसः' मन्त्र के ब्रह्मा ऋषि, गायत्री छन्द, गिरिजापति देवता, हं बीज तथा सः शक्ति है। बिन्दु तथा छः दीर्घ स्वरयुक्त 'हंस' वर्ण से करांग न्यास करना चाहिये। प्रातःकृत्य से पीठमन्त्र न्यास तक का सभी विधान पूर्ण करके ऋष्यादि न्यास करना चाहिये। जैसे—अस्य अजपामन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिर्गायत्रीछन्दो गिरिजापतिर्देवता हं बीजं सः शक्तिर्ममाभीष्टसिध्यर्थें विनियोगः। मस्तक पर ॐ ब्रह्मणे ऋषये नमः, मुख में ॐ गायत्रीछन्दसे नमः, हृदय में ॐ गिरिजापतये देवतायै नमः, गुह्य में ॐ हं बीजाय नमः, पादद्वय में ॐ सः शक्तये नमः।

तत्पश्चात् षड्दीर्घ-युक्त 'हंस' वर्ण द्वारा कराङ्गन्यास करके मूल मन्त्र से व्यापक न्यास करने के उपरान्त श्लोक १९ में अंकित ध्यान करना चाहिये।

ध्यान करने के पश्चात् मानस उपचार से पूजा करके विशेषार्घ्य-स्थापन करके

पूर्वोक्त रीति से पीठपूजा करके पुन: ध्यान करके मूल मन्त्र द्वारा मूर्त्ति में आवाहन से लेकर पुष्पाञ्जलि-पर्यन्त विधान सम्पन्न करके आवरण देवता का पूजन करना आवश्यक है। जैसे अग्नि, नैर्ऋत्य, वायु तथा ईशान कोणों में, मध्य में, सम्मुख दलों में (पूर्वादि दिक् क्रम से) ॐ ह्सां हृदयाय नम: इत्यादि से छ: अंगदेवताओं का पूजन करने के उपरान्त पूर्व दिग्दल में ॐ ऋताय नम:, दक्षिण दल में ॐ वसवे नम:, पश्चिम दल में ॐ नराय नम:, उत्तर दल में ॐ वराय नम:, आग्नेय दल में ॐ ऋतजायै नम:, नैर्ऋत्य दल में ॐ गोजायै नम:, वायुकोण दल में ॐ अब्जायै नम:, ईशान दल में ॐ अद्रिजायै नम: मन्त्र से पूजन करके दल के बाहर इन्द्रादि लोकपाल तथा वज्रादि अस्त्रों का पूजन करके अर्घ्यदान करने के उपरान्त धूपदान से लेकर विसर्जन-पर्यन्त सभी विधान सम्पन्न करना चाहिये।

अस्य पुरश्चरणं द्वादशलक्षजपः। घृतयुक्तपायसेन दशांशहोमः॥२०॥

इसका पुरश्चरण बारह लाख जप से सम्पन्न होता है। घृतयुक्त पायस से जप का दशांश होम करना चाहिये।।२०।।

●

अथ चन्द्रमन्त्र:

आं सोमाय नमः। इं सोमाय नमः षड़क्षरः। अथ इन्द्रः। इं इन्द्राय नमः। अस्य ब्रह्मा ऋषिः पंक्तिश्छन्दः इं बीजं आय शक्तिः। ततो बीजेन कराङ्गन्यासौ। यथा—इं अगुष्ठाभ्यां नमः, इं तर्जनीभ्यां स्वाहा इत्यादिना। एवं हृदयादिषु॥२१॥

अब चन्द्रमन्त्र कहा जाता है। आं सोमाय नम: तथा इं सोमाय नम:—ये दोनों चन्द्रमा के षडक्षर मन्त्र हैं।

(यहाँ लेखक ने इन्द्र का भी मन्त्र आगे लिखा है; परन्तु उसका विस्तार से वर्णन नहीं है।) अब इन्द्रमन्त्र कहते हैं; वह है—इं इन्द्राय नम:। इसके ऋषि ब्रह्मा, पंक्ति छन्द, इन्द्र देवता, 'इं' बीज तथा 'आय' शक्ति है। बीजमन्त्र से करांग न्यास करना चाहिये। जैसे इं अंगुष्ठाभ्यां नम:, इं तर्जनीभ्यां स्वाहा इत्यादि। इसी प्रकार हृदयादि न्यास भी करना चाहिये।।२१।।

विशेष—चन्द्रमन्त्र के भृगु ऋषि, पंक्ति छन्द, सोम देवता, आं बीज एवं आय शक्ति है। विशेष विवरणार्थ चन्द्रमन्त्र के पुरश्चरणार्थ शारदातिलक के चतुर्दश पटल का अवलोकन करना चाहिये। यहाँ ग्रन्थकार ने नहीं लिखा है कि आगे क्या करना है।

इन्द्रध्यानम्

अथ ध्यानम्—

पीतवर्णं सहस्राक्षं वज्रपद्मकरं विभुम्।
सर्वालङ्कारसंयुक्तं नौमीन्द्रं दिक्पतीश्वरम्॥२२॥

एवं ध्यात्वावाह्य सम्पूज्य षड़ङ्गैरभ्यर्च्य पूर्वादिपत्रेषु कं कार्त्तिकेयाय नमः। एवं रं अग्नये, यं यमाय, क्षं निर्ऋतये, वं वरुणाय, यं वायवे, सं सोमाय, हं इशानाय। ततो वज्रादीन् पूजयेत्। अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः। साज्यतिलैरयुतहोमः॥२३॥

इन्द्र का ध्यान इस प्रकार किया जाता है—पीत वर्ण, सहस्रलोचन, हाथ में वज्र तथा पद्म, सभी अलंकारों से भूषित, दिक्पतियों के ईश्वर, विभु इन्द्र को मैं प्रणाम करता हूँ।

इस प्रकार से ध्यान करके आवाहनोपरान्त सम्यक् रूप से पूजन करके इं हृदयाय नमः इत्यादि से षड़ंगन्यास अर्चना करके पूर्वादि दिशाओं में ॐ कं कार्त्तिकेयाय नमः, रं अग्नये नमः, यं यमाय नमः, क्षं निर्ऋतये नमः, वं वरुणाय नमः, यं वायवे नमः, सं सोमाय नमः, हं इशानाय नमः द्वारा दिक्पालगण का पूजन करके वज्रादि अस्त्रसमूह का पूजन करना चाहिये। इस मन्त्र के एक लाख जप से इसका पुरश्चरण सम्पन्न होता है। घृत से लिप्त तिल द्वारा दश हजार हवन करना चाहिये।।२२-२३।।

अथास्य प्रयोगः—चतुष्कोणमण्डस्थपद्मे नववस्त्रवेष्टितं जलकुम्भं स्थापयित्वा गन्धोदकेन सम्पूर्य तत्र सपरिवारमिन्द्रमाराध्य सहस्रं जप्त्वा तज्जलाभिषेकेण भ्रष्टराज्यस्य राज्यप्राप्तिरन्येषां परमा श्रीर्भवति॥२४॥

इति इन्द्रप्रकरणम्

अब इस मन्त्र का प्रयोग कहा जाता है। चतुष्कोण मण्डपस्थ पद्म बनाकर उसमें नये वस्त्र से लिपटे कुम्भ को स्थापित करके गन्धयुक्त जल से उसे भर कर उस कुम्भ में सपरिवार इन्द्र की आराधना करके एक हजार इन्द्रमन्त्र का जप करने के उपरान्त उससे अभिषेक द्वारा भ्रष्टराज्य राजा अपने राज्य को पुनः प्राप्त कर लेता है और अन्य लोगों को श्रेष्ठ लक्ष्मी की प्राप्ति होती है।।२४।।

●

अथ विष्णुप्रकरणम्

अथ वक्ष्ये महामन्त्रान् विष्णोः सर्वार्थसाधकान्।
यस्य संस्मरणात् सन्तो भवाब्धेः पारमाश्रिताः ।।१।।

अब विष्णु-प्रकरण को कहते हैं। अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष के साधनार्थ विष्णु का महामन्त्र कहा जाता है। इनके सम्यक् स्मरण से सज्जनगण संसारसागर को पार कर जाते हैं।।१।।

अथ विष्णुः

तारं नमः पदं ब्रूयान्नरौ दीर्घसमन्वितौ।
पावनो णाय मन्त्रोऽयं प्रोक्तो वस्वक्षरः परः ।।२।।

दीर्घोऽत्र आकारः।

अब विष्णु मन्त्र कहते हैं। प्रथमतः तार (ॐ) तदनन्तर 'नमः' तत्पश्चात् दीर्घ 'आ' समन्वित न तथा र अर्थात् 'नारा'। तदनन्तर पवन (य) तथा 'णाय' लगाये। मन्त्र होता है— ॐ नमो नारायणाय। आठ अक्षरों वाला यह पवित्रकर मन्त्र विष्णुमन्त्र कहा गया है।।२।।

अस्य पूजाप्रयोगः—प्रातःकृत्यादि स्नानान्तं विधाय पूजास्थानं पवित्र-मन्त्राचमनं कुर्यात्।।३।।

इसका पूजन एवं प्रयोग इस प्रकार किया जाता है। प्रातःकृत्यादि से स्नानपर्यन्त करके पूजास्थान में वैष्णव मन्त्र से आचमन करना चाहिये।।३।।

यथा गौतमीये—

केशवाद्यैस्त्रिभिः पीत्वा द्वाभ्यां प्रक्षालयेत् करौ।
द्वाभ्यामोष्ठौ च संमृज्य द्वाभ्यामृज्यान्मुखं ततः ।।४।।

जैसे गौतमीय तन्त्र में कहा है कि ॐ केशवाय नमः, ॐ नारायणाय नमः, ॐ माधवाय नमः से तीन बार आचमन करके ॐ गोविन्दाय नमः, ॐ विष्णवे नमः मन्त्र से दोनों हाथों को धोना चाहिये। ॐ मधुसूदनाय नमः, ॐ त्रिविक्रमाय नमः से दोनों ओठ धोकर ॐ वामनाय नमः, ॐ श्रीधराय नमः से मुख धोना चाहिये।।४।।

एकेन हस्तं प्रक्षाल्य पादावपि तथैकतः।
सम्प्रोक्ष्यैकेन मूर्द्धानं ततः सङ्कर्षणादिभिः ।।५।।
आस्यनासाक्षिकर्णांश्च नाभ्युरस्कं तथा भुजौ।

स्पृशेदेवं भवेदाचमनञ्च वैशणवान्वये।
एवमाचमनं कृत्वा साक्षान्नारायणो भवेत् ॥६॥

ॐ हृषीकेशाय नमः से एक हाथ धोये, ॐ पद्मनाभाय नमः से दोनों पैरों को धोये। ॐ दामोदराय नमः मन्त्र से मस्तक पर प्रोक्षण करके संकर्षणादि से मुखस्पर्श, ॐ वासुदेवाय नमः आदि से दक्षिण नासिका, चक्षु, कर्ण, नाभि, हृदय एवं मस्तक का स्पर्श करे अर्थात् ॐ सङ्कर्षणाय नमः से मुखस्पर्श, ॐ वासुदेवाय नमः से दाहिनी नासिका का स्पर्श, ॐ प्रद्युम्नाय नमः से वाम नासिका का स्पर्श, ॐ अनिरुद्धाय नमः से दाहिने नेत्र का स्पर्श, ॐ पुरुषोत्तमाय नमः से वाम नेत्र का स्पर्श, ॐ अधोक्षजाय नमः से दाहिने कान का स्पर्श, ॐ नृसिंहाय नमः से बाँयें कान का स्पर्श, ॐ उपेन्द्राय नमः से मस्तक का स्पर्श, ॐ हरये नमः मन्त्र से दाहिने बाहुमूल का स्पर्श, ॐ विष्णवे नमः से बाँयें बाहुमूल का स्पर्श करना चाहिये। इसे वैष्णव आचमन कहा गया है। इससे साधक साक्षात् नारायणस्वरूप हो जाता है।।५-६।।

केशवादयस्तु केशवनारायणमाधवगोविन्दविष्णुमधुसूदनत्रिविक्रमवामन-श्रीधरहृषीकेशपद्मनाभदामोदरसङ्कर्षणवासुदेवप्रद्युम्नानिरुद्धपुरुषोत्तमाधोक्षजनृ-सिंहाच्युतजनार्दनोपेन्द्रहरिविष्णवः। वाक्यन्तु—ॐ केशवाय नमः इत्यादिना। ततः सामान्यपद्धतिरीत्या मातृकान्यासान्तं विधाय केशव-कीर्त्यादिन्यासं कुर्यात्। तदादौ तस्य ऋष्यादिन्यासः। शिरसि—प्रजापतये ऋषये नमः। मुखे—गायत्रीछन्दसे नमः। हृदि—अर्द्धलक्ष्मीहरये देवतायै नमः। ततो अविकृतेन श्रीबीजेन श्रीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः इत्यादिना कराङ्गन्यासौ कृत्वा ध्यायेत्।।७।।

केशवादि हैं—केशव, नारायण, माधव, गोविन्द, विष्णु, मधुसूदन, त्रिविक्रम, वामन, श्रीधर, हृषीकेश, पद्मनाभ, दामोदर, संकर्षण, वासुदेव, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, पुरुषोत्तम, अधोक्षज, नृसिंह, अच्युत, जनार्दन, उपेन्द्र, हरि तथा विष्णु। आचमन का मन्त्र ॐ केशवाय नमः इत्यादि पहले कहा जा चुका है।

इसके अनन्तर सामान्य पूजापद्धति के अनुसार मातृकान्यास-पर्यन्त कार्य करके केशवकीर्त्यादि न्यास करना चाहिये। यहाँ उसी केशवकीर्त्यादि न्यास से ऋष्यादि न्यास करना चाहिये। विनियोग इस प्रकार किया जाता है—अस्य श्रीकेशवकीर्त्या-दिन्यासमन्त्रस्य प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्रीच्छन्दः अर्द्धलक्ष्मीहरिर्देवता ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे विनियोगः। मस्तक पर ॐ प्रजापतये ऋषये नमः, मुख में ॐ गायत्रीछन्दसे नमः, हृदय में ॐ अर्द्धलक्ष्मीहरये नमः। इसके पश्चात् अविकृत श्रीबीज से श्रीं अंगुष्ठाभ्यां नमः, श्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा—इस प्रकार से करन्यास सम्पन्न करके अंगन्यास के पश्चात् ध्यान करना चाहिये।।७।।

उद्यत्प्रद्योतनशतरुचिं तप्तहेमावदातं
पार्श्वद्वन्द्वे जलधिसुतया विश्वधात्र्या च जुष्टम्।

नानारत्नोल्लसितविविधाकल्पमापीतवस्त्रं
विष्णुं वन्दे दरकमलकौमोदकीचक्रपाणिम् ॥८॥

इनका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—उदित शतकोटि सूर्य के समान दीप्ति वाले, तपे हुये स्वर्ण के समान पीत वर्ण वाले, दोनों ओर सागरकन्या लक्ष्मी तथा विश्वधात्री पृथ्वी द्वारा सेवित, विविध रत्नों द्वारा उद्भासित, नाना भूषणों से भूषित, पीत वस्त्र धारण करने वाले, शंख-कमल-कौमोदकी गदा तथा चक्र धारण करने वाले भगवान् विष्णु की मैं वन्दना करता हूँ।।८।।

एवं ध्यात्वा मातृकास्थानेषु न्यसेत्। सर्ववर्णेष्वनुस्वारः प्रयोज्यः, वर्णानुक्त्वा सार्धचन्द्रानित्यादिवचनात्। तथा च ललाटे—अं केशवाय कीर्त्यै नमः, मुखे—आं नारायणाय कान्त्यै नमः। एवं इं माधवाय तुष्ट्यै नमः, ईं गोविन्दाय पुष्ट्यै नमः, उं विष्णवे धृत्यै नमः, ऊं मधुसूदनाय शान्त्यै नमः, ऋं त्रिविक्रमाय क्रियायै नमः, ॠं वामनाय दयायै नमः, ऌं श्रीधराय मेधायै नमः, ॡं हृषीकेशाय हर्षायै नमः, एं पद्मनाभाय श्रद्धायै नमः, ऐं दामोदराय लज्जायै नमः, ओं वासुदेवाय लक्ष्म्यै नमः, औं सङ्कर्षणाय सरस्वत्यै नमः, अं प्रद्युम्नाय प्रीत्यै नमः, अः अनिरुद्धाय रत्यै नमः, कं चक्रिणे जयायै नमः, खं गदिने दुर्गायै नमः, गं शार्ङ्गिणे प्रभायै नमः, घं खड्गिने सत्यायै नमः, ङं शङ्खिने चण्डायै नमः, चं हलिने वाण्यै नमः, छं मूषलिने विलासिन्यै नमः, जं शूलिने विजयायै नमः, झं पाशिने विजयायै नमः, ञं अङ्कुशिने विश्वायै नमः, टं मुकुन्दाय विनदायै नमः, ठं नन्दजाय सुनदायै नमः, डं नन्दिने स्मृत्यै नमः, ढं नवाय ऋध्यै नमः, णं नरकजिते समृद्ध्यै नमः, तं हरये शुद्ध्यै नमः, थं कृष्णाय बुद्ध्यै नमः, दं सत्याय भक्त्यै नमः, धं सात्वताय मत्यै नमः, नं शौरये क्षमायै नमः, पं शूराय रमायै नमः, फं जनार्दनाय उमायै नमः, बं भूधराय क्लेदिन्यै नमः, भं विश्वमूर्त्तये क्लिन्नायै नमः, मं वैकुण्ठाय वसुदायै नमः, यं त्वगात्मने पुरुषोत्तमाय वसुधायै नमः, रं असृगात्मने बलिने परायै नमः, लं मांसात्मने बलानुजाय परायणायै नमः, वं मेद आत्मने बालाय सूक्ष्मायै नमः, शं अस्थ्यात्मने वृषघ्नाय सन्ध्यायै नमः, षं मज्जात्मने वृषाय परायै नमः, सं शुक्रात्मने हंसाय प्रभायै नमः, हं प्राणात्मने वराहाय निशायै नमः, ळं जीवात्मने विमलाय अमोघायै नमः, क्षं क्रोधात्मने नृसिंहाय विद्युतायै नमः॥९॥

उपर्युक्त रीति से ध्यान करने के उपरान्त मातृकास्थान पर केशव-कीर्त्ति प्रभृति का न्यास करना चाहिये। न्यासक्रम में समस्त मातृकावर्णों में अनुस्वार लगाना चाहिये; क्योंकि क्रमदीपिका का वचन है कि अनुस्वारयुक्त मातृकावर्ण के आगे नमः लगाकर न्यास करना चाहिये। जैसे—अं केशवाय कीर्त्यै नमः इत्यादि। इसी प्रकार आगे भी मूलोक्त मन्त्रों से समस्त मातृकावर्णों से तत्तत् अंगों में न्यास करना चाहिये।।९।।

गौतमीये—

केशवादिरयं न्यासो न्यासमात्रेण देहिनाम्।
अच्युतत्वं ददात्येव सत्यं सत्यं न संशयः ॥१०॥

गौतमीय तन्त्र में कहा है कि यह केशव कीर्त्तिन्यास जीवगण को (इसके न्यासमात्र से) अच्युतत्व प्रदान करता है, इसमें कोई सन्देह नहीं है।।१०।।

केचित्तु केशवकीर्त्तिभ्यां नम इति वाक्यक्रममाहस्तन्न, मातृकार्णं समुच्चार्य केशवाय इति स्मरेत्। कीर्त्या च नमसा युक्तमित्यादि न्यासमाचरेदिति गौतमीयात्। अयं न्यासो भुक्तिमुक्तिमिच्छतां श्रीबीजादिः॥११॥

कोई-कोई केशवकीर्त्तिभ्यां नमः से न्यासवाक्य का क्रम कहते हैं, वह सम्भव नहीं है; क्योंकि गौतमीय तन्त्र का वचन है कि मातृका वर्ण का उच्चारण करके केशवाय तथा नमः युक्त कीर्त्यै कहना चाहिये अर्थात् 'केशवाय कीर्त्यै नमः' इत्यादि प्रकार से न्यास करना चाहिये। भोग तथा मोक्षकामी को न्यास में मन्त्रों के आदि में श्रीबीज का प्रयोग करना चाहिये।।११।।

तथा च गौतमीये—

एवं प्रविन्यसेन्न्यासं लक्ष्मीबीजपुरःसरम्।
स्मृतिं धृतिं महालक्ष्मीं प्राप्यान्ते हरितां ब्रजेत्॥१२॥ इति।

तथाच श्रीं अं केशवाय कीर्त्यै नमः इत्यादि प्रयोज्यम्॥१३॥

गौतमीय तन्त्र में कहा है कि इस प्रकार लक्ष्मीबीज के साथ केशवकीर्त्यादि न्यास करना चाहिये; इस न्यास के करने से इस लोक में स्मृति, धृति एवं महालक्ष्मी (ऐश्वर्य) का लाभ होता है मथा अन्त में हरित्व-लाभ होता है। अतएव यहाँ 'श्रीं अं केशवाय कीर्त्यै नमः' इत्यादि प्रकार से न्यासवाक्य का प्रयोग करना चाहिये।।१२-१३।।

अथ तत्त्वन्यासः—मं नमः पराय जीवतत्त्वात्मने नमः, भं नमः पराय प्राणतत्त्वात्मने नमः इति द्वयं सर्वगात्रे। बं नमः पराय मतितत्त्वात्मने नमः, फं नमः पराय अहङ्कारतत्त्वात्मने नमः, पं नमः पराय मनस्तत्त्वात्मने

नमः—एतत्त्रयं हृदि। नं नमः पराय शब्दतत्त्वात्मने नमः—इत्ययं मस्तके। धं नमः पराय स्पर्शतत्त्वात्मने नमः मुखे। एवं दं नमः पराय रूपतत्त्वात्मने नमः हृदि। थं नमः पराय रसतत्त्वात्मने नमः गुदे। तं नमः पराय गन्धतत्त्वात्मने नमः पादयोः। णं नमः पराय श्रोत्रतत्त्वात्मने नमः कर्णयोः। दं नमः पराय त्वक्तत्त्वात्मने नमः त्वचि। डं नमः पराय नेत्रतत्त्वात्मने नमः नेत्रयोः। ठं नमः पराय जिह्वा-तत्त्वात्मने नमः जिह्वायाम्। टं नमः पराय घ्राणतत्त्वात्मने नमः घ्राणयोः। ञं नमः पराय वाक्तत्त्वात्मने नमः वाचि। झं नमः पराय पाणितत्त्वात्मने नमः पाण्योः। जं नमः पराय पादतत्त्वात्मने नमः पादयोः। छं नमः पराय पायुतत्त्वात्मने नमः गुह्ये। चं नमः पराय उपस्थतत्त्वात्मने नमः लिङ्गे। ङं नमः पराय आकाशतत्त्वात्मने नमः मूर्ध्नि। घं नमः पराय वायुतत्त्वात्मने नमः मुखे। गं नमः पराय तेजस्तत्त्वात्मने नमः हृदि। खं नमः पराय जलतत्त्वात्मने नमः लिङ्गे। कं नमः पराय पृथिवीतत्त्वात्मने नमः पादयोः। शं नमः पराय हृत्पुण्डरीकतत्त्वात्मने नमः हृदि। हं नमः पराय द्वादशकला-व्याप्तसूर्यमण्डलतत्त्वात्मने नमः हृदि। सं नमः पराय षोडशकला-व्याप्तसोममण्डलतत्त्वात्मने नमः हृदि। रं नमः पराय दशकलाव्याप्त-वह्निमण्डलतत्त्वात्मने नमः हृदि। यं नमः पराय परमेष्ठितत्त्वात्मने वासुदेवाय नमः मस्तके। यं नमः पराय परमेष्ठितत्त्वात्मने वासुदेवाय नमः। मुखे—ॐ यं नमः पराय पुरुषतत्त्वात्मने सङ्कर्षणाय नमः। हृदये—ॐ ळं नमः पराय विश्वतत्त्वात्मने प्रद्युम्नाय नमः। लिङ्गे—ॐ वं नमः पराय निवृत्तितत्त्वात्मने अनिरुद्धाय नमः। पादद्वये—ॐ लं नमः पराय सर्वतत्त्वात्मने नारायणाय नमः। सर्वगात्रे—ॐ क्षौं नमः पराय कोपतत्त्वात्मने नृसिंहाय नमः॥१४॥

यह तत्त्वन्यास है। (मूल संस्कृत में यथाविधि स्पष्ट रूप से अंकित होने के कारण इसके अनुवाद का कोई प्रयोजन नहीं है।)।।१४।।

ततो यथाविधि प्राणायामं पीठन्यासञ्च कृत्वा केशरेषु प्रादक्षिण्येन मध्ये च पूर्वादितः ॐ विमलायै नमः, उत्कर्षिण्यै नमः, ज्ञानायै नमः, क्रियायै नमः, योगायै नमः। प्रह्व्यै नमः, सत्यायै नमः, ईशानायै नमः, अनुग्रहायै नमः, इति पीठशक्तिर्न्यस्य तदुपरि ॐ नमो भगवते विष्णवे सर्वभूतात्मने वासुदेवाय सर्वात्मसंयोगयोगपद्मपीठात्मने नमः इति पीठमनूं न्यसेत्॥१५॥

तदनन्तर यथाविधि प्राणायाम तथा पीठन्यास करके केशरसमूह में पूर्व दिशा से प्रदक्षिणक्रम से मध्य में नीचे लिखे मन्त्रों से पीठशक्तियों का न्यास करना चाहिये। यथा—ॐ विमलायै नमः, ॐ उत्कर्षिण्यै नमः, ॐ ज्ञानायै नमः, ॐ क्रियायै नमः, ॐ योगायै नमः, ॐ प्रह्वै नमः, ॐ सत्यायै नमः, ॐ ईशानायै नमः, ॐ अनुग्रहायै नमः। इसके अनन्तर उसके उपरि भाग में 'ॐ नमो भगवते विष्णवे सर्वभूतात्मने वासुदेवाय सर्वात्मसंयोगयोगपद्मपीठात्मने नमः' इस मन्त्र से पीठमन्त्र का न्यास करना चाहिये।।१५।।

तत ऋष्यादिन्यासः। शिरसि—साध्यनारायणाय ऋषये नमः। मुखे—गायत्रीछन्दसे नमः। हृदि—विष्णवे देवतायै नमः॥१६॥

अब ऋष्यादि न्यास कहते हैं। विनियोग इस प्रकार किया जाता है—अस्य श्री विष्णुमन्त्रस्य साध्यनारायण ऋषिः, देवी गायत्री छन्दः, श्री विष्णुर्देवता, प्रणवो बीजं, आय शक्तिः ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे पूजने विनियोगः। विनियोग के अनन्तर इस प्रकार न्यास करना चाहिये—मस्तक पर—ॐ साध्यनारायणाय ऋषये नमः, मुख में—ॐ देव्यै गायत्र्यै छन्दसे नमः, हृदय में—श्रीविष्णवे देवतायै नमः, गुह्य में—ॐ बीजाय नमः, दोनों पैरों पर—आय शक्तये नमः।।१६।।

यथा निबन्धे—

साध्यनारायणः प्रोक्तः ऋषिच्छन्द उदाहृतः।
मन्त्रस्य देवी गायत्री देवता विष्णुरव्ययः॥१७॥

निबन्ध में कहा गया है कि इस मन्त्र के साध्यनारायण ऋषि, देवी गायत्री छन्द, अव्यय विष्णु देवता, प्रणव बीज एवं आय शक्ति कही गयी है।।१७।।

ततः कराङ्गन्यासौ—क्रुद्धोल्काय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। महोल्काय तर्जनीभ्यां स्वाहा। वीरोल्काय मध्यमाभ्यां वषट्। द्युल्काय अनामिकाभ्यां हुं। सहस्रोल्काय कनिष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु॥१८॥

तदनन्तर करन्यास तथा अंगन्यास करना चाहिये। जैसे प्रथमतः मूलोक्त (ऊपर लिखे प्रकार से) करन्यास करके ॐ क्रुद्धोल्काय हृदयाय नमः, ॐ महोल्काय शिरसे स्वाहा, ॐ वीरोल्काय शिखायै वषट्, ॐ द्युल्काय कवचाय हुं, ॐ सहस्रोल्काय अस्त्राय फट् मन्त्रों से अंगन्यास करना चाहिये।।१८।।

ततो मन्त्रेण षडङ्गन्यासं कुर्यात्। ॐ हृदयाय नमः, नं शिरसे स्वाहा, मों शिखायै वषट्, नां कवचाय हुं, रां नेत्राभ्यां वौषट्, यं अस्त्राय फट्। दक्षिणपार्श्वे णां नमः। वामपार्श्वे यं नमः। ॐ नमः सुदर्शनाय अस्त्राय

फड़िति मन्त्रेण दिग्बन्धनं कुर्यात्। अत्र मन्त्रन्यासमूर्त्तिपञ्जरन्यासौ काम्यत्वान्न लिखितौ॥१९॥

सबसे पहले उपर्युक्त मन्त्रों से करन्यास तथा अंगन्यास करने के पश्चात् इस प्रकार षडंग न्यास करना चाहिये—

हृदय में—ॐ हृदयाय नमः। शिर पर—ॐ शिरसे स्वाहा।

शिखा में—ॐ शिखायै वषट्। दोनों बाहुओं पर—नां कवचाय हुम्।

नेत्र में—वां नेत्राभ्यां वौषट्। करतल-करपृष्ठ में—यं अस्त्राय फट्।

इस प्रकार षडंगन्यास करने के उपरान्त दक्षिण पार्श्व में ॐ णां नमः, वाम पार्श्व में ॐ यं नमः से न्यास करने के पश्चात् सभी दिशाओं का दिग्बन्धन करना चाहिये। दिग्बन्धन मन्त्र है—ॐ नमः सुदर्शनाय अस्त्राय फट्। यहाँ मन्त्रन्यास तथा मूर्त्तिपंजर न्यास काम्य है; अतः नहीं लिखा जा रहा है।।१९।।

विशेष—इस ग्रन्थ में मन्त्रन्यास के सम्बन्ध में नहीं बतलाया गया है; परन्तु तन्त्रसार में इसे आवश्यक कहा गया है। इसके बिना क्रिया निष्फल हो जाती है। यह दश आवृत्तियों में किया जाता है। यह सब यहाँ तन्त्रसार ग्रन्थ से उद्धृत किया जा रहा है। प्रथम आवृत्ति—आधार में—ॐ नमः। हृदय में—नं नमः। वक्त्र में—मों नमः। दक्षिण बाहुमूल में—नां नमः। वाम बाहुमूल में—रां नमः। दक्षिण पाद में—यं नमः। वाम पाद में—णां नमः। नासिका में—यं नमः।

द्वितीय आवृत्ति—कण्ठ में—ॐ नमः। नाभि में—नं नमः। हृदय में—मों नमः। दक्षिण स्तन पर—नां नमः। वाम स्तन पर—रां नमः। दक्षिण पार्श्व में—यं नमः। वाम पार्श्व में—णां नमः। पृष्ठ देश में—यं नमः।

तृतीय आवृत्ति—मस्तक में—ॐ नमः। मुख में—नं नमः। दाहिने नेत्र में—मों नमः। वाम नेत्र में—नां नमः। दक्षिण कर्ण में—रां नमः। वाम कर्ण में—यं नमः। दक्षिण नासिका में—णां नमः। वाम नासिका में—यं नमः।

चतुर्थ आवृत्ति—दाहिने हाथ की तीनों सन्धियों में—ॐ नमः, नं नमः, मों नमः। दाहिने हाथ की पाँचों अंगुलियों में—नां नमः, रां नमः, यं नमः, णां नमः। यं नमः।

पञ्चम आवृत्ति—बाँयें हाथ की तीनों सन्धियों में—ॐ नमः, नं नमः, मों नमः। बाँयें हाथ की पाँचों अंगूलियों में—नां नमः, रां नमः, यं नमः, णां नमः, यं नमः।

षष्ठ आवृत्ति—दाहिने पैर की तीनों सन्धियों में—ॐ नमः, नं नमः, मों नमः। दाहिने पैर की पाँचों अंगुलियों में—नां नमः, रां नमः, यं नमः, णां नमः, यं नमः।

सप्तम आवृत्ति—वाम पैर की तीनों सन्धियों में—ॐ नमः, नं नमः, मों नमः। वाम पैर की पाँचों अंगुलियों में—नां नमः, रां नमः, यं नमः, णां नमः, यं नमः।

अष्टम आवृत्ति—हृदय की सात धातुओं तथा प्राण में—ॐ नमः, नं नमः, मों नमः, नां नमः, रां नमः, यं नमः, णां नमः यं नमः।

नवम आवृत्ति—मस्तक पर—ॐ नमः, चक्षु में—नं नमः, मुख में—मों नमः, हृदय में—नां नमः, कुक्षि में—रां नमः, उरुद्वय में—यं नमः, जंघाद्वय में—णां नमः, पादद्वय में—यं नमः।

दशम आवृत्ति—गण्डदेश में—ॐ नमः, कन्धे पर—नं नमः, उरुओं में—मों नमः, पैरों में—नां नमः, शंखमुद्रा से शंखस्थान में—रां नमः, चक्रमुद्रा से चक्रस्थान में—यं नमः, गदामुद्रा में गदास्थान में—णां नमः, पद्ममुद्रा से पद्मस्थान में—यं नमः।

अब अष्टतत्त्वन्यास कहा जा रहा है। यह संहार तथा सृष्टिरूप से दो प्रकार से किया जाता है। मन्त्रवर्णों से यह न्यास किया जाता है। इस न्यास का स्थान है—पाद, लिंग, हृदय, मुख, मस्तक, हृदय, पुनः हृदय तथा सर्वाङ्ग। संहार में मन्त्रवर्ण के अनुलोम से मन्त्रवर्णों का न्यास किया जाता है एवं सृष्टि में प्रतिलोम से मन्त्रवर्णों का न्यास किया जाता है। इस प्रकार से एक-एक वर्ण से न्यास करना चाहिये। संहाररूप से न्यास इस प्रकार होता है—

पदद्वय में—ॐ नमः पराय पृथिव्यात्मने नमः।

लिंग में—ॐ नं नमः पराय जलात्मने नमः।

हृदय में—ॐ मों नमः पराय तेजआत्मने नमः। इत्यादि।

सृष्टिरूप से तत्त्वन्यास इस प्रकार किया जाता है। इसमें पृथ्वी से न्यास प्रारम्भ नहीं होता अर्थात् अन्तिम वाला सर्वशरीर न्यास पहले होता है। यथा—

सर्वशरीर में—यं नमः पराय प्रकृत्यात्मने नमः।

पुनः हृदय में—णां नमः पराय महदात्मने नमः।

हृदय में—यं नमः पराय अहंकारात्मने नमः इत्यादि।

अब बिन्दुरूप आत्मा, नादरूप अन्तरात्मा, शक्तिरूप परमात्मा तथा शान्तिरूप ज्ञानात्मा का शरीर में 'ॐ बिन्दुरूपात्मने नमः, ॐ नादरूपान्तरात्मने नमः, ॐ शक्तिरूपपरमात्मने नमः, ॐ शान्तिरूपज्ञानात्मने नमः' मन्त्र से व्यापक न्यास करना चाहिये।

इसके पश्चात् इस प्रकार से मूर्त्तिन्यास करना चाहिये—

ललाट में—ॐ अं केशवाय धात्रे नमः।

नाभिभाग (कुक्षि) में—नं आं नरायणाय अर्यम्णे नमः।

हृदय में—मों इं माधवाय मित्राय नमः।

गलकूपतल में—भं ईं गोविन्दाय वरुणाय नमः।
दक्ष पार्श्व में—गं उं विष्णवे अंशवे नमः।
दक्षिण स्कन्ध में—वं ऊं मधुसूदनाय भगाय नमः।
गलदक्षिण भाग में—तें एं त्रिविक्रमाय विवस्वते नमः।
वाम पार्श्व में—वां ऐं वामनाय इन्द्राय नमः।
वाम स्कन्ध में—सुं ओं श्रीधराय पूष्णे नमः।
गलवाम भाग में—दें औं हृषीकेषाय पर्जन्याय नमः।
पृष्ठदेश में—वां अं पद्मनाभाय त्वष्ट्रे नमः।
ककुद में—यं अः दामोदराय विष्णवे नमः।

इसके पश्चात् मस्तक पर द्वादशाक्षर एवं अष्टाक्षर मन्त्र से न्यास करना चाहिये।

ततः ॐ किरीटकेयूरहारमकरकुण्डलाङ्कृत! शङ्खचक्रगदापद्महस्त! पीताम्बरधर! श्रीवत्साङ्कितवक्षःस्थल! श्रीभूमिसहितात्मज्योतिर्द्वयदीप्तकराय सहस्रादित्यतेजसे नमः इति किरीटमन्त्रेण व्यापकं न्यस्य मुद्राः प्रदर्श्य ध्यायेत्॥२०॥

अब ऊपर लिखे किरीट मन्त्र से अर्थात् 'ॐ किरीटकेयूरहार' से लेकर 'सहस्रादित्यतेजसे नमः' पर्यन्त मन्त्र से व्यापक न्यास करने के उपरान्त मुद्रा दिखलाकर ध्यान करना चाहिये।।२०।।

ध्यानम्—

उद्यत्कोटिदिवाकभमनिशं शङ्खं गदापङ्कजं,
चक्रं विभ्रतमिन्दिरावसुमतीसंशोभिपार्श्वद्वयम्।
कोटिराङ्गदहारकुण्डलधरं पीताम्बरं कौस्तुभो-
द्दीप्तं विश्वधरं स्ववक्षसि लसच्छ्रीवत्सचिह्नं मजे॥२१॥

अब इस प्रकार ध्यान करना चाहिये—उदीयमान करोड़ों सूर्य की आभा के समान दीप्ति वाले; शंख, चक्र, गदा, पद्मधारी; वाम पार्श्व में लक्ष्मी तथा दक्षिण पार्श्व में पृथ्वी द्वारा शोभित पार्श्वद्वय वाले; मुकुट, अंगद, हार तथा कुण्डलधारी, पीताम्बरधारी, वक्षःस्थल कौस्तुभमणि से दीप्त, श्रीवत्स चिह्न वाले, विश्वपोषक नारायण का मैं भजन करता हूँ (ध्यान के पश्चात् श्रीवत्स, कौस्तुभ, वनमाला एवं आयुधमुद्रा दिखानी चाहिये।।२१।।

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्यार्घ्यस्थापनं कुर्यात्। ततो विमलादिशक्तिसहितपीठपूजां कृत्वा पुनर्ध्यात्वावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणपूजां कुर्यात्॥२२॥

इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचार से पूजन करके विशेषार्घ्य-स्थापन करने के उपरान्त पीठन्यास के समान ही विमलादि शक्तिसहित पीठपूजा करके पुन: ध्यान, आवाहन से लेकर पञ्चपुष्पाञ्जलि दान-पर्यन्त समस्त कार्य का अनुष्ठान करके आवरण पूजा करनी चाहिये।।२२।।

यथा—अग्निनिर्ऋतिवाय्वीशानेषु दिक्षु च क्रुद्धोल्काय हृदयाय नमः इत्यादिना षड़ङ्गेन सम्पूज्य, पूर्वादिकेशरेषु ॐ नमः, नं नमः, मों नमः, नां नमः, रां नमः, यं नमः, णां नमः, यं नमः; पूर्वादिदिग्दलेषु वासुदेवसङ्कर्षणप्रद्युम्नानिरुद्धान्, अग्न्यादिकोणदलेषु शान्तिश्रीसस्वतीरतिः, पूर्वादितः पत्राग्रेषु शङ्खचक्रगदापद्मकौस्तुभमूषलखड्गवनमालाः, बहिरग्रे गरुड़म्, दक्षिणे शङ्खनिधिम्, वामे पद्मनिधिम्, पश्चिमे ध्वजम्, अग्निकोणे विघ्नम्, नैर्ऋति आर्याम्, वायुकोणे दुर्गाम्, ईशाने सेनान्यम्; तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च प्रणवादिनमोऽन्तचतुर्थ्यन्तनाम्ना सम्पूज्य धूपदीपौ दत्वा फड़िति नैवेद्यं सम्प्रोक्ष्य, चक्रमुद्रयाभिरक्ष्य यमिति दोषसमूहं संशोष्य रमिति दोषं सन्दह्य वमित्यमृतीकृत्य मूलमष्टधा जपेत्। गन्धपुष्पैर्नैवेद्यमभ्यर्च्य उत्सृजेत्। ॐ निवेदयामि भवते जुषाणेदं हविर्हरे इति निवेद्य वामहस्तेन ग्रासमुद्रां प्रदर्श्य दक्षिणहस्तेन ॐ प्राणाय स्वाहेत्यादिना प्राणादिमुद्राः प्रदर्शयेत्। तत आचमनीयं ताम्बूलञ्च दत्त्वा विसर्जनान्तं कर्म कुर्यात्। अस्य पुरश्चरणं षोडशलक्षजपः। मधुराप्लुतसरसिजैर्दशांशहोमः।।२३।।

इति विष्णुप्रकरणम्

जैसे—अग्नि, नैर्ऋत्य, वायु, ईशान कोण तथा दिक्समूहों में पूर्ववर्णित रूप से 'ॐ क्रुद्धोल्काय हृदयाय नम:' इत्यादि मन्त्र से षडङ्ग पूजा करके पूर्वादि केशरसमूह में ऊपर लिखे क्रम से सभी मन्त्रवर्णों का पूजन करके, पूर्वादि दिग्दलों में वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न तथा अनिरुद्ध की; अग्निकोणादि कोणों में शान्ति, श्री, सरस्वती तथा रति की; पूर्वादिक्रम में पत्र के अंगसमूह में शंख, चक्र, गदा, पद्म, कौस्तुभ, मूषल तथा वनमाला की; अष्टदल के बाहरी भाग में चतुरस्र के मध्य में गरुड़ की; उसके दक्षिण में शंखनिधि की, बाँयें भाग में पद्मनिधि की, पश्चिम में ध्वज की, अग्निकोण में विघ्न की, नैऋत्यकोण में अर्यमा की, वायुकोण में दुर्गा की, ईशान में सेनानी की, उसके बाहरी भाग में इन्द्रादि लोकपालों तथा उनके वज्रादि अस्त्रसमूह की मन्त्र में प्रणव को आदि में लगा कर तथा नम: को अन्त में लगाकर एवं मध्य में सम्बद्ध नाम में चतुर्थ्यन्त विभक्ति लगाकर; जैसे इन्द्र की पूजा में 'ॐ इन्द्राय नम:'; इस प्रकार पूजा करके धूप-दीप-नैवेद्य प्रदान करना चाहिये। जैसे कि नैवेद्य लाकर देवता को मूल मन्त्र

से पाद्य तथा आचमन प्रदान कर 'फट्' मन्त्र से नैवेद्य का प्रोक्षण करना चाहिये। चक्रमुद्रा द्वारा इस नैवेद्य का रक्षण करके 'यं' मन्त्र द्वारा उसके दोषों का शोषण करके 'रं' मन्त्र से उन दोषों को दग्ध करने के उपरान्त उसका 'वं' मन्त्र से अमृतीकरण करना चाहिये और मूल मन्त्र का आठ बार जप करना चाहिये। गन्ध-पुष्पादि से नैवेद्य की अर्चना करके मूल मन्त्र का उच्चारण करते हुये देवता को नैवेद्य प्रदान करना चाहिये। नैवेद्य अर्पण करने का मन्त्र है—ॐ निवेदयामि भवते जुषाणेदं हविर्हरे।

नैवेद्य-निवेदनोपरान्त वाम हस्त से ग्रासमुद्रा प्रदर्शित कर दक्षिण हस्त द्वारा 'ॐ प्राणाय स्वाहा' इत्यादि मन्त्र से प्राणादि मुद्रा प्रदर्शित करनी चाहिये। इसके अनन्तर आचमन एवं ताम्बूल प्रदान करके विसर्जन-पर्यन्त की विधि सम्पन्न करनी चाहिये।

इस मन्त्र का पुरश्चरण सोलह लाख जप तथा जप के दशांश होम से सम्पन्न होता है। होम में त्रिमधुर से लिपटे पद्म द्वारा आहुति प्रदान करनी चाहिये।।२३।।

●

अथ श्रीरामः

अनन्तोऽग्न्यासनः सेन्दुर्बीजो रामाय हृन्मनुः।
षडक्षरोऽयमादिष्टो भजतां कामदो मणिः॥१॥

अनन्त आकारः। तथा च रां रामाय नमः इति षडक्षरो मन्त्रः।

अब श्रीराम का मन्त्र कहा जा रहा है। (निबन्ध के अनुसार) अनन्त (आ) अग्रासन रेफासन रेफ (र) से युक्त हो अर्थात् (रा) यह जब सेन्दु (बिन्दुयुक्त) होगा तब 'रां' इस बीज का उद्धार होता है। तदनन्तर 'रामाय' हृत् (नमः) हो। राम का भजन करने वालों के लिये कामप्रद मणिस्वरूप यह षडक्षर मन्त्र कहा गया है।

अनन्त—आकार। इस प्रकार 'रां रामाय नमः' यह षडक्षर मन्त्र होता है।।१।।

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादिवैष्णवोक्तपीठमन्वन्तं विन्यस्य ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। यथा ब्रह्मा ऋषिर्गायत्रीछन्दः श्रीरामो देवता। ततः कराङ्गन्यासौ रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः इत्यादिना रां हृदयाय नमः इत्यादिना च। ततो मन्त्रन्यासः। ब्रह्मरन्ध्रे—रां नमः, भ्रूमध्ये—रां नमः। हृदि—मां नमः। नाभौ—यं नमः। लिङ्गे—नं नमः। पादयोः—मः नमः॥२॥

इस मन्त्र की पूजापद्धति इस प्रकार से है—प्रातःकृत्यादि से लेकर विष्णुप्रकरण में कहे गये विधान के अनुसार पीठमन्त्र न्यास-पर्यन्त कृत्य करके ऋष्यादि न्यास करना चाहिये। जैसे इस मन्त्र के ब्रह्मा ऋषि हैं, गायत्री छन्द है, श्रीराम देवता हैं, रां बीज

है तथा नमः शक्ति है। तत्पश्चात् 'रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि प्रकार से करांग न्यास तथा 'रां हृदयाय नमः' इत्यादि से अंगन्यास करना चाहिये। तदनन्तर मन्त्रन्यास किया जाता है; जैसे ब्रह्मरन्ध्र में—रां नमः। भ्रूमध्य में—रां नमः। हृदय में—मां नमः। नाभि में—यं नमः। लिंग में—नं नमः। पादद्वय में—मंः नमः।।२।।

ततो ध्यायेत्—

कालाम्भोधरकान्तिकान्तमनिशं वीरासनाध्यासिनं
मुद्रां ज्ञानमयीं दधानमपरं हस्ताम्बुजं जानुनि।
सीतां पार्श्वगतां सरोरुहकरां विद्युन्निभां राघवं,
पश्यन्तं मुकुटाङ्गदादिविविधाकल्पोज्ज्वलाङ्गं भजे ।।३।।

तत्पश्चात् इस प्रकार ध्यान करना चाहिये—प्रलयकालीन मेधकान्ति के समान कान्ति वाले, वीरासन पर बैठे हुये, एक हाथ में ज्ञानमुद्रा धारण किये एवं दूसरे हाथ को जंघा पर टिकाये हुये, पद्मधारिणी विद्युत् प्रभा वाली पार्श्वस्थ सीता से शोभित, मुकुट-अंगद प्रभृति विविध भूषणों से उज्ज्वल अंग वाले श्रीराम राघव का मैं सदा भजन करता हूँ।।३।।

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्यार्घ्यस्थापनं पीठपूजाञ्च विधाय वैष्णवोक्त-पीठशक्तिः पीठमनूञ्च सम्पूज्य पुनर्ध्यात्वावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणानि पूजयेत्। यथा देवस्य वामपार्श्वे श्रीसीतायै नमः, अग्रे ॐ शार्ङ्गाय नमः। वामदक्षिणपार्श्वयोश्चापाय शरेभ्यः। तद्बहिः केशरे अग्न्यादिकोणे मध्ये दिक्षु च रां हृदयाय नमः इत्यादिना षडङ्गानि सम्पूज्य दलेषु पूर्वादितः ॐ हनुमते नमः। एवं सुग्रीवाय, विभीषणाय, लक्ष्मणाय, अङ्गदाय, जाम्बवते। दलाग्रेषु सृष्ट्यै, जयन्ताय, विजयाय, सुराष्ट्राय, राष्ट्रवर्धनाय, अकोपनाय, धर्मपालाय, सुमन्त्राय। तत इन्द्रादीन् वज्रादींश्च सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्।।४।।

उपर्युक्त रीति से ध्यान करके मानसोपचार पूजन, विशेष अर्घ्य-स्थापन एवं पीठ-पूजा करके विष्णुमन्त्र प्रकरणोक्त पीठशक्ति एवं पीठमन्त्र का पूजन करने के पश्चात् पुनः ध्यान करके आवाहन से लेकर पञ्चपुष्पाञ्जलि निवेदन-पर्यन्त विधि सम्पन्न करने के उपरान्त आवरणदेवताओं का पूजन करना चाहिये। जैसे देवता के वामपार्श्व में 'श्रीं सीतायै नमः' मन्त्र से सीता की, आगे 'ॐ शार्ङ्गाय नमः' से धनुष की, वाम तथा दक्षिण पार्श्व में 'ॐ चापाय नमः' से बाण की पूजा करना चाहिय। उसके बहिर्भाग में केशरसमूह के आग्नेयादि चार कोणों में तथा चारों दिशाओं में 'रां हृदयाय नमः'

इत्यादि मन्त्र से षड़ङ्ग पूजन करना चाहिये। तत्पश्चात् दलसमूह में पूर्व दिशादिक्रम से 'ॐ हनुमते नमः, ॐ सुग्रीवाय नमः, ॐ विभीषणाय नमः, ॐ लक्ष्मणाय नमः, ॐ अंगदाय नमः, ॐ जाम्बवते नमः, ॐ भरताय नमः, ॐ शत्रुघ्नाय नमः' मन्त्र से हनुमान, सुग्रीव, विभीषण, लक्ष्मण, अंगद, जाम्बवान, भरत एवं शत्रुघ्न का पूजन करना चाहिये।

दल के अग्रभाग में सृष्टि, जयन्त, सुराष्ट्र, राष्ट्रवर्धन, अकोपन, धर्मपाल तथा सुमन्त्र का पूजन करना चाहिये। तदनन्तर उसके बाहर इन्द्रादि लोकपालों तथा उसके बाहर वज्रादि अस्त्रसमूह का पूजन करके धूपदान से लेकर विसर्जन-पर्यन्त विधि करके कर्म का समापन करना चाहिये।।४।।

पुरश्चरणे तु—

ऋतुलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं कमलैः शुभैः ।
जुहुयादर्चिते वह्नौ ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः ।।५।।

इसके पुरश्चरण में छः लाख मन्त्रजप करना चाहिये। तदनन्तर वह्नि में रामपीठ की अर्चना करके सुन्दर विकसित पद्मसमूह द्वारा जप का दशमांश होम करना चाहिये। इसके अनन्तर ब्राह्मण भोजन कराना चाहिये।।५।।

अयं मन्त्रः षड्विधः—स्वबीजादिः कामबीजादिर्मायादिर्वाग्भवादिर्लक्ष्मी-बीजादिः प्रणवादिश्चेति। यथा—

स्वकामशक्तिवाग्लक्ष्मीताराद्यः पञ्चवर्णकः ।
षडक्षरं षड्विधः स्याच्चतुर्वर्गफलप्रदः ।।६।।

यह मन्त्र छः प्रकार का है—स्वबीजादि, कामबीजादि, मायाबीजादि, वाग्भवबीजादि, लक्ष्मीबीजादि तथा प्रणवादि। जैसा कि तन्त्र में कहा भी है—'रामाय नमः' इस पाँच वर्ण वाले मन्त्र के आदि में रां (स्वबीज), क्लीं (काम बीज), ह्रीं (शक्तिबीज), ऐं (वाग्बीज), श्रीं (लक्ष्मीबीज) तथा ॐ (तारा) लगाने से यह षडक्षर हो जाता है, जो चतुर्वर्ग फल को देने वाला होता है। जैसे रां रामाय नमः, क्लीं रामाय नमः, ह्रीं रामाय नमः, ऐं रामाय नमः, श्रीं रामाय नमः तथा ॐ रामाय नमः।।६।।

ब्रह्मासम्मोहनशक्तिर्दक्षिणामूर्त्तिरुच्यते ।
अगस्तिः श्रीशिवः प्रोक्ता मुनयोऽत्र क्रमादिमे ।।७।।

मुनयः ऋषयः। अत्र एषु।

क्रमशः रां रामाय नमः मन्त्र के ऋषि ब्रह्मा, क्लीं रामाय नमः मन्त्र के ऋषि

सम्मोहन, ह्रीं रामाय नमः मन्त्र के ऋषि शक्ति, ऐं रामाय नमः मन्त्र के ऋषि दक्षिणामूर्त्ति, श्रीं रामाय नमः मन्त्र के ऋषि अगस्त तथा ॐ रामाय नमः मन्त्र के ऋषि श्रीशिव कहे गये हैं।।७।।

अथवा कामबीजादेर्विश्वामित्रो मुनिर्मनोः।
छन्दो गायत्रीसंज्ञश्च श्रीरामश्चैव देवता ।।८।।

प्रातःकृत्यादिविसर्जनान्तं सर्वं पूर्ववत्।।९।।

अथवा कामबीजादि मन्त्रों के ऋषि विश्वामित्र, छन्द गायत्री तथा श्रीराम देवता कहे गये हैं। इसके पूजन में प्रातःकृत्य से लेकर विसर्जन-पर्यन्त सभी कृत्य पूर्ववत् किये जाते हैं।।८-९।।

मन्त्रान्तरम्—

जानकीवल्लभं भेऽन्तं वह्नेर्जायाहुमादिकम्।

तेन हुं जानकीवल्लभाय स्वाहा। अस्य वशिष्ठ ऋषिर्विराट् छन्दः श्रीरामो देवता हुं बीजं स्वाहा शक्तिः। कराङ्गन्यासौ कामबीजेन। तदुक्तम्—कामेनाङ्गक्रिया मतेति। शिरोललाटभ्रूमध्यतालुकण्ठहृदयनाभ्यूरुजानुपादेषु दश वर्णान् न्यसेत् हुं नमः इत्यादिना।।१०।।

इनका अन्य मन्त्र है—हुं जानकीवल्लभाय स्वाहा। यह दशाक्षर मन्त्र है। इसके ऋषि वशिष्ठ, छन्द विराट्, देवता श्रीराम, बीज हुं तथा शक्ति स्वाहा है। कामबीज से इसका करांग न्यास 'हुं नमः' इत्यादि प्रकार से किया जाता है। शिर, ललाट, भ्रूमध्य, तालु, कण्ठ, हृदय, नाभि, उरु, जानु तथा पदों में मन्त्रस्थ दश वर्ण का न्यास करना चाहिये।।१०।।

विशेष—दश वर्ण का न्यास इस प्रकार होता है—मस्तक में हुं नमः, ललाट में जां नमः, भ्रूमध्य में नं नमः, तालु में कीं नमः, कण्ठ में वं नमः, हृदय में ल्लं नमः, नाभि में भां नमः, दोनों उरुओं में यं नमः, दोनों जानुओं में स्वां नमः एवं दोनों पादों में हां नमः।

ध्यानन्तु—

अयोध्यानगरे चित्ररत्नसौवर्णमण्डपे।
मन्दारपुष्पैराबद्धविताने तोरणान्विते ।।११।।
सिंहासनसमारूढं पुष्पकोपरि राघवम्।
रक्षोभिर्हरिभिर्देवैर्दिव्ययानगतैः शुभैः।
संस्तूयमानं मुनिभिः सर्वज्ञैः परिसेवितम् ।।१२।।

सीतालङ्कृतवामाङ्गं लक्ष्मणेनोपशोभितम्।
श्यामं प्रसन्नवदनं सर्वाभरणभूषितम् ॥१३॥

चिन्तयामीत्यध्याहृत्यान्वयः।

इनका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—मनोरम अयोध्या नगरी में तोरणयुक्त मन्दारपुष्प से व्याप्त विचित्र रत्नों से मण्डित सुवर्णमय मण्डप में पुष्पक रथ के ऊपर सिंहासन पर विराजित, दिव्य यान में राक्षस (विभीषणादि), वानर, देवगणों से स्तूयमान (स्तुति सुनते हुये), सर्वज्ञ मुनियों द्वारा परिसेवित, सीता द्वारा सुशोभित वामांग वाले, लक्षण द्वारा उपशोभित, श्याम वर्ण, प्रसन्न वदन, सर्वाभरण-भूषित श्रीराम का मैं ध्यान करता हूँ।।११-१३।।

प्रातःकृत्यादिविसर्जनान्तं सर्वमन्यत् पूर्ववत्। तथा—

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं हवनं तद्दशांशतः।
वर्णलक्षं मन्त्रवर्णलक्षमित्यर्थः ॥१४॥

पूजन में प्रात:कृत्य से विसर्जन-पर्यन्त समस्त कर्म पूर्ववत् किये जाते हैं। साथ ही यह भी कहा गया है कि प्रति वर्ण एक लाख जप तथा जप का दशांश होम करना चाहिये। 'वर्णलक्षं' पद का अर्थ है—मन्त्रवर्णलक्ष अर्थात् मन्त्र में कुल दश वर्ण हैं; अत: पुरश्चरण-हेतु इस मन्त्र का दश लाख जप करना चाहिये।।१४।।

मन्त्रान्तरम्—

वह्निर्नारायणेनाढ्यो जठरः केवलस्तथा।
द्व्यक्षरो मन्त्रराजोऽयं सर्वाभीष्टफलप्रदः ॥१५॥
श्रीमायामन्मथैकैकबीजाद्यन्तर्गतो मनुः।
चतुर्वर्णः स एव स्यात्षड्वर्णो वाञ्छितप्रदः।
स्वाहान्तो हुंफड़न्तो वा नमोऽन्तो वा भवेन्मनुः ॥१६॥

वह्नि (र), नारायण (आ) द्वारा युक्त केवल जठर (य) अर्थात् 'राम' इन दो अक्षरों का मन्त्रराज अभीष्ट फलदायक होता है।

इस द्व्यक्षर मन्त्र में श्रीं, माया (ह्रीं) तथा मन्मथ (क्लीं)—इन तीन बीजों में से एक-एक बीज को आदि तथा अन्त में लगाने से यह मन्त्र चार अक्षरों का हो जाता है। तदनन्तर उस चतुरक्षर मन्त्र के अन्त में स्वाहा, हुं फट् अथवा नमः लगाने से वह वांछित फलों को प्रदान करने वाला छः अक्षरों वाला मन्त्र हो जाता है।।१५-१६।।

तारमायारमाऽनङ्गवाक्स्वबीजैस्तु षड्विधः।
द्व्यक्षरो मन्त्रराजः स्यात् सर्वाभीष्टफलप्रदः ॥१७॥

इस 'राम' मन्त्र में ॐ, माया (ह्रीं), रमा (श्रीं), अनंग (क्लीं), वाक् (ऐं) तथा स्वबीज (रां) का योग करने से यह क्रमशः छः प्रकार का होता है, जो समस्त अभीष्ट फलों को देने वाला होता है।।१७।।

अस्यार्थः—वह्नि रेफः। नारायण अकारः। जठरो मकारः। तेन राम इति द्व्यक्षरो मन्त्रः। अयं बहुविधः स्यात्। तथा च राम, श्रीं राम श्रीं, ह्रीं राम ह्रीं, क्लीं राम क्लीं, श्रीं राम श्रीं स्वाहा, ह्रीं राम ह्रीं स्वाहा, क्लीं राम क्लीं स्वाहा, श्रीं राम श्रीं हुं फट्, ह्रीं राम ह्रीं हुं फट्, क्लीं राम क्लीं हुं फट्, श्रीं राम श्रीं नमः, ह्रीं राम ह्रीं नमः, क्लीं राम क्लीं नमः, ॐ राम, ह्रीं राम, श्रीं राम, क्लीं राम, ऐं राम, रां राम–इत्येकोनविंशतिर्भेदाः। एवं द्व्यक्षरश्चन्द्रान्तो भद्रान्तो वा यदि तदा चतुरक्षरमन्त्रद्वयं भवति; यथा—रामचन्द्र इति रामभद्र इति च। एवं रामाय इति स्वरूपं, ततो हृत् नमःपदच्छेदपरः पञ्चाक्षरो मन्त्र इति॥१८॥

एतेषां प्रातःकृत्यमारभ्य धूपादिविसर्जनान्तं सर्वं कर्म पूर्ववत्। पुरश्चरणन्तु षड्लक्षजपः॥१९॥

ऊपर मूल में दो अक्षर वाले राममन्त्र के उन्नीस भेद अंकित किये गये हैं। इसी प्रकार 'राम' पद यदि चन्द्रान्त (रामचन्द्र) अथवा भद्रान्त (रामभद्र) हो तो भी यह चतुरक्षर मन्त्र होता है। इसी प्रकार रामाय के पश्चात् हृत् (नमः) पद लगाने पर 'रामाय नमः' यह पञ्चाक्षर मन्त्र होता है। इन सभी मन्त्रों को सिद्ध करने के लिये प्रातःकृत्य से आरम्भ करके धूपदानादि विसर्जन-पर्यन्त समस्त कर्म पूर्ववत करना चाहिये। इसके पुरश्चरण-हेतु सम्बद्ध मन्त्र का छः लाख जप करना चाहिये।।१८-१९।।

मन्त्रान्तरम्—

वह्निस्थं शयनं विष्णोरर्द्धचन्द्रविभूषितम्।
एकाक्षरो मनुः प्रोक्तो मन्त्रराजः सुरद्रुमः।
ब्रह्मा मुनिः स्याद्गायत्री छन्दो रामश्च देवता॥२०॥

विष्णुशयनमाकारः। तेन राममित्येकाक्षरो मन्त्रः। अस्य पुरश्चरणं द्वादशलक्षजपः। भानुलक्षं जपेन्मत्रमिति वचनात्। ध्यानपूजादिकन्तु षडक्षरवत्॥२१॥

इति श्रीरामप्रकरणम्

राम का मन्त्रान्तर कहते हैं—वह्निस्थित रकारस्थ विष्णुशयन (अनन्त) आ जब अर्द्धचन्द्र से विभूषित होकर राम एकाक्षर मन्त्र को 'रां' कहा गया है। यह मन्त्रराज कल्पवृक्ष के समान है। इसके ब्रह्मा ऋषि, गायत्री छन्द तथा श्रीराम देवता हैं।

विष्णुशयन = आ। इससे 'रां' यह एकाक्षर मन्त्र होता है। इस मन्त्र का पुरश्चरण 'भानुलक्षं जपेन्मन्त्रं' इस वचन के अनुसार बारह लाख जप से सम्पन्न होता है। इस मन्त्र का पूजनादि भी षड़क्षर मन्त्र के समान ही करना ही होता है।।२०-२१।।

●

अथ श्रीकृष्णः

गोपीजनपदस्यान्ते वल्लभाय द्विठावधिः ।
अयं दशाक्षरो मन्त्रो दृष्टादृष्टफलप्रदः ॥१॥

अब श्रीकृष्ण मन्त्र कहते हैं। 'गोपीजन' पद के बाद 'वल्लभाय' लगाकर अन्त में द्विठ (स्वाहा) लगाने पर मन्त्रोद्धार होता है—गोपीजनवल्लभाय स्वाहा। यह दशाक्षर मन्त्र दृष्ट तथा अदृष्ट फलों को देने वाला होता है।।१।।

अयं मन्त्रः कामबीजादिः। राशिनक्षत्रचक्रादौ तु कामबीजबहिर्भावेन विचारः कार्यस्तस्य लुप्तबीजत्वात्॥२॥

इस मन्त्र के आदि में कामबीज होता है। राशिचक्र तथा नक्षत्रचक्रादि में इसके बहिर्भाव अर्थात् कामबीज को छोड़कर 'गोपीजनवल्लभाय स्वाहा' मन्त्र का ही प्रयोग करना चाहिये; क्योंकि यहाँ कामबीज लुप्त रहता है।।२।।

यथा गौतमीये—

बीजपूर्वो जपश्चास्य रहस्यं कथितं मुने! ।
लुप्तबीजस्वभावत्वाद्दशाक्षर इहोच्यते ॥३॥

गौतमीय तन्त्र में कहा भी है कि हे मुने! इस मन्त्र का जप बीज के साथ होना चाहिये। यह रहस्य कहा जा रहा है। इस मन्त्र का बीज लुप्त है अर्थात् केवल जपकाल को छोड़ कर अन्य काल में यह बीज (कामबीज) नहीं रहता; इसीलिये इसे दशाक्षर मन्त्र कहा गया है।।३।।

बृहद्गौतमीये च—

भोगमोक्षैकनिलयो लुप्तबीजो दशाक्षरः ।
उद्धरेत्तु पृथक्त्वेन कामबीजं महामुने! ।
तद्योगात्फलदो मन्त्रो नान्यथा कल्पकोटिभिः ॥४॥

बृहद्गौतमीय तन्त्र में भी कहा है कि यह लुप्तबीज दशाक्षर मन्त्र भोग तथा मोक्ष का एकमात्र स्थान है। हे महामुने! कामबीज का पृथक् रूप से उद्धार करना चाहिये। इस कामबीज के योग से यह मन्त्र फलप्रद होता है; अन्यथा करोड़ों कल्पों में भी कोई फल नहीं प्राप्त होता।।४।।

कामबीजमित्यत्र पृथग्योगे द्वितीया, न तु कर्मणि। तथा च कामबीज-बहिर्भावेन उद्धरेदर्थाद्दशाक्षरमित्यर्थः॥५॥

'कामबीजम्' यहाँ पृथक् योग में द्वितीया विभक्ति की गई है, कर्म में द्वितीया विभक्ति नहीं है। इसलिये कामबीज का बहिर्भाव से उद्धार करना चाहिये अर्थात् दशाक्षर मन्त्र का उद्धार करना चाहिये।।५।।

अथास्य पूजा। प्रातःकृत्यादितत्त्वन्यासान्तं विधाय प्राणायामं कुर्यात्। तद्यथा—कामबीजस्यैकवारजपेन दक्षिणनासया वायुं रेचयेत्। ततः सप्तवारजपेन वामनासया वायुं पूरयेत्। ततो नासापुटौ धृत्वा विंशति-वारजपेन वायुं कुम्भयेत्। पुनर्वामनासया विरिच्य दक्षिणेनापूर्य द्वाभ्यां कुम्भयेत्। पुनर्दक्षया विरिच्य वामेनापूर्य द्वाभ्यां कुम्भयेत्॥६॥

इस मन्त्र की पूजापद्धति इस प्रकार है—प्रातःकृत्य से लेकर तत्त्वन्यास-पर्यन्त समस्त कार्य करके इस प्रकार प्राणायाम करना चाहिये—कामबीज के एक बार जप के द्वारा दक्षिण नासा से वायु का त्याग (रेचन) करने के पश्चात् सात बार जप करके वाम नासा से वायु का पूरक करना चाहिये। तत्पश्चात् दोनों नासापुटों को पकड़ कबीस बार जप करते हुये उतने समय तक कुम्भकावस्था में ही स्थित रहना चाहिये। पुनः वाम नासा से वायु को बाहर निकालना चाहिये अर्थात् रेचन करना चाहिये। अब दक्षिण नासा से वायु का पूरण करके दोनों नासिकाओं द्वारा कुम्भक (बीस बार मन्त्र जप करने के समय तक) करना चाहिये।।६।।

यथा—

एकेन रेचयेत् कामबीजेनैव पृथक् पृथक् ।
पूरयेत् सप्तजप्तेन विंशत्या तेन धारयेत् ।
सर्वेषु कृष्णमन्त्रेषु बीजेनानेन रेचयेत् ॥७॥ इति।

तन्त्र में कहा भी है कि एक बार कामबीज के जप द्वारा पृथक्-पृथक् रेचन करना चाहिये; तदनन्तर सात बार जप के द्वारा पूरक करने के बाद बीस बार जप के द्वारा कुम्भक करना चाहिये। समस्त कृष्णमन्त्रों में इसी बीज द्वारा रेचन करना चाहिये।।७।।

अत्र रेचयेदित्युपलक्षणम्। अथवा मूलमन्त्रेणैव प्राणायामः॥८॥

यहाँ 'रेचयेत्' पद पूरक तथा कुम्भक का उपलक्षण है। अथवा मूल मन्त्र से ही प्राणायाम का अनुष्ठान करना चाहिये।।८।।

तदुक्तम्—

पवनसंयमनस्त्वमुना चरेद्यदिह जप्तुमसौ मनुमिच्छति ।

तत्रायं विशेषः—यदि दशाक्षरं जपति तदा दशाक्षरेणाष्टाविंशत्यावृत्तेन रेचकं पूरकं कुम्भकञ्च यद्यष्टादशाक्षरं जपति, तदा द्वादशावृत्तेन तेन।।९।।

क्रमदीपिका में कहा गया है कि साधक कृष्णमन्त्र के स्थान पर जिस मन्त्र का जप करने की इच्छा करे, उसी मन्त्र से प्राणसंयमनरूपी प्राणायाम करना चाहिये। यहाँ विशेष यह है कि यदि दशाक्षर कृष्णमन्त्र का जप करना हो तब उस मन्त्र की अट्ठाईस बार आवृत्ति द्वारा रेचक, पूरक तथा कुम्भक करना चाहिये। यदि अट्ठारह अक्षर वाले कृष्णमन्त्र का जप करना अभीष्ट हो तो उस मन्त्र की बारह आवृत्ति द्वारा रेचक, पूरक तथा कुम्भक करना चाहिये।।९।।

दशाक्षरेण चेत् तत्राष्टाविंशत्याथ रेचयेत्।
पूरयेद्वामतस्तद्वद्धारयेत्तत् प्रमाणतः ।।१०।।
प्राणायामो भवेदेको रेचपूरककुम्भकैः ।
अष्टादशाक्षरेण चेद् द्वादशैवं समाचरेत् ।।११।।

इति वचनात्।

क्योंकि वचन है कि यदि दशाक्षर मन्त्र से जप करना अभीष्ट हो तब उसके अट्ठाईस बार जप द्वारा रेचक, उसी प्रकार वाम नासा से अट्ठाईस बार जप द्वारा पूरक एवं उसी परिमाण में जप द्वारा कुम्भक करना चाहिये।

यदि अट्ठारह अक्षर वाले मन्त्र का जप करना अभीष्ट हो तब भी उसी प्रकार पूरक, कुम्भक तथा रेचक के क्रम में उस अष्टादशाक्षर मन्त्र का बारह बार जप करना चाहिये। रेचक-पूरक तथा कुम्भक के योग से एक प्राणायाम सम्पन्न होता है।।१०-११।।

अन्यमन्त्रेषु तु अन्यमनुभिर्वर्णानुरूपमित्युक्तत्वात्। तत्तन्मन्त्रवर्णसंख्यया रेचकादित्रयं कुर्यात्। क्रमदीपिकायां रेचयेन्मारुतं दक्षया दक्षिणः पूरयेद्वामया मध्यनाड्या पुनर्धारयेदित्यादिः। एतत् तु श्रीकृष्णमन्त्र-मात्रविषयकम्। नान्यत्र विष्णुमन्त्रादौ।।१२।।

अन्य मन्त्रों में मन्त्रवर्ण की संख्या के अनुसार रेचक, पूरक तथा कुम्भक करना चाहिये—यह कहा गया है। क्रमदीपिका में कहा है कि दक्षिणमार्गी साधक को दक्षिण नासिक द्वारा वायु का रेचन, वाम नासा से वायु का पूरण तथा दोनों नासा बन्द करके (मध्य नाड़ी सुषुम्ना द्वारा) वायु का कुम्भक करना चाहिये। यह नियम मात्र श्रीकृष्ण मन्त्र के विषय में लगता है; विष्णु आदि के मन्त्र में यह नियम नहीं लगता।।१२।।

ततः पीठन्यासं विधाय केशरेषु मध्ये च विमलादिपीठमन्वन्तं विन्यस्य

ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। शिरसि नारदाय ऋषये नमः, विराट्छन्दसे नमः मुखे, हृदि श्रीकृष्णदेवतायै नमः, गुह्ये क्लीं बीजाय नमः, पादयोः स्वाहा शक्तये। ततः ॐ मन्त्राधिष्ठातृदेवतायै दुर्गायै नमः इति दुर्गां नमस्कुर्यात्। ततो दशाङ्गुलिषु दशाक्षराणि न्यसेत्। यथा दक्षिणकरस्याङ्गुष्ठे गों नमः। एवं तर्जन्यां पीं नमः, मध्यमायां जं, अनामिकाभ्या नं, कनिष्ठायां वं। वामस्य तासु ल्लं भां यं स्वां हां॥१३॥

तदनन्तर पीठन्यास करके केशरसमूह तथा मध्य में विमलादि पीठमन्त्र-पर्यन्त न्यास करके ऋष्यादि न्यास करना चाहिये। जैसे मस्तक में—ॐ नारदाय ऋषये नमः, मुख में—ॐ विराट् छन्दसे नमः, हृदय में—श्रीकृष्णदेवतायै नमः। गुह्य में—क्लीं बीजाय नमः। पैरों में—स्वाहा शक्तये नमः।

इसके अनन्तर इस मन्त्र से दुर्गा देवी को नमस्कार करना चाहिये—ॐ मन्त्राधिष्ठातृदेवतायै दुर्गायै नमः। अब अंगुलि में मन्त्र के एक-एक वर्ण से न्यास करना चाहिये; जैसे दाहिने हाथ के अंगूठे में—गों नमः, तर्जनी में—पीं नमः, मध्यमा में—जं नमः, अनामिका में—नं नमः एवं कनिष्ठा में—वं नमः। इसी प्रकार बाँयें हाथ के अंगूठे में—ल्लं नमः, तर्जनी में—भां नमः, मध्यमा में—यं नमः, अनामिका में—स्वां नमः एवं कनिष्ठा में—हां नमः।।१३।।

अथ करयोङ्गुलीषु पञ्चाङ्गन्यासः। यथा–आचक्राय स्वाहा अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, विचक्राय स्वाहा तर्जनीभ्यां स्वाहा, सुचक्राय स्वाहा मध्यमाभ्यां वषट्, त्रैलोक्यचक्राय स्वाहा अनामिकाभ्यां हुं, असुरान्तकचक्राय स्वाहा कनिष्ठाभ्यां फट्। ततो मूलमन्त्रपुटितान् मातृकावर्णान् सविन्दून् मातृकास्थानेषु न्यसेत्। ततः प्रणवपुटितं मूलमन्त्रं आकेशादापादम्, आपादादाकेशं त्रिवारं विन्यस्य दशाङ्गपञ्चाङ्गन्यासौ कुर्यात्। यथा हृदि गों नमः, एवं शिरसि पीं नमः, शिखायां जं नमः, सर्वाङ्गे नं नमः, दिक्षु वं नमः, दक्षपार्श्वे ल्लं नमः, वामपार्श्वे भां नमः, कट्यां यं नमः, पृष्ठे स्वां नमः, मूर्ध्नि हां नमः। तथा आचक्राय स्वाहा हृदयाय नमः। विचक्राय स्वाहा शिरसे स्वाहा। सुचक्राय स्वाहा शिखायै वषट्। त्रैलोक्यरक्षणचक्राय स्वाहा कवचाय हुं। असुरान्तकचक्राय स्वाहा अस्त्राय फट् इति। अस्य तत्त्वन्यासमूर्त्तिपञ्जरन्यासादयो न्यासः काम्यतया नोक्ताः॥१४॥

तत्पश्चात् दोनों हाथ की अंगुलियों का न्यास (पञ्चाङ्ग न्यास) ऊपर मूल में अंकित

विधि के अनुसार करना चाहिये। इसके पश्चात् मातृकाओं को पुटित करके विन्दुयुक्त मातृकावर्णों का न्यास ललाट आदि मातृकास्थानों में करना चाहिये। जैसे 'अ' का न्यास इस प्रकार से होगा—गोपीजनवल्लभाय स्वाहा अं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा इत्यादि। तदनन्तर मूल मन्त्र के आदि में प्रणव लगाकर 'ॐ गोपीजनवल्लभाय स्वाहा' द्वारा केश से आरम्भ कर पैर की अंगुलि-पर्यन्त, तदुपरान्त विलोम रूप से पैर की अंगुलियों से लेकर केश-पर्यन्त तीन बार न्यास करके मूलोक्त रीति से दशांग न्यास तथा पञ्चाङ्ग न्यास करना चाहिये। यहाँ काम्य न्यास होने के कारण तत्त्वन्यास तथा मूर्त्तिपञ्जर न्यास का उल्लेख नहीं किया गया है।।१४।।

विशेष—यदि किसी अनुष्ठानपद्धति को लिखा नहीं जायेगा तथा उसे ग्रन्थकार के समान काम्य कहकर छोड़ दिया जायेगा, तब उसके लुप्त हो जाने की आशंका बनी रहती है; क्योंकि तब काम्य (सकाम) व्यक्ति इच्छा रहने पर भी अनुपलब्धता के कारण उसे नहीं कर सकेगा। अत एव तत्त्वन्यास-प्रभृति को भी यहाँ उद्धृत करना आवश्यक है, ताकि सकाम व्यक्ति भी अनुष्ठान कर सके। तत्त्वन्यास का अनुष्ठान इस प्रकार होता है—

दोनों पैरों में—गों नमः पराय पृथ्वीतत्त्वात्मने नमः।
लिङ्ग में—पीं नमः पराय जलतत्त्वात्मने नमः।
हृदय में—जं नमः पराय तेजस्तत्त्वात्मने नमः।
मुख में—नं नमः पराय वायुतत्त्वात्मने नमः।
मस्तक पर—वं नमः परायाकाशतत्त्वात्मने नमः।
हृदय में—ल्लं नमः परायाहङ्कारतत्त्वात्मने नमः।
मां नमः पराय महत्तत्त्वात्मने नमः।

हृदय में दो बार दो मन्त्रों से न्यास किया जाता है।
सम्पूर्ण शरीर में—यं नमः पराय प्रकृतितत्त्वात्मने नमः।
स्वां नमः पराय पुरुषतत्त्वात्मने नमः।
हां नमः पराय परतत्त्वात्मने नमः।

यह संहारन्यास होता है। इसके अनन्तर सृष्टिन्यास करना चाहिये, जो इस प्रकार किया जाता है—

सम्पूर्ण शरीर में—हां नमः पराय परतत्त्वात्मने नमः।
स्वां नमः पराय पुरुषतत्त्वात्मने नमः।
यं नमः पराय प्रकृतितत्त्वात्मने नमः।

हृदय में—भां नमः पराय महत्तत्त्वात्मने नमः।

ल्लं नमः परायाहङ्कारतत्त्वात्मने नमः।

मस्तक पर—वं नमः परायाकाशतत्त्वात्मने नमः।

मुख में—नं नमः पराय वायुतत्त्वात्मने नमः।

हृदय में—जं नमः पराय तेजस्तत्त्वात्मने नमः।

लिङ्ग में—पीं नमः पराय जलतत्त्वात्मने नमः।

दोनों पैरों में—गों नमः पराय पृथ्वीतत्त्वात्मने नमः।

तदनन्तर सृष्टि, स्थिति तथा संहारक्रम से अक्षरन्यास करना चाहिये। सृष्टिन्यास इस प्रकार होता है—

मस्तक पर गों नमः। दोनों नेत्रों में पीं नमः। दोनों कानों में जं नमः। दोनों नासिका में नं नमः। मुख में वं नमः। हृदय में ल्लं नमः। नाभि में भां नमः। लिङ्ग में यं नमः। दोनों जानुओं में स्वां नमः एवं दोनों पैरों में हां नमः।

स्थिति न्यास की प्रक्रिया यह है—हृदय में गों नमः। नाभि में पीं नमः। लिंग में जं नमः। दोनों जानुओं में नं नमः। दोनों पैरों में वं नमः। मस्तक पर ल्लं नमः। दोनों नेत्रों में भां नमः। दोनों कानों में यं नमः। दोनों नासिका में स्वां नमः। मुख में हां नमः।

संहार न्यास की प्रक्रिया इस प्रकार है—दोनों पैरों में गों नमः। दोनों जानुओं में पीं नमः। लिंग में जं नमः। नाभि में नं नमः। हृदय में वं नमः। मुख में ल्लं नमः। दोनों नासिका में भां नमः। दोनों कानों में यं नमः। दोनों नेत्रों में स्वां नमः। मस्तक पर हां नमः।

इसके अनन्तर पुनः सृष्टि न्यास तथा स्थिति न्यास करना आवश्यक होता है।

इस न्यास में अंगुलियों का भी नियम है। मस्तक में मध्यमा, चक्षु में मध्यमा तथा तर्जनी, कानों में अंगूठा छोड़कर प्रत्येक अंगुली, नासिका में अंगुष्ठ तथा अनामिका, मुख में सभी अंगुलियों, हृदय में अंगुष्ठ तथा तर्जनी, नाभि तथा लिंग में अंगूठा तथा मध्यमा, जानु में अंगूठा छोड़ कर सभी अंगुलियों एवं दोनों पैरों में सभी अंगुलियों से न्यास करना चाहिये।

स्थितिक्रम से न्यास इस प्रकार किया जाता है—हृदय में गों नमः। नाभि में पीं नमः। लिंग में जं नमः। जानुद्वय में नं नमः। पादद्वय में वं नमः। मस्तक पर ल्लं नमः। नेत्रद्वय में भां नमः। कर्णद्वय में यं नमः। घ्राणद्वय में स्वां नमः। मुख में हां नमः।

संहारन्यास इस प्रकार होता है—पादद्वय में गों नमः। जानुद्वय में पीं नमः। लिंग

में जं नमः। नाभि में नं नमः। हृदय में वं नमः। मुख्र में ल्लं नमः। नासिकाद्वय में भां नमः। कर्णद्वय में यं नमः। नेत्रद्वय में स्वां नमः। मस्तक पर हां नमः।

इसके बाद पुनः सृष्टि तथा स्थितिन्यास करना चाहिये।

विभूतिपंजर न्यास—विभूतिपञ्जर न्यास इस प्रकार किया जाता है—

प्रथम—मूलाधार में गों नमः। लिंग में पीं नमः। नाभि में जं नमः। हृदय में नं नमः। गले में वं नमः। मुख में ल्लं नमः। क्रमशः दोनों कंधों पर भां नमः-यं नमः। क्रमशः उरुद्वय में स्वां नमः-हां नमः।

द्वितीय—कन्धे में गों नमः। नाभि में पीं नमः। कुक्षि में जं नमः। हृदय में नं नमः। क्रमशः स्तनद्वय में वं नमः, ल्लं नमः। क्रमशः पार्श्वद्वय में भां नमः, यं नमः। जानुद्वय में क्रमशः स्वां नमः, हां नमः।

तृतीय—मस्तक पर गों नमः। मुख में पीं नमः। नेत्रद्वय में क्रमशः जं नमः, नं नमः। कर्णद्वय में क्रमशः वं नमः, ल्लं नमः। नासिकाद्वय में क्रमशः भां नमः, यं नमः। कपोलद्वय में क्रमशः स्वां नमः, हां नमः।

चतुर्थ—दाहिने हाथ के मूल में गों नमः। दाहिने हाथ की तीन संधियों में क्रमशः पीं नमः, जं नमः, नं नमः। दाहिने हाथ में आगे वं नमः। क्रमशः दाहिने हाथ की पाँचों अंगुलियों में ल्लं नमः, भां नमः, यं नमः, स्वां नमः, हां नमः।

पञ्चम—बाँयें हाथ के मूल में गों नमः। बाँयें हाथ की तीनों संधियों में पीं नमः, जं नमः, नं नमः। बाँयें हाथ के आगे वं नमः। बाँयें हाथ की पाँचों अंगुलियों में ल्लं नमः, भां नमः, यं नमः, स्वां नमः, हां नमः।

षष्ठ—मस्तक में गों नमः। मस्तक के पूर्व दिशा में पीं नमः। मस्तक के दक्षिण दिशा में जं नमः। मस्तक के उत्तर दिशा में वं नमः। समस्त मस्तक में ल्लं नमः। क्रमशः बाहुद्वय में भां नमः, यं नमः। क्रमशः उरुद्वय में स्वां नमः, हां नमः।

सप्तम—मस्तक में गों नमः। नेत्रद्वय में पीं नमः। मुख में जं नमः। कण्ठ में नं नमः। हृदय में वं नमः। जठर में ल्लं नमः। मूलाधार में भां नमः। लिङ्ग में यं नमः। जानुद्वय में स्वां नमः। पादद्वय में हां नमः।

अष्टम—श्रोत्रद्वय में गों नमः। गण्डद्वय में पीं नमः। अंसद्वय में जं नमः। स्तनद्वय में नं नमः। पार्श्वद्वय में वं नमः। लिंग में जं नमः। उरुद्वय में भां नमः। जानुद्वय में यं नमः। जंघाद्वय में स्वां नमः। पादद्वय में हां नमः।

इसके अनन्तर विष्णुप्रकरण में उल्लिखित विष्णुमन्त्र-विधि के अनुसार मूर्त्तिपञ्जर न्यास करके पुनः मूर्त्तिपंजरोक्त सृष्टि तथा स्थिति न्यास करना चाहिये।

ततः किरीटमन्त्रेण व्यापकं विधाय वेणुबिल्वादिमुद्राः प्रदर्श्य ॐ नमः सुदर्शनाय अस्त्राय फडिति मन्त्रेण दिग्बन्धनं कुर्यात्॥१५॥

तत्पश्चात् नारायण मन्त्रोक्त किरीट मन्त्र से व्यापक न्यास करके वेणु, बिल्वादि मुद्रायें दिखलाकर 'ॐ नमः सुदर्शनाय अस्त्राय फट्' मन्त्र द्वारा दिशाओं का बन्धन करना चाहिये।।१५।।

ततो ध्यायेत्—

स्मरेद् वृन्दावने रम्ये मोहयन्तमनारतम्।
गोविन्दं पुण्डरीकाक्षं गोपकन्याः सहस्रशः॥१६॥
आत्मनो वदनाम्भोजे प्रेरिताक्षिमधुव्रताः।
पीड़िताः कामबाणेन चिरमाश्लेषणोत्सुकाः॥१७॥
मुक्ताहारलसत्पीनतुङ्गस्तनभरानताः।
स्रस्तधमिल्लवसना मदज्वलितभाषणाः॥१८॥
दन्तपङ्क्तिप्रभोद्भासि स्पन्दमानाधराञ्चिताः।
विलोभयन्ती विविधैर्विभ्रमैर्भावगर्भितैः॥१९॥

तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करना चाहिये—सुरम्य वृन्दावन में गोविन्द के मुखकमल का अपने नयनरूपी मधुकर से प्रेरणकारिणी, कामबाण से पीड़ित होकर दीर्घ काल से आलिंगन के लिये तरसती, मुक्ताहार से उद्भासित स्थूल स्तनों के भार से झुकी हुई, विखरे केशों वाली तथा विखरे वसनों वाली, मदभरे अटपट वाक्य बोलने वाली, दन्तपंक्तियों की प्रभा से उद्भासित हिलते होठों वाली, एक ही साथ विविध (कृष्णविछोहजनित) भावों से गर्भित विभ्रम द्वारा विलोभनकारिणी सहस्र-सहस्र गोपकन्याओं को सदा मोहित करने वाले पुण्डरीकाक्ष गोविन्द का मैं ध्यान करता हूँ।।१६-१९।।

फुल्लेन्दीवरकान्तिमिन्दुवदनं वर्हावतंसप्रियं,
श्रीवत्साङ्कमुदारकौस्तुभधरं पीताम्बरं सुन्दरम्।
गोपीनां नयनोत्पलार्चिततनुं गोगोपसंघावृतं
गोविन्दं कलवेणुवादनपरं दिव्याङ्गभूषं भजे॥२०॥

विकसित कमल के समान कान्तिमान मुख वाले, मयूर के पुच्छ से रचित शिरोभूषण-प्रिय, श्रीवस्त से सुशोभित चौड़े वक्षःस्थल वाले, कौस्तुभ मणि धारण करने वाले, सुन्दर पीत वस्त्र धारण करने वाले, गोपीगण के नयनकमलों द्वारा अर्चित शरीर वाले, गो तथा गोपियों द्वारा घिरे हुये, मधुर गम्भीर वंशीध्वनि करने में तत्पर, दिव्य अंगभूषणों से युक्त गोविन्द का मैं भजन करता हूँ।।२०।।

अथवा क्रमदीपिकोक्तरासध्यानेन ध्यायेत्। यथा—

स्थलनीरजसूनपरागभृता लहरीकणजालभरेण सता।
मरुता परितापहृताध्युषिते यमुना पुलिने विमले ॥२१॥
अशरीरनिशातशरोन्मथितप्रमदाशतकोटिभिराकुलिते।
उडुनाथकरैर्विशदीकृतदिग्प्रसरे विचरेद् भ्रमरीनिकरे ॥२२॥
विद्याधरकिन्नरसिद्धसुरैर्गन्धर्वभुजङ्गमचारणकैः ।
दारोपहितैः सुविमानगतैः स्वस्थैरभिवृष्टसुपुष्पचयैः ॥२३॥
इतरेतरबद्धकरप्रमदागणकल्पितरासविहारविधौ ।
मणिशङ्कुगमप्यमुना वपुषा बहुधा विहितं स्वकदिव्यतनुम् ॥२४॥
सुदृशामुभयो पृथगन्तरगं दयितागलबद्धभुजद्वितयम्।
निजसङ्गविज्रम्भदनङ्गशिखिज्वलिताकुलमुत्पलकालियुजाम् ॥२५॥
विविधश्रुतिभिन्नमनोज्ञतरस्वरसप्तकमूर्च्छनतालगणैः।
भ्रममाणममूभिरुदारमणिस्फुटमण्डलशिञ्जितचारुतरम् ॥२६॥
इति भिन्नतनुं मणिभिर्मिलितं तपनीयमयैरिव मारकतम्।
मणिनिर्मितमध्यमशङ्कुलसद्विपुलारुणपङ्कजमध्यगतम् ॥२७॥
अतसीकुसुमाभतनुं तरुणं तरुणारुणपद्मपलाशदृशाम्।
नवपल्लवचित्रसुगुच्छलसच्छिखिपिच्छपिनद्धकचप्रचयम् ॥२८॥
चटुलभ्रुवमिन्दुसमानमुखं मणिकुण्डलमण्डितगण्डयुगम्।
शशरक्तसदृशदशनच्छदनं मणिराजदनेकविधाभरणम् ॥२९॥
असनप्रसवच्छदनज्ज्वलसद्विलसद्वसनं सुविलासभुवम्।
नवविद्रुमभङ्गकराङ्घ्रितलं भ्रमराकुलदामविराजिभुजम् ॥३०॥
तरुणीकुचयुक्परिरम्भमिलद् घुसृणारुणवक्षसमुक्षगतिम्।
शिवरेणुसमीरितगानपरं स्मरविह्वलितं भुवनैकगुरुम् ॥३१॥

अथवा क्रमदीपिका में कथित रासध्यान के द्वारा ध्यान करना चाहिये। इस ध्यान का अर्थ यह है कि स्थलपद्मजात परागमिश्रित यमुना की लहरीकणों के समूह से परिपूर्ण परितापहारी निर्मल वायु द्वारा अध्युषित, अशरीरी काम के तीक्ष्ण शर द्वारा उन्मथित, शतकोटि प्रमदाओं द्वारा आकुलित, नक्षत्रनाथ चन्द्र की किरणों से उज्ज्वल, दिग-दिगन्त में विचरणशील भ्रमरीसमूह-विशिष्ट आकाशस्थ विमानगत चतुर्दिक पुष्पवर्षणकारी अपनी-अपनी स्त्री के साथ घिरे हुये विद्याधर, किन्नर, सिद्ध तथा देवगण तथा गन्धर्व, भुजंगम तथा चारणगण द्वारा अध्युषित विशाल निर्मल यमुना-पुलिन में परस्पर बद्धहस्त प्रमदागण द्वारा कल्पित रासविहार के अनुष्ठान में इसी देह द्वारा

मणिशंकु-भूषित अपने इसी निज देह के समान अनेक देह की रचना करने वाले, गोपी तथा कृष्ण दोनों के भ्रमरयुक्त कमल के समान पृथक्-पृथक् व्यवधानगत निज संग द्वारा प्रस्फुट कामदेवरूप अग्निशिखा के चंचल भुजद्वय द्वारा गोपियों के गले को आवेष्टित करने वाले, विविध श्रवणेन्द्रियभेदक मनोज्ञतर स्वरसप्तक की मूर्च्छना तालों से रंजित, गोपीगण के साथ भ्रममाण, उत्कृष्ट मणियों द्वारा समुज्ज्वल भूषणों से निकलते मनोहर ध्वनि वाले, मरकत मणि के समान स्वर्णमय मणियों से मण्डित विभिन्न देह धारण करने वाले, मणिनिर्मित मध्य शंकु द्वारा उद्भासित बृहद् रक्त कमल के मध्यवर्त्ती, अतसी पुष्पवर्ण के समान वर्णमय देह वाले, तरुण सूर्य के समान पद्म पलाश नेत्रों वाले, नवपल्लव के समान मयूरपिच्छ से बद्ध केशों वाले, चंचल चन्द्रमा के समान मुख वाले, मणिमय कुण्डलमंडित गण्डद्वय वाले, शश तथा रक्त के सदृश दन्त तथा ओष्ठ वाले, मणिसमूह से उज्ज्वल आभरणों को धारण करने वाले, असनजात आच्छादन द्वारा उज्ज्वल वसन धारण करने वाले, सुविलासभूमि नवविद्रुमभंगकर कर-पादतलधारी, भ्रमरव्याकुल रज्जुशोभित हस्तधारी, तरुणियों के स्तनद्वय के आलिंगन से जिनके वक्ष में कुंकुम लिप्त है ऐसे उक्ष गति (धीर गति वाले) मंगलकारी वेणु से निकले गान में निरत, जगत् के एकमात्र गुरु श्रीकृष्ण का मैं ध्यान करता हूँ।।२१-३१।।

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्यार्घ्यं संस्थाप्य वैष्णवोक्तपीठमन्वन्तां पीठपूजां कुर्यात्।।३२।।

इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचार से पूजन करके, विशेषार्घ्य की स्थापना करने के उपरान्त वैष्णवोक्त पीठमन्त्रों से पीठपूजा करनी चाहिये।।३२।।

अथ पूजायन्त्रम्

षट्कोणगर्भमष्टदलपद्मं विलिख्य षट्कोणमध्ये ससाध्यं कामबीजं विलिख्य वक्ष्यमाणाष्टदशाक्षरमन्त्रस्य शेषसप्तदशाक्षरैस्तद्वेष्टयेत्। षट्-कोणस्य पूर्वरक्षोऽनिलकोणेषु श्रीबीजं अपरकोणेषु मायाबीजं षट्सन्धिषु कृष्णाय नमः इति षड्वर्णान्, पूर्वादिकेशरेषु कामदेवाय विद्महे पुष्पबाणाय धीमहि तन्नोऽनङ्गः प्रचोदयादिति कामगायत्र्यास्त्रीणि त्रीण्यक्षराणि, पूर्वादिपत्रेषु नमः कामदेवाय सर्वजनप्रियाय सर्वजनसम्मोहनाय ज्वल ज्वल प्रज्वल सर्वजनस्य हृदयं मम वशं कुरु कुरु स्वाहा इति मालामन्त्रस्य षट् षट् अक्षराणि लिखेत्। तद्बहिर्मातृकया दलानि वेष्टयेत्। चतुरस्त्रे दिक्षु श्रीबीजं विदिक्षु मायाबीजं तद्बहिरष्टवज्राणि लिखेत्।।३३।।

अब श्रीकृष्ण का पूजायन्त्र कहा जा रहा है। षट्कोण में अष्टदल कमल बनाकर षट्कोण के मध्य में ससाध्य (अर्थात् अमुक साधक को अमुक सिद्धि हो) तथा कामबीज लिख कर वक्ष्यमाण १८ अक्षर के शेष १७ अक्षर द्वारा ससाध्य कामवीज को आवेष्टित करना चाहिये। षट्कोण के पूर्व दिशा के कोण में, नैर्ऋत्य कोण में तथा वायु कोण में श्रीबीज (श्रीं), अवशिष्ट तीन कोणों में मायाबीज (ह्रीं) लिखना चाहिये। पूर्वादि केशरसमूह में 'कामदेवाय विद्महे पुष्पबाणाय धीमहि तन्नोऽनङ्गः प्रचोदयात्' इस कामगायत्री के तीन-तीन अक्षरों को लिखना चाहिये। पूर्वादि पत्रसमूह में 'नमः कामदेवा यसर्वजनप्रि यायसर्वजन सम्मोहनायज्व लज्वलप्रज्वल सर्वजनस्यहृ दयंममवशं कुरुकुरु स्वाहा—इस मालामन्त्र के छः-छः अक्षरों को लिखना चाहिये। उसके बाहरी भाग में मातृका वर्णों द्वारा दलों का वेष्टन करना चाहिये। चतुरस्त्र दिक्समूह में श्रीबीज तथा विदिक्समूह में मायाबीज तथा उसके बाहरी भाग में आठ वज्र बनाना चाहिये।।३३।।

यथा—

विलिप्य गन्धपङ्केन लिखेदष्टदलाम्बुजम् ।
कर्णिकायान्तु षट्कोणं ससाध्यं तत्र मन्मथम् ।।३४।।

कहा गया है कि ताम्रादि पात्र में गन्धपंक का लेपन करके अष्टदल का कमल बनाकर उसकी कर्णिका में साधक के नाम के साथ षट्कोण बनाने के पश्चात् उसमें कामबीज (क्लीं) लिखना चाहिये।।३४।।

शिष्टैस्तं सप्तदशभिरक्षरैर्वेष्टयेत् स्मरम् ।
प्राग्रक्षोऽनिलकोणेषु प्रियं शिष्टेषु संविदम् ।।३५।।

अष्टादशाक्षर मन्त्र के सत्रह अक्षरों द्वारा (प्रथम अक्षर) कामबीज का वेष्टन करना चाहिये। इस षट्कोण के पूर्व दिक् में, नैर्ऋत्य तथा वायु कोण में श्रीबीज तथा अवशिष्ट तीन कोणों में संविद (मायाबीज—ह्रीं) लिखना चाहिये।।३५।।

षडक्षरं षट्सन्धिषु केशरेषु त्रिशत्रिशः ।
विलिखेत् स्मरगायत्रीं मालामन्त्रं दलाष्टके ।
षट्शः संलिख्य तद्वाहे वेष्टयेन्मातृकाक्षरैः ।।३६।।

इस षट्कोण की छः सन्धियों में 'क्लीं कृष्णाय नमः' मन्त्र के एक-एक अक्षरों को लिखने के पश्चात् इसके पूर्व दिशा से प्रारम्भ करके एक-एक केशर में कामगायत्री के तीन-तीन अक्षरों को लिखना चाहिये। आठ दलों में से हर एक दल के मध्य में मालामन्त्र के छः-छः अक्षरों को अंकित करके दल के बाहर मातृकावर्ण द्वारा दल के अग्रभाग का वेष्टन करना चाहिये।।३६।।

भूबिम्बञ्च लिखेद्वाह्ये श्रीमाये दिग्विदिक्ष्वपि।
भूगृहं चतुरस्रं स्यादष्टवज्रविभूषितम् ॥३७॥

उसके बाहर चौकोर भूगृह बनाकर उसके पूर्वादि चारो दिशाओं में श्रीबीज तथा चारों आग्नेयादि कोणों में मायाबीज (ह्रीं) लिखना चाहिये। भूगृह के चतुरस्र को आठ वज्रचिह्नों से विभूषित करना चाहिये।।३७।।

मालामन्त्रमाह शारदायाम्—

नमोऽन्ते कामदेवाय वदेत् सर्वजनं ततः।
प्रियाय सर्ववर्णान्ते जनसम्मोहनाय च ॥३८॥
ज्वलद्वयप्रज्वलार्णान् वदेत्सर्वजनस्य च।
हृदयं मम शब्दान्ते वशं कुरुयुगं शिरः।
मालामनुरयं साष्टचत्वारिंशद्भिरक्षरैः ॥३९॥

शारदातिलक तन्त्र में कामदेव का मालामन्त्र इस प्रकार कहा गया है। 'नम:' शब्द के पश्चात् 'कामदेवाय' कहे। तदनन्तर 'सर्वजनप्रियाय' तथा 'सर्व' के अनन्तर 'जनसम्मोहनाय' तथा 'ज्वल ज्वल प्रज्वल' कहे; तदनन्तर 'सर्वजनहृदयं' तथा 'मम' शब्द के अन्त में 'वशं कुरुकुरु' तथा शिर अर्थात् 'स्वाहा' कहे। तदनुसार मालामन्त्र का उद्धार इस प्रकार होता है—नम: कामदेवाय सर्वजनप्रियाय सर्वजनसम्मोहनाय ज्वल ज्वल प्रज्वल सर्वजनस्य हृदयं मम वशं कुरु कुरु स्वाहा। यह अड़तालीस अक्षरों वाला मालामन्त्र कहा गया है।।३८-३९।।

एतद्यन्त्रमष्टादशाक्षरद्वादशाक्षरद्वाविंशत्यक्षरदशाक्षरचतुर्दशाक्षरैकाक्षरमन्त्राणामन्येषान्तु बालगोपालवत् सामान्यमेव यन्त्रमिति॥४०॥

यह यन्त्र अट्ठारह, बारह, बाईस, दश एवं चौदह अक्षर वाले मन्त्रों के लिये कहा गया है; शेष अन्य श्रीकृष्णमन्त्रों के यन्त्र बालगोपाल मन्त्र वाले यन्त्र के समान ही होते हैं।।४०।।

यत् तु—

पद्ममष्टपलाशन्तु चतुरस्रं सुलक्षणम्।
चतुर्द्वारसमायुक्तं कामगर्भितकर्णिकम्।
सामान्यं यन्त्रमुद्दिष्टमष्टादशाक्षरं शृणु ॥४१॥

जो यह कहा गया है कि एक अष्टदल पद्म, उसके बाहर सुलक्षण चार दरवाजों से युक्त चतुरस्र तथा कामबीज मध्य कर्णिका में रहे, वह सामान्य यन्त्र के लिये कहा गया है। अब अट्ठारह अक्षरों वाले यन्त्र को कहते हैं।।४१।।

चतुरस्रं चतुर्द्वारं पद्ममष्टदलान्वितम्।
षट्कोणगर्भकामाख्यं सप्तदशार्णवेष्टितम्।
षडक्षरं मनुवरं षट्कोणे विलिखेत्ततः ।।४२।। इति।

षट्कोण के मध्य में सत्रह अक्षरों से वेष्टित काम बीजयुक्त आठ दलों के पद्म में चार द्वारों वाला चतुरस्र बनाये। इसके पश्चात् षट्कोण में श्रेष्ठ षडक्षर मन्त्र को लिखे।।४२।।

गौतमीये—अष्टादशाक्षरेतरमन्त्रमात्राष्टादशाक्षरमन्त्रयोर्विशेषयन्त्रं यदुक्तं तदशक्तविषयमन्यथा तापिन्यादिविरोधः स्यादिति साम्प्रदायिकाः।।४३।।

गौतमीय तन्त्र में अट्ठारह अक्षरों वाले मन्त्र के अतिरिक्त अन्य मन्त्र तथा अट्ठारह अक्षरों वाले अन्य मन्त्र के यन्त्र का उल्लेख है। साम्प्रदायिकों का कथन है कि वह मन्त्ररचना (प्रथम मन्त्र) में अशक्त-विषयक है; अन्यथा तापिन्यादि के साथ विरोध होगा।।४३।।

ततः पुनर्ध्यात्वावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय देवशरीरे दशाङ्गन्यासपञ्चाङ्गन्यासक्रमेण पूजयेत्। ततः मुखे ॐ वेणवे नमः। एवं हृदि वनमालां कौस्तुभं श्रीवत्सं सम्पूज्य पुनः पुष्पाञ्जलिपञ्चकं दत्त्वा शुक्लचन्दनपङ्किलां श्वेततुलसीं रक्ततुलसीञ्च (रक्तचन्दनपङ्किलां रक्ततुलसीञ्च) मूलेन देवस्य दक्षिणवामपादयोः दद्यात्। एवं हृदये करवीरद्वयेन मूर्ध्नि पद्मद्वयेन सम्पूज्य तुलसीद्वयं करवीरद्वयं पद्मद्वयं शिरसि दत्त्वा सर्वाणि पुष्पाणि सर्वतनौ दद्यात्।।४४।।

तदनन्तर पुनः ध्यान करके, आवाहन से लेकर पञ्चपुष्पाञ्जलि निवेदन तक का समस्त कृत्य सम्पन्न करके देवशरीर में दशांग तथा पञ्चांग न्यास करके पूजन करना चाहिये। तदनन्तर मुख में 'ॐ वेणवे नमः' मन्त्र से पूजन करके नमः से अन्त होने वाले मन्त्र से हृदय में वनमाला, कौस्तुम तथा श्रीवत्स का पूजन करना चाहिये। पुनः पाँच बार पुष्पाञ्जलि देकर सफेद चन्दन से सनी श्वेत तुलसी (तुलसी श्वेत नहीं होती; अतः श्वेत चन्दन से लिपटी तुलसी से यहाँ तात्पर्य है) तथा रक्त तुलसी (रक्त चन्दन से लिपटी तुलसी से तात्पर्य है) को मूल मन्त्र से (कृष्ण) देवता के दक्षिण पैर तथा वाम पैर पर अर्पित करना चाहिये। इसी प्रकार हृदय पर कनेर के दो पुष्पों से तथा मस्तक पर दो कमलों से पूजन करने के बाद मस्तक पर दो तुलसी, दो कनेर तथा दो कमल चढ़ाकर समस्त पुष्पों से सम्पूर्ण शरीर का पूजन करना चाहिये।।४४।।

ततः आवरणपूजा—पूर्वे ॐ दामाय नमः। एवं दक्षिणे सुदामाय नमः।

पश्चिमे वसुदामाय। उत्तरे किङ्किण्यै। ततः केशरेष्वग्निनैर्ऋतवाय्वीशानेषु चतुर्दिक्षु च आचक्राय स्वाहेत्यादिना पञ्चाङ्गमन्त्रेण सम्पूज्य पत्रेषु पूर्वादितः ॐ रुक्मिण्यै नमः। एवं सत्यभामायै, नाग्नजित्यै, मित्रविन्दायै, सुनन्दायै, सुलक्षणायै, जाम्बवत्यै, सुशीलायै; पत्राग्रेषु पूर्वादितो वसुदेवं देवकीं नन्दं यशोदां बलभद्रं सुभद्रां गोपान् गोपीः; तद्बहिर्मध्ये पूर्वादिषु च मन्दारसन्तानपारिजातकल्पवृक्षहरिचन्दनवृक्षान् तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च सम्पूज्य कृष्णाष्टकं पूजयेत्। ॐ श्रीकृष्णाय नमः; एवं वासुदेवाय, देवकीनन्दनाय, नारायणाय, यदुश्रेष्ठाय, वार्ष्णेयाय, धर्मसंस्थापनाय, असुराक्रान्तभारहारिणे। अशक्तश्चेदङ्गेन्द्राणि वज्रादीन् कृष्णाष्टिकञ्च पूजयेत्। तत्राप्यशक्तश्चेत् कृष्णाष्टकेनैव पूजयेत्॥४५॥

अब आवरण पूजा करनी चाहिये। पूर्व में—ॐ दामाय नमः, दक्षिण में—ॐ सुदामाय नमः, पश्चिम में—ॐ वासुदेवाय नमः, उत्तर में—ॐ किकिंण्यै नमः से पूजन करके केशरसमूह में अग्नि, नैर्ऋत्य, वायु तथा ईशाण कोण में चारो ओर ॐ आचक्राय स्वाहा इत्यादि पञ्चांग मन्त्र द्वारा पूजन करने के उपरान्त पत्रसमूह में पूर्व दिशादि क्रम से ॐ रुक्मिण्यै नमः, ॐ सत्यभामायै नमः, ॐ नाग्नजित्यै नमः, ॐ मित्रविन्दायै नमः, ॐ सुनन्दायै नमः, ॐ सुलक्षणायै नमः, ॐ जाम्बवत्यै नमः, ॐ सुशीलायै नमः मन्त्र से तत्तत् देवियों का पूजन करके पत्र के अग्र में पूर्व दिशाक्रम से वसुदेव, देवकी, नन्द, यशोदा, बलभद्र, सुभद्रा, गोपों तथा गोपियों की पूजा करनी चाहिये। बहिर्भाग में मध्य तथा पूर्वादि दिशाक्रम से मन्दार, सन्तान, पारिजात, कल्पवृक्ष, हरिचन्दनादि वृक्ष का पूजन करके उसके भी बाहर इन्द्रादि लोकपाल तथा उनके वज्रादि अस्त्रों का पूजन करके कृष्णाष्टक का पूजन करना चाहिये। जैसे—ॐ श्रीकृष्णाय नमः, ॐ वासुदेवाय नमः, ॐ देवकीनन्दनाय नमः, ॐ नारायणाय नमः, ॐ यदुश्रेष्ठाय नमः, ॐ वार्ष्णेयाय नमः, ॐ धर्मसंस्थापनाय नमः, ॐ असुरभाराक्रान्तभारहारिणे नमः कहकर पूजन करना चाहिये। यदि इतनी पूजा करने में अशक्त हो तो अंग देवता एवं इन्द्रादि देवों (लोकपालों की) की तथा उनके वज्रादि अस्त्रों की पूजा करनी चाहिये। यदि इतना करने में भी अशक्त हो तो केवल कृष्णाष्टक की ही पूजा करनी चाहिये।।४५।।

यथा गौतमीये—

अथवाङ्गदिक्पतिभिस्तदस्त्रैरपि चार्चयेत्।
एवं वाभ्यर्चयन् कृष्णं काममुक्तोः सभाजनम्॥४६॥

गौतमीय तन्त्र में कहा भी है कि—अथवा अंगदेवता तथा दिक्पतियों एवं उनके अस्त्रों के साथ कृष्ण की पूजा करे। अथवा कृष्ण अथवा कृष्णाष्टक की ही अर्चना करने से वह साधक काम तथा मुक्ति का पात्र हो जाता है।।४६।।

अपिकारात् कृष्णाष्टकपरिग्रहः। एवमिति कृष्णं कृष्णाष्टकं अर्चयन् वेत्यर्थः। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्मसमापयेत्। अस्य पुरश्चरणं दशलक्षजपः।।४७।।

श्लोक में 'अपि' शब्द से कृष्णाष्टक का तात्पर्य है। कृष्ण अथवा कृष्णाष्टक के अर्चन से यहाँ तात्पर्य ग्रहण करना चाहिये। तत्पश्चात् धूपदान से विसर्जन-पर्यन्त कार्य करना चाहिये। इसका पुरश्चरण दश लाख जप से सम्पन्न होता है।।४७।।

यथा निबन्धे—

दशलक्षमक्षयफलप्रदं मनूं
प्रतिजप्य निर्मलमतिर्दशाक्षरम्।
जुहुयात् सिताज्यमधुभिः
प्लुतैर्नवैररुणाम्बुजैर्हुतवहे दशायुतम्।।४८।। इति।

जैसा कि निबन्ध में कहा है कि विशुद्ध मति वाले साधक को अक्षय फलप्रद दश अक्षरों वाले मन्त्र का जप करके शर्करा, घृत तथा मधु से सने नये लाल कमलों द्वारा अग्नि में दश हजार होम करना चाहिये।।४८।।

मन्त्रान्तरं सनत्कुमारतन्त्रे—

श्रीशक्तिमारपूर्वश्च शक्तिश्रीमारपूर्वकः।
कामशक्तिरमापूर्वो दशार्णो मनवस्त्रयः।।४९।।

सनत्कुमार तन्त्र में कहा है कि दशाक्षर मन्त्र तीन प्रकार के होते हैं—श्रीपूर्वक, शक्तिपूर्वक तथा कामपूर्वक। अर्थात् प्रथम मन्त्र होता है—श्रीं ह्रीं क्लीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा। द्वितीय मन्त्र होता है—माया, श्री तथा कामपूर्वक अर्थात् ह्रीं श्रीं क्लीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा एवं तृतीय मन्त्र होता है—काम, माया तथा श्रीपूर्वक अर्थात् क्लीं ह्रीं श्रीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा।।४९।।

अस्यार्थः—उक्तदशाक्षरो यदि श्रीमायाकामपूर्वकः, मायाश्रीकामपूर्वकः काममायारमापूर्वकश्च वा भवति तदा त्रयो मन्त्रास्त्रयोदशाक्षरा भवन्ति। एतेषां पूजा तु प्रातःकृत्यादिवैष्णवोक्तपीठन्यासान्तं विधाय, शिरसि नारदाय ऋषये नमः, मुखे विराट् गायत्री छन्दसे नमः, हृदि श्रीकृष्णाय देवतायै नमः इति विन्यस्य, आचक्राय स्वाहा अङ्गुष्ठाभ्यां नमः इत्यादिना

आचक्राय स्वाहा हृदयाय नम इत्यादिना च कराङ्गन्यासौ कृत्वा, किरीटमन्त्रेण व्यापकं कृत्वा, यथाशक्ति मुद्रां बद्ध्वा, ॐ नमः सुदर्शनाय अस्त्राय फड़िति दिग्बन्धनं कृत्वा ध्यायेत्। आद्ये मनौ दशाक्षरवद्ध्यानम्। द्वितीये रत्नाभिषेकवत्।।५०।।

इसका तात्पर्य यह है कि 'गोपीजनवल्लभाय स्वाहा' यह मन्त्र यदि श्री, माया तथा कामबीज से युक्त हो अथवा माया, श्री तथा काम से युक्त हो अथवा काम, माया, रमा से युक्त हो तब यह तीन प्रकार का त्रयोदशाक्षर मन्त्र हो जाता है। इसकी पूजा में प्रातःकृत्यादि से लेकर वैष्णव ग्रन्थों में कही गयी पीठन्यास विधि-पर्यन्त समस्त कृत्य सम्पन्न करके मूलोक्त ॐ नारदाय ऋषये नमः से शिर पर, विराट् गायत्रीछन्दसे नमः से मुख में एवं श्रीकृष्णदेवतायै नमः से हृदय में ऋष्यादि न्यास करके ॐ आचक्राय स्वाहा अंगुष्ठाभ्यां नमः इत्यादि प्रकार से करन्यास करके तथा ॐ आचक्राय स्वाहा हृदयाय नमः इत्यादि प्रकार से अंगन्यास करके, किरीट मन्त्र द्वारा व्यापक न्यास करना चाहिये। तदनन्तर यथाशक्ति मुद्राबन्धन करके 'ॐ नमः सुदर्शनाय फट्' मन्त्र से दिग्बन्धन करने के उपरान्त ध्यान करना चाहिये। प्रथम मन्त्र में वैसा ही ध्यान करना चाहिये, जैसा कि दशाक्षर मन्त्र प्रकरण में बताया गया है। द्वितीय मन्त्र अर्थात् 'ह्रीं श्रीं क्लीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा' में बीस अक्षर मन्त्र प्रकरण में लिखे अनुसार ध्यान करना चाहिये। तृतीय मन्त्र हेतु ध्यान आगे कहा गया है।।५०।।

शङ्खचक्रधनुर्बाणपाशाङ्कुशधरोऽरुणः ।
वेणुं धमन्धृतं दोर्भ्यां ध्येयः कृत्वा दिवाकरे ।।५१।।

सूर्यमण्डल में अरुण वर्ण, दोनों हाथों से वेणुवादन करते हुये (अर्थात् वेणु पकड़ कर बजाते हुये) एवं शंख, चक्र, धनुष, वाण, पाश तथा अंकुशधारी श्रीकृष्ण का ध्यान करना चाहिये।।५१।।

गौतमीये तु अस्यापि दशाक्षरवद् ध्यानम्। ततो मानसपूजार्घ्यस्थापन-वैष्णवोक्तपीठपूजापुनर्ध्यानावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय, पूर्वोक्तवेण्वादिपूजां विधायावरणाणि पूजयेत्। अस्यावरणाणि च अङ्गानि इन्द्रादयो वज्रादयश्च। ततः कृष्णाष्टकेन सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। एतेषां पुरश्चरणं पञ्चलक्षजपः।।५२।।

गौतमीयतन्त्र में कहा गया है कि इसका ध्यान भी दशाक्षर मन्त्रध्यान के समान ही करना चाहिये। ध्यान के पश्चात् मानसपूजा, विशेषार्घ्य-स्थापन, वैष्णव मतानुरूप पीठपूजा, पुनः ध्यान तथा आवाहन से पञ्चपुष्पाञ्जलि दान-पर्यन्त कृत्य को सम्पन्न

करके पूर्वोक्त वेणु-प्रभृति का पूजन करने के उपरान्त आवरणसमूह का पूजन करना चाहिये। इनका आवरण है—षडङ्ग, इन्द्रादि लोकपाल तथा वज्रादि अस्त्र। इसके अनन्तर कृष्णाष्टक-सहित कृष्ण की पूजा करने के उपरान्त धूपदान से विसर्जन-पर्यन्त कर्म करना चाहिये। पाँच लाख जप से इस मन्त्र का पुरश्चरण होता है।।५२।।

पञ्चलक्षं जपेत्तावदयुतं पायसेन तु।
जुहुयात् संस्कृते वह्नौ मन्त्री सर्वार्थसिद्धये ।।५३।।

साधक को सर्वार्थसिद्धि हेतु मन्त्र का पाँच लाख जप करने के पश्चात् शुद्ध की गई अग्नि में पायस से दश हजार होम करना चाहिये।।५३।।

मन्त्रान्तरम्—

कृष्णाय पदमाभाष्य गोविन्दाय ततः परम्।
गोपीजनपदस्यान्ते वल्लभाय द्विठावधिः।
कामबीजादिराख्यातो मनुरष्टादशाक्षरः ।।५४।।

अब कृष्ण का अट्ठारह अक्षरों का मन्त्र कहते हैं। 'कृष्णाय' कहकर उसके पश्चात् 'गोविन्दाय गोपीजन' पद के बाद 'वल्लभाय' कहकर अन्त में द्विठ (स्वाहा) कहना चाहिये। इसके आरम्भ में कामबीज लगाया जाता है; अतएव मन्त्रोद्धार होता है—क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा। यह कृष्ण का अष्टादशाक्षर मन्त्र कहा गया है।।५४।।

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादिवैष्णवोक्तपीठमन्वन्तं विन्यस्य ऋष्यादीन् न्यसेत्। शिरसि नारायणाय ऋषये नमः। एवं मुखे गायत्री छन्दसे नमः। हृदि कृष्णाय देवतायै, गुह्ये क्ली बीजाय, पादयोः स्वाहाशक्तये। ततः प्रणवपुटितमन्त्रं त्रिशः करयोर्व्यापिय्य पञ्चाङ्गकरन्यासं कुर्यात्। यथा– क्लीं कृष्णाय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, गोविन्दाय तर्जनीभ्यां स्वाहा, गोपीजन मध्यमाभ्यां वषट्, वल्लभाय अनामिकाभ्यां हुं, स्वाहा कनिष्ठिकाभ्यां फट्। ततो मूलेन मूर्द्धादिपादपर्यन्तं त्रिशो व्यापप्य प्रणवेन सकृद्व्यापय्य च मन्त्रन्यासं कुर्यात्। मूर्ध्नि ललाटे भ्रूमध्ये कर्णयोश्चक्षुषोर्घ्राणयोर्वदने ग्रीवायां हृदि नाभौ कट्यां लिङ्गे जानुनोः पादयोः एषु स्थानेषु प्रत्येकं मन्त्रवर्णान् नमोऽन्तान् न्यसेत्। शिरसि प्रणवञ्च न्यसेत्। ततः करन्यास-वदङ्गन्यासं कृत्वा दशतत्त्वमूर्त्तिपञ्जरन्यासौ विधाय किरीटमन्त्रेण व्यापकं कृत्वा मुद्राप्रदर्शनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं दशाक्षरवत् कृत्वा एत-न्मन्त्रोक्ताङ्गन्यासमन्त्रैरभ्यर्च्य पुनः पुष्पाञ्जलिपञ्चकं दत्त्वा वेणुपूजादि-विसर्जनान्तं दशाक्षरवत् कुर्यात्। अस्य पुरश्चरणं दशाक्षरवत्।।५५।।

अब इस मन्त्र की पूजापद्धति कहते हैं। प्रातःकृत्यादि करके वैष्णवमतानुरूप पीठपूजादि सम्पन्न करके न्यास करना चाहिये। इस क्रम में पहले ऋष्यादि न्यास इस प्रकार किया जाता है—मस्तक में ॐ नारायणाय ऋषये नमः, मुख में गायत्रीछन्दसे नमः, हृदय में कृष्णायै देवतायै नमः, गुह्य में क्लीं बीजाय नमः, पैरो में स्वाहा शक्तये नमः। तत्पश्चात् प्रणव से पुटित (आगे तथा अन्त में प्रणव लगाकर) मन्त्र द्वारा करद्वय में तीन बार न्यास करके पञ्चाङ्ग करन्यास करना चाहिये; जैसे कि क्लीं कृष्णाय अंगुष्ठाभ्यां नमः, गोविन्दाय तर्जनीभ्यां स्वाहा, गोपीजन मध्यभ्यामां वषट्, वल्लभाय अनामिकाभ्यां हुं, स्वाहा कनिष्ठाभ्यां फट्। इसके अनन्तर मूल मन्त्र से मस्तक से पैर-पर्यन्त तीन बार व्यापक न्यास करके, प्रणव द्वारा भी एक बार व्यापकन्यास करके मन्त्रन्यास करना चाहिये। मस्तक, ललाट, भ्रूमध्य, कर्णद्वय, चक्षुद्वय, नासिकाद्वय, मुख, ग्रीवा, हृदय, नाभि, कमर, लिंग, जानुद्वय तथा पादद्वय में से प्रत्येक स्थान पर (अंगों पर) मन्त्र के प्रत्येक वर्ण के अन्त में नमः लगाकर न्यास करना चाहिये। मस्तक में प्रणव का न्यास करना चाहिये। यह सब करने के बाद करन्यास की ही तरह अंगन्यास के पश्चात् दशतत्त्वन्यास एवं मूर्त्तिपंजरन्यास भी करने के उपरान्त किरीट मन्त्र द्वारा व्यापक न्यास करके मुद्राप्रदर्शन से पुष्पांजलिदान-पर्यन्त समस्त विधान सम्पन्न (१२ अक्षर मन्त्रविधानानुसार) करने के पश्चात् मन्त्रोक्त अंगन्यास मन्त्र द्वारा अर्चना करके पुनः पाँच पुष्पाञ्जलि देकर वेणुपूजन से लेकर विसर्जन-पर्यन्त समस्त विधान करना चाहिये। (यह दशाक्षर मन्त्र विधि में लिखे अनुसार करना चाहिये)। उसी दशाक्षर विधान में लिखी विधि के समान इस मन्त्र का भी पुरश्चरण होता है।।५५।।

अथ रत्नाभिषेकमन्त्रः। यथा निबन्धे—

शक्तिश्रीपूर्वकोऽष्टदशाक्षरो विंशदर्णकः ।

शक्तिर्मायाबीजम्। अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादिवैष्णवोक्तपीठमन्वन्तं पीठन्यासं कृत्वा ऋष्यादीन् न्यसेत्। शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः। एवं मुखे गायत्रीछन्दसे नमः। हृदि श्रीकृष्णाय देवतायै, गुह्ये क्लीं बीजाय, पादयोः स्वाहा शक्तये। कराङ्गन्यासौ तु—ह्रीं श्रीं क्लीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। कृष्णाय तर्जनीभ्यां स्वाहा। गोविन्दाय मध्यमाभ्यां वषट्। गोपीजन अनामिकाभ्यां हुं। वल्लभाय कनिष्ठाभ्यां वौषट्। स्वाहा करतलपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। ततः पूर्ववन्मुद्रां बद्ध्वा दिग्बन्धनञ्च कृत्वा किरीटमन्त्रेण व्यापकं कृत्वा यथामुद्रां बद्ध्वा ध्यायेत्।।५६।।

अब रत्नाभिषेक मन्त्र कहते हैं। निबन्ध में कहा है कि अट्ठारह अक्षर वाला मन्त्र

शक्ति तथा बीजपूर्वक होने पर बीस अक्षरों का एक अलग मन्त्र हो जाता है। इसे ही रत्नाभिषेक मन्त्र कहा गया है। शक्ति अर्थात् मायाबीज 'ह्रीं'।

इसका पूजन प्रयोग इस प्रकार होता है—प्रातःकृत्य से लेकर वैष्णव विधि से पीठमन्त्र-पर्यन्त पीठन्यास करके ऋष्यादि न्यास करना चाहिये। इस क्रम में मस्तक में ॐ ब्रह्मणे नमः ऋषये, मुख में ॐ गायत्रीछन्दसे नमः, हृदय में ॐ श्रीकृष्णाय देवतायै नमः, गुह्य में ॐ क्लीं बीजाय नमः, पादद्वय में ॐ स्वाहा शक्तये नमः। इसके अनन्तर इस प्रकार करांगन्यास करना चाहिये—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अंगुष्ठाभ्यां नमः, ॐ कृष्णाय तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ गोविन्दाय मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ गोपीजन अनामिकाभ्यां हुं, ॐ वल्लभाय कनिष्ठाभ्यां वौषट्, ॐ स्वाहा करतलपृष्ठाभ्यां फट्। इसी प्रकार हृदयादि न्यास भी करने के पश्चात् पहले की ही तरह मुद्राबन्धन करके किरीटमन्त्र के द्वारा व्यापक न्यास करके यथोचित कूर्ममुद्रा बनाकर ध्यान करना चाहिये।।५६।।

द्वारवत्यां सहस्रार्कभास्वरैर्भवनोत्तमैः।
अनल्पैः कल्पवृक्षैश्च परीते मणिमण्डपे ।।५७।।
ज्वलद्रत्नमयस्तम्बद्वारतोरणकुड्यके ।
फुल्लस्रगुल्पसच्चित्रवितानालम्बिमौक्तिके ।।५८।।
पद्मरागस्थलीराजद्रत्नद्योश्च मध्यतः ।
अनारतगलद्रत्नधारस्य स्वस्तरोरधः ।।५९।।
रत्नप्रदीपावलिभिः प्रदीपितदिगन्तरे ।
उद्यदादित्यसङ्काशमणिसिंहासनाम्बुजे ।।६०।।
समासीनोऽच्युतो ध्येयो द्रुतहाटकसन्निभः ।
समानोदितचन्द्रार्कतड़ित्कोटिसमद्युतिः ।।६१।।
सर्वाङ्गसुन्दरः सौम्यः सर्वाभरणभूषितः ।
पीतवासाश्चक्रशङ्खगदापद्मोज्ज्वलद्भुजः ।।६२।।
अनारतं जलद्ररत्नधारौघकलशं स्पृशन् ।
वामपादाम्बुजाग्रेण मुष्णता पल्लवच्छविम् ।।६३।।

द्वारवती (द्वारकापुरी) में पद्मरागमय स्थल में विराजमान दो रत्ननदी के मध्य नियत गलित रत्नधारावर्षी स्वर्गतरु कल्पवृक्ष के नीचे सहस्र सूर्य के समान भास्वर, अनेक उत्तम भवन तथा अनेक कल्पवृक्षों से घिरे उज्ज्वल रत्नमय स्तम्भ, द्वार, तोरण, भित्तियुक्त, प्रफुल्ल पुष्पमाला तथा मुक्तामाला से युक्त उज्ज्वल चित्रमय वितानयुक्त मणिमण्डप में नवीन पल्लवों की दीप्ति के अपहरणकारी, वामपादाम्बुज

के अग्रभाग द्वारा अनवरत रत्नधारासमूह से भरे कलशों को स्पर्श करके उदीयमान आदित्य के साथ उज्ज्वल मणिमय सिंहासन के उपरी भाग-स्थित पद्म पर बैठे, पिघले स्वर्णतुल्य दीप्ति से युक्त, कोटि सूर्य, कोटि चन्द्र तथा कोटि विद्युत् के समान द्युति वाले, सर्वाग सुन्दर, सौम्य, स्वर्णाभरण से भूषित, पीतवास (पीले वस्त्र वाले), शंख, चक्र, गदा, पद्म को उज्ज्वल हाथों में धारण किये हुये अच्युत का ध्यान करना चाहिये।।५७-६३।।

रुक्मिणी सत्यभामे द्वे मूर्ध्नि रत्नौघधारया।
सिञ्चन्त्यौ दक्षवामस्थे स्वदोःस्थकलसोत्थया ।।६४।।

दाहिने भाग में रुक्मिणी तथा वामभाग में स्थित सत्यभामा अपने हाथ में पकड़े कलश में रखे रत्नों की धारा से इनका (अच्युत का)अभिषेक कर रही हैं।।६४।।

नाग्नजिती सुनन्दा च दिशन्त्यौ कलशौ तयोः।
ताभ्याञ्च दक्षवामस्थे मित्रविन्दासुलक्षणे ।।६५।।

नाग्नजिती तथा सुनन्दा उन्हे ऐसा कलश दे रही हैं। उनके दाहिनी ओर मित्रविन्दा तथा वामभाग में सुलक्षणा रत्ननदी से रत्नपूरित घट उठाकर उन्हें दे रही हैं अर्थात् नाग्नजिती तथा सुनन्दा को दे रही हैं।।६५।।

रत्ननद्योः समुद्धृत्य रत्नपूर्णौ घटौ तयोः।
जाम्बवती सुशीला च दिशन्त्यौ दक्षवामगे ।।६६।।
बहिः षोडशसाहस्त्रसंख्याताः परितः प्रियाः।
ध्येया कनकरत्नौघधारायुक्कलशोज्ज्वलाः ।।६७।।
तद्बहिश्चाष्टनिधयः पूरयन्तो धनैर्धराम्।
तद्बहिर्वृष्णयः सर्वे पुरोवच्च सुरादयः ।।६८।।

उनके दक्षिण भाग में जाम्बवती तथा वामभाग में सुशीला उनको आदेश करती हैं। उनके पश्चात् चारो ओर रत्नौघधारा से युक्त स्वर्णकलश उज्ज्वल षोडश सहस्त्र प्रियागण (कृष्णपत्नी) का ध्यान करना चाहिये।

उसके बाहरी भाग में धन के द्वारा पृथ्वी को पूर्ण करने वाली आठो निधियों एवं पूर्वोक्तवत् उसके बहिर्भाग में समस्त यादवों, देवगणों तथा वृष्णियों का विराजित रूप में ध्यान करना चाहिये। अर्थात् ये समस्त लोग वहाँ विराजित हैं, ऐसा ध्यान करना चाहिये।।६६-६८।।

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्यार्घ्यस्थापनं कुर्यात्। ततः पूर्वोक्तपीठमन्वन्तं

पीठपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं कृत्वा षड़ङ्गानि सम्पूज्य ॐ किरीटाय नम:; एवं कुण्डलाभ्यां, शङ्खाय, चक्राय, गदायै, पद्माय, पुनः वनमालायै, श्रीवत्साय, कौस्तुभाय। पुनः पुष्पाञ्जलिपञ्चकं दत्त्वा पूर्वादिदिक्पत्रमूलेषु वासुदेवसङ्कर्षणप्रद्युम्नानिरुद्धान्; विदिक्पत्रमूलेषु शान्तिश्रीसरस्वतीरतिः; पूर्वादिपत्रेषु रुक्मिण्याद्यां पूर्ववत् सम्पूज्य अग्रे ॐ षोडशसहस्रमहिषीभ्यां नमः। तद्वहिः पूर्वादिषु ॐ इन्द्रनिधये नमः। एवं नीलनिधये, मुकुन्दनिधये, मकरनिधये, आनन्दनिधये, कच्छपनिधये, शङ्खनिधये, पद्मनिधये इति सम्पूज्य तद्वहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्॥६९॥

इस प्रकार से ध्यान करके मानसोपचार से पूजन करने के पश्चात् विशेषार्घ्य स्थापन करना चाहिये। तदनन्तर पूर्वोक्त पीठमन्त्र-पर्यन्त पूजन करके पुन: ध्यान करके आवाहन से पञ्चपुष्पाञ्जलि दान-पर्यन्त समस्त कार्य सम्पन्न करने के उपरान्त पुन: ध्यान करके आवाहन से पञ्चपुष्पाञ्चलि दान-पर्यन्त समस्त कार्य करना चाहिये। अब षडङ्ग पूजन करके ॐ किरीटाय नम:, ॐ कुण्डलाभ्यां नम:, ॐ शंखाय नम:, ॐ चक्राय नम:, ॐ गदायै नम:, ॐ पद्माय नम:, ॐ वनमालायै नम:, ॐ श्रीवत्साय नम:, ॐ कौस्तुभाय नम: कहकर इनकी पूजा करने के उपरान्त पाँच पुष्पाञ्जलि देकर पूर्वादि दिक्पत्र के मूलसमूह में वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न तथा अनिरुद्ध की (अर्थात् पूर्व दिशा से प्रारम्भ करके) पूजा क्री चाहिये। अब आग्नेय कोणादि विदिक् पत्रसमूह के मूल में शान्ति, श्री, सरस्वती तथा रति की एवं पूर्वादि पत्रसमूह में रुक्मिणी-प्रभृति की पूर्ववत् पूजा करके आगे 'ॐ षोडशसहस्रमहिषीभ्यो नम:' मन्त्र से महिषी की, उसके बाहरी भाग में पूर्वादि क्रम से ॐ इन्द्रनिधये नम:, मुकुन्दनिधये नम:, नील-निधये नम:, मकरनिधये नम:, आनन्दनिधये नम:, कच्छपनिधये नम:, शंखनिधये नम:, पद्मनिधये नम: द्वारा आठो निधियों का पूजन करके उसके बाहरी भाग में इन्द्रादि लोकपालों तथा उनके वज्रादि अस्त्रसमूह का पूजन करके धूपदान से लेकर विसर्जन-पर्यन्त कार्य सम्पन्न करना चाहिये।।६९।।

तथा—

ध्यात्वैवं परमात्मानं विंशत्यर्णमनुं जपेत्।
चतुर्लक्षं हुनेदाज्यैश्चत्वारिंशत्सहस्रकम्॥७०॥

इस मन्त्र का पुरश्चरण चार लाख मन्त्रजप से होता है। कहा भी है कि इस प्रकार से परमात्मा का ध्यान करके चार लाख जप बीस अक्षर वाले मन्त्र का करना चाहिये तथा घृत से चालीस हजार हवन करना चाहिये।।७०।।

मन्त्रान्तरम्—

वाग्भवं कामबीजञ्च कृष्णाय भुवनेश्वरी।
गोविन्दाय रमा गोपीजनवल्लभ ङेशिरः ॥१॥
चतुर्दशस्वरोपेतः शुक्रः सर्गी तदूर्ध्वतः।
द्वाविंशत्यक्षरो मन्त्रो वागीशत्वप्रदायकः ॥२॥

गोपीजनवल्लभेति स्वरूपम्। ङे इति चतुर्थी। शिरः स्वाहा। शुक्रो दन्त्यसकारः।

अब श्रीकृष्ण का अन्य मन्त्र कहा जाता है। वाग्भव (ऐं), कामबीज (क्लीं), तदुपरान्त कृष्णाय कहकर भुवनेश्वरी (ह्रीं) तदनन्तर गोविन्दाय कहकर रमा (श्रीं) लगाकर गोपीजनवल्लभ 'ङे' अर्थात् गोपीजनवल्लभाय लगाये। तदुपरान्त शिर: (स्वाहा) तथा चतुर्दश स्वर ओ-युक्त शुक्र (सौ) तथा सर्गी (विसर्ग) लगाये। इससे वागीशत्व-प्रदायक मन्त्रोद्धार होता है—श्रीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा सौ: ऐं क्लीं कृष्णाय ह्रीं गोविन्दाय। यह बत्तीस अक्षरों का मन्त्र है। गोपीजनवल्लभ—एक स्वरूप है। ङे—चतुर्थी। शिर:—स्वाहा। शुक्र—स।।१-२।।

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यान्दिवैष्णवोक्तपीठमन्वन्तं पीठन्यासं विधायाष्टादशाक्षरवद् ऋष्यादिन्यासं कराङ्गन्यासौ च विधाय मुद्रादिग्बन्धनादिकञ्च विधाय ध्यायेत्॥३॥

इनकी पूजा पद्धति-हेतु प्रात:कृत्यादि से लेकर पीठमन्त्र-पर्यन्त (वैष्णवोक्त) न्यास करके अट्ठारह अक्षरों वाले मन्त्र के समान ऋष्यादि न्यास तथा करांगन्यास करने के उपरान्त मुद्रा दिखाकर दिगबन्धन करके ध्यान करना चाहिये।।३।।

ध्यानं—

वामोर्ध्वहस्ते दधतं विद्यासर्वस्वपुस्तकम्।
अक्षमालाञ्च दक्षोर्ध्वे स्फाटिकीं मातृकामयीम् ॥४॥
शब्दब्रह्ममयं वेणुमधःपाणिद्वयेरितम्।
गायन्तं पीतवसनं श्यामलं कोमलच्छविम् ॥५॥
वर्हिवर्हकृतोत्तंसं सर्वज्ञं सर्ववेदिभिः।
उपासितं मुनिगणैरुपतिष्ठेद्धरिं सदा ॥६॥

वाम भाग के ऊपर वाले हाथ में विद्यासर्वस्वरूप पुस्तक धारण करने वाले, दाहिने ऊर्ध्व हाथ में मातृकावर्णमयी अक्षमाला के समान स्फटिक मणि से निर्मित अक्षमाला धारण करने वाले, नीचे के हाथ (द्वय) से शब्दब्रह्ममय वेणु (धारण कर)

बजाते हुये, पीत वस्त्रधारी, श्यामल कोमल पल्लव के समान द्युति वाले, मयूरपुष्प से बने मुकुट वाले, सर्वज्ञ मुनियों द्वारा उपासित हरि का सदा-सर्वदा ध्यान करना चाहिये।।४-६।।

एवं ध्यात्वा विंशत्यर्णवत् पूजयेत्। अस्य पुरश्चरणं चतुर्लक्षजपः। स्वाद्वक्तपलाशपुष्पैश्चत्वारिंशत्सहस्रहोमः।।७।।

इस प्रकार से ध्यान करके बीस अक्षरों वाले मन्त्र के समान समस्त पूजन करना चाहिये। इसका पुरश्चरण चार लाख मन्त्रजप से होता है। घृत, मधु तथा शर्करा से लिपटे पलाशपुष्प से चालीस हजार होम करना चाहिये।।७।।

मन्त्रान्तरम्—

वाग्भवं कामबीजञ्च मायां लक्ष्मीमनन्तरम्।
दशार्णो मनुवर्यश्च भवेच्छक्राक्षरो मनुः ।।८।।

कृष्ण का अन्य मन्त्र इस प्रकार है—वाग्भव (ऐं), कामबीज (क्लीं), मायाबीज (ह्रीं), लक्ष्मीबीज (श्रीं); अनन्तर दशाक्षर मन्त्र। मन्त्रोद्धार होता है—ऐं क्लीं ह्रीं श्रीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा। यह शक्राक्षर (चौदह अक्षर वाला) मन्त्र होता है।।८।।

ब्रह्मसंहितायान्तु—

वागभवं भुवनेशानी श्रीबीजं कामबीजकम्।
दशार्णो मनुवर्यश्च भवेच्छक्राक्षरो परः ।।९।।

ततो दशाक्षरः।

ब्रह्मसंहिता के अनुसार वाग्भव (ऐं), भुवनेशी (ह्रीं), श्रीबीज (श्रीं) तथा कामबीज (क्लीं) के अनन्तर दशाक्षर मन्त्र लगाने से एक चौदह अक्षर वाले मन्त्र का उद्धार होता है; यथा—ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा।।९।।

तथा च चतुर्दशाक्षरो द्विविधः। अनयोर्ब्रह्मा ऋषिर्गायत्री छन्दः श्रीकृष्णो देवता।।१०।।

इस प्रकार दो प्रकार के चतुर्दशाक्षर मन्त्र कहे गये हैं। इन दोनों के ब्रह्मा ऋषि, गायत्री छन्द तथा श्रीकृष्ण देवता हैं।।१०।।

ध्यानन्तु—

ध्यायेद् वृन्दावने रम्ये काञ्चनी भूमिमध्यगे।
नानापुष्पलताकीर्णे वृक्षषण्डैश्च मण्डिते ।।११।।
कल्पाटवीतले सम्यक् श्रीमन्माणिक्यमण्डपे।
नारदाद्यैर्मुनिगणैः स्तुतिभिः परिवारिते ।।१२।।

रत्नसिंहासने ध्यायेदुपविष्टं कुजोपरि।
सजलजलदश्यामं रक्तपद्मदलेक्षणम् ॥१३॥
रक्तपद्मस्फुरत्पादपाणिभ्यां परिमण्डितम्।
नानारत्नसमारब्धभूषणैः परिभूषितम् ॥१४॥
श्रीयुक्तवक्षसं श्रीमत्कौस्तुभोद्भासिताम्बरम्।
तारहारावलीरम्यं श्रीवत्साङ्कितवक्षसम् ॥१५॥
रोचनातिलकप्रान्तकुन्तलभ्रमरायितम्।
कन्दर्पचापसदृशचिल्लिमालाविराजितम् ॥१६॥
अनेकरत्नसम्बद्धस्फुरन्मकरकुण्डलम्।
बर्हिबर्हकृतोत्तंसं सर्वज्ञं सर्ववेदिभिः।
उपासितं मुनिगणैरुपतिष्ठेद्धरिं सदा ॥१७॥

सर्वमन्यद्दशाक्षरवत्।

रमणीय वृन्दावन में स्वर्णमयी भूमि के मध्यभाग में नाना प्रकार के पुष्प तथा लता से आकीर्ण बड़े-बड़े वृक्षसमूह द्वारा मण्डित स्वर्गतरु कल्पवृक्ष के मूल में (नीचे) परिपूर्ण सौन्दर्यशाली माणिक्यमण्डप पर स्तुति करने वाले मुनिश्रेष्ठ नारदादि से घिरे रत्नसिहासन पर कमल के ऊपर स्थित जलभरे मेघ के समान श्यामवर्ण रक्तकमल के समान नेत्रों वाले, रक्तकमल के रंग के समान पैर के तलवों तथा हथेलियों से युक्त, नाना रत्नों से बने आभूषणों से सजे हुये, सौन्दर्यमय वक्ष पर स्थित दीप्तिमान कौस्तुभ मणि द्वारा उद्भासित (उसकी दीप्ति से चमक रहे) वस्त्रों को धारण करने वाले, तार हारावली द्वारा रमणीय श्रीवत्सचिह्न से युक्त वक्षःस्थल वाले, गोरोचन का तिलक लगाने वाले, कृष्णवर्ण नील कुन्तल वाले, कामदेव के समान चिल्लि (भौं) की माला से विभूषित, अनेक रत्नरचित दीप्त मकरकुण्डल धारण करने वाले, मयूरपिच्छ के मुकुट को धारण करने वाले, सर्वज्ञ सर्वविद् मुनियों द्वारा उपासित श्री हरि की सदा उपासना करनी चाहिये।।११-१७।।

विशेष—इन समस्त मन्त्रों का न्यास-पूजन, होमादि समस्त कार्य दशाक्षर मन्त्र के समान करना चाहिये।

मन्त्रान्तरम्—

कामाक्षरं धरासंस्थं शान्तिविन्दुविभूषितम्।
त्रैलोक्यमोहनो विष्णुः कथितस्तव यत्नतः ॥१८॥

शान्तिस्तुर्यस्वरः। एतेन कामबीजात्मक एकाक्षरो मन्त्रः।

श्रीकृष्ण का अन्य मन्त्र इस प्रकार है—धरा (ल)-स्थित कामाक्षर (क), शान्ति (ई) तथा विन्दु से विभूषित 'क्लीं'। यह श्रीकृष्ण का एकाक्षर मन्त्र है। यत्नपूर्वक इसे मैंने तुमसे कहा है।।१८।।

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादि वैष्णवोक्तपीठशक्तिपर्यन्तं विन्यस्य तदुपरि ॐ पक्षिराजाय स्वाहेति पीठमनूं न्यसेत्। ततः ऋष्यादिन्यासः। शिरसि सम्मोहनाय ऋषये नमः। मुखे गायत्रीछन्दसे नमः। हृदि त्रैलोक्यमोहनाय विष्णवे नमः। ततः कराङ्गन्यासौ क्लां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, क्लां हृदयाय नमः इत्यादिना। ततः षड्दीर्घभाजा कामबीजेन षडङ्गन्यासं कृत्वा बाणन्यासं कुर्यात्। यथा अङ्गुष्ठे ॐ ह्रां शोषणबाणाय नमः, तर्जन्यां ह्रीं मोहनबाणाय नमः, अनामिकायां ॐ ब्लूं मोहनबाणाय नमः, मध्यमायां ॐ क्लीं सन्दीपनबाणाय नमः॥१९॥

इनके पूजन हेतु प्रातःकृत्य से लेकर वैष्णवोक्त पीठशक्ति-पर्यन्त न्यास करने के उपरान्त उसके ऊपर 'ॐ पक्षिराजाय स्वाहा' इस पीठमन्त्र का न्यास करना चाहिये। तदनन्तर मूलोक्त रूप से ऋष्यादि न्यास करने के पश्चात् छः दीर्घ स्वरों (क्लां, क्लीं, क्लूं क्लैं क्लौं क्लः) द्वारा षड़ङ्गन्यास करना चाहिये। अब दोनों अंगूठों में ॐ ह्रां शोषणबाणाय नमः, इसी प्रकार तर्जनीद्वय में ॐ ह्रीं मोहनबाणाय नमः, अनामिकाद्वय में ॐ ब्लूं मोहनबाणाय नमः, मध्यमाद्वय में ॐ क्लीं सन्दीपनबाणाय नमः, कनिष्ठा-द्वय में ॐ सः मादनबाणाय नमः मन्त्र से बाणन्यास करना चाहिये। इसी प्रकार मस्तक, मुख, हृदय, लिंग तथा पैरों में भी बाणन्यास करने के उपरान्त मूलोक्त ध्यान करना चाहिये।।१९।।

ध्यानन्तु—

भग्नविद्रुमसङ्काशं सर्वतेजोमयं वपुः।
किरीटिनं कुण्डलिनं केयूरतलयान्वितम्॥२०॥
मुक्तासद्रत्नसन्नद्धतुलाकोटिसमुज्ज्वलम्।
नानालङ्कारसुभगं पीताम्बरयुगावृतम्॥२१॥
गरुड़ोपरिसन्नद्धरक्तपङ्कजमध्यगम्।
उत्तप्तहेमसङ्काशां लक्ष्मीं वामोरुसंस्थिताम्॥२२॥
सर्वालङ्कारसुभगां शुक्लवासोयुगावृताम्।
सकामां लीलया देवीं मोहयन्तं पुनः पुनः॥२३॥
शङ्खचक्रगदापद्मपाशाङ्कुशधनुःशरान्।
धारयन्तं जगन्नाथं रक्तपद्मारुणेक्षणम्॥२४॥

इनका ध्यान इस प्रकार करना चाहिये—नूतन भग्न प्रवाल के समान कान्ति वाले, सर्वतेजोमय देहधारी, मुकुटधारी, कानों में कुण्डलधारी, बाहु में केयूरवलयधारी, उत्तम रत्न मुक्ताजड़ित नूपुर द्वारा उद्भासित चरणों वाले, नानालंकार से सुशोभित, पीत वस्त्र युगल द्वारा आवृत देह वाले, गरुड़ के ऊपर स्थित रक्तकमल पर स्थित, अपने वाम ऊरु पर बैठी उत्तप्त स्वर्ण के समान कान्तियुता, सर्वालंकारभूषिता, सुभगा, शुक्ल वस्त्रयुगल से आवृता, सकामा लक्ष्मी देवी को अपनी लीला से पुनः-पुनः मोहित करने वाले, शंख, चक्र, गदा, पद्म, पाश, अंकुश, धनुष तथा बाणधारी, लाल कमल के समान नेत्रों वाले जगन्नाथ का ध्यान करना चाहिये।।२०-२४।।

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्यार्घ्यं संस्थाप्य न्यासक्रमेण पीठपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानान्तं विधाय न्यासक्रमेण देवशरीरे पञ्चबाणान् सम्पूज्य ॐ किरीटाय नमः। एवं कुण्डलाय, शङ्खाय, चक्राय, गदायै, पद्माय, पाशाय, अङ्कुशाय, धनुषे, शराय हृदि हस्तेषु पूजयेत्। वक्षसि श्रीवत्साय कौस्तुभाय। गले वनमालायै, नितम्बे पीतवसनाय, वामाङ्के श्रीलक्ष्म्यै। ततः केशरेषु अग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च षड़ङ्गानि सम्पूज्य पूर्वादिदिक्षुचतुष्टयं, कोणेषु पञ्चमं बाणं सम्पूज्य पूर्वादिपत्रेषु लक्ष्मीसरस्वतीरतिप्रीतिकीर्त्तिकान्तितुष्टिपुष्टिस्त-द्बहिर्लोकपालानर्चयेत्। अत्र वज्रादिपूजनं नास्ति अनुक्तत्वात्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्॥२५॥

इस प्रकार से ध्यान करके मानस उपचार से पूजन करके विशेषार्घ्य-स्थापन के बाद न्यासक्रम में पीठपूजन करके पुनः ध्यान के पश्चात् आवाहन से पञ्चपुष्पाञ्जलि दान पर्यन्त विधान करके न्यासक्रम से देवशरीर में पञ्चबाण न्यास करके 'ॐ किरीटाय नमः' से किरीट की पूजा करके कुण्डल की ॐ कुण्डलाय नमः से, शंख की ॐ शंखाय नमः से, चक्र की ॐ चक्राय नमः से, गदा की ॐ गदायै नमः से, पद्म की ॐ पद्माय नमः से, पाश की ॐ पाशाय नमः से, अंकुश की ॐ अंकुशाय नमः से, धनुष की ॐ धनुषे नमः से, शर की ॐ शराय नमः से पूजा करनी चाहिये। तत्पश्चात् वक्ष में ॐ श्रीवत्साय नमः एवं ॐ कौस्तुभाय नमः से, गले में ॐ वनमालायै नमः से, नितम्ब में ॐ पीतवसनाय नमः, वामांक में ॐ श्रीलक्ष्म्यै नमः से पूजन करना चाहिये। तत्पश्चात् केशर में आग्नेयादि कोणों में (मध्य में तथा कोणों में) षडङ्ग पूजन करके पूर्वादि दिक् समूह में चार बाण तथा कोणसमूह में (आग्नेयादि में) पञ्चम बाण का पूजन करके पूर्वादि दिशा के पत्रों में लक्ष्मी, सरस्वती, प्रीति, कीर्त्ति, कान्ति, तुष्टि तथा पुष्टि की एवं बाहरी भाग में लोकपालों की अर्चना करनी

चाहिये। यहाँ पर वज्रादि अस्त्र समूह की पूजा नहीं कही गयी है। तत्पश्चात् धूपदान से लेकर विसर्जन तक का विधान सम्पन्न करना चाहिये।।२५।।

तथा—

रविलक्षं जपेन्मन्त्रं जुहुयात् तद्दशांशतः।
अमृतत्रयसिक्तेन पायसेन विधानवित्।
अथवा रविसाहस्र्यं हुनेत्तावच्च तर्पयेत्॥२६॥

तत्पश्चात् पुरश्चरण के लिये तन्त्र के अनुसार रवि (बारह) लाख मन्त्रजप करना चाहिये। तदनन्तर विधानवित् साधक को अमृतत्रय = घृत, मधु तथा शर्करा से सिक्त पायस द्वारा दशांश होम एवं बारह हजार तर्पण करना चाहिये।।२६।।

मन्त्रान्तरम्—

हृषीकेशपदं ङेऽन्तं नमोऽन्तं कामपूर्वकम्।
अष्टाक्षरो मनुः प्रोक्तः समस्तपुरुषार्थदः।
ध्यानपूजादिकं सर्वं पूर्ववच्च समाचरेत्॥२७॥

श्रीकृष्ण का मन्त्रान्तर कहते हैं। कामबीज (क्लीं) पूर्व में तथा नमः अन्त में। चतुर्थी विभक्तियुक्त हृषीकेश अर्थात् 'हृषीकेशाय क्लीं नमः'। समस्त पुरुषार्थ को देने वाला यह अष्टाक्षर मन्त्र है। इसका ध्यान पूजादि पूर्ववत् करना चाहिये।।२७।।

मन्त्रान्तरं—

लक्ष्मीर्माया कामबीजं ङेन्तं कृष्णपदं तथा।
स्वाहेति मन्त्रराजोऽयं भजतां सुरपादपः॥२८॥

श्रीकृष्ण का अन्य मन्त्र कहते हैं। लक्ष्मी (श्रीं) माया (ह्रीं) कामबीज (क्लीं) चतुर्थी विभक्तियुक्त कृष्ण (कृष्णाय), तदनन्तर स्वाहा अर्थात् 'श्रीं ह्री क्लीं कृष्णाय स्वाहा'। श्रीकृष्ण का यह मन्त्र कल्पवृक्ष के समान है।।२८।।

अस्य नारदऋषिरनुष्टुप् छन्दः श्रीकृष्णो देवता। अस्य पूजा—प्रातः-कृत्यादिवैष्णवोक्तपीठमन्वन्तं विन्यस्य ऋष्यादींश्च विन्यस्य षड्दीर्घभाजा कामबीजेन कराङ्गन्यासौ कृत्वा ध्यायेत्॥२९॥

इस मन्त्र के नारद ऋषि, अनुष्टुप् छन्द एवं श्रीकृष्ण देवता हैं। इस मन्त्र की पूजा हेतु प्रातःकृत्य से लेकर वैष्णवोक्त पीठमन्त्र-पर्यन्त न्यास करके ऋष्यादि न्यास के पश्चात् षड्दीर्घयुक्त कामबीज द्वारा कराङ्गन्यास करके ध्यान करना चाहिये। (षड्दीर्घ कामबीज—क्लां, क्लीं, क्लूं, क्लैं, क्लौं, क्लः)।।२९।।

यथा—

कलायकुसुमश्यामं वृनवनगतं हरिम्।
गोपगोपीगवावीतं पीतवस्त्रयुगान्वितम् ॥३०॥
नानालङ्कारसुभगं कौस्तुभोद्भासि वक्षसम्।
सनकादिमुनिश्रेष्ठैः संस्तुतं परया मुदा।
शङ्खचक्रलसद्बाहुं वेणुहस्तद्वयेरितम् ॥३१॥

कलायपुष्प के समान श्याम वर्ण वाले, वृन्दावन में अवस्थित, गोप-गोपी तथा गौओं के द्वारा घिरे हुये, पीत वस्त्र तथा उत्तरीय धारण करने वाले, नाना अलंकारों से सुशोभित, कौस्तुभ मणि द्वारा उद्भासित वक्षःस्थल वाले, सनकादिक मुनिगणों द्वारा परमानन्द-पूर्वक संस्तुत, शंख-चक्र से उद्भासित हाथों वाले, दो हाथों द्वारा (वेणु धारण कर) वेणुवादन करने वाले हरि का ध्यान करना चाहिये।।३०-३१।।

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्यार्घ्यस्थापनं वैष्णवोक्तपीठमन्वन्तं पीठपूजां पुनर्ध्यानावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय अग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च षडङ्गानि तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म कुर्यात्॥३२॥

इस प्रकार ध्यान के अनन्तर मानस उपचारों से पूजन करके विशेषार्घ्य-स्थापन करने के उपरान्त वैष्णवोक्त पीठमन्त्र-पर्यन्त पीठपूजा, पुनः ध्यान-आवाहनादि पुष्पाञ्जलिदान-पर्यन्त समस्त विधि सम्पन्न करके अग्न्यादि चारों कोणों में, मध्य में, दिक्समूह में षड़ङ्ग पूजन के बाद उसके बाहर इन्द्र आदि लोकपालों तथा उनके वज्रादि अस्त्रों की पूजा करके धूपादि दान से विसर्जन-पर्यन्त कर्म करना चाहिये।।३२।।

ध्यात्वैवं परमात्मानं चतुर्लक्षं मनुं जपेत्।
दशाशं जुहुयान्मन्त्री कुसुमैर्ब्रह्मवृक्षजैः ॥३३॥

परमात्मा का इस प्रकार ध्यान करने के उपरान्त पुरश्चरण-हेतु इस मन्त्र का चार लाख जप करना चाहिये; साथ ही ब्रह्मवृक्ष अर्थात् पलाश वृक्ष के पुष्पों से चालीस हजार होम करना चाहिये।।३३।।

मन्त्रान्तरम्—

श्रीशक्तिस्मरकृष्णाय गोविन्दाय शिरो मनुः ॥३४॥

शिरः स्वाहा।

श्रीकृष्ण का मन्त्रान्तर है—श्री (श्रीं) शक्ति (ह्रीं), स्मर (क्लीं) कृष्णाय गोविन्दाय शिरः (स्वाहा)। मन्त्रोद्धार होता है—श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय स्वाहा।।३४।।

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादि वैष्णवोक्तपीठमन्वन्तं पीठन्यासं विधाय रत्नाभिषेकवत् ऋष्यादिन्यासं विधाय कराङ्गन्यासौ कुर्यात्। यथा— श्रीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा, क्लीं मध्यमाभ्यां वषट्, कृष्णाय अनामिकाभ्यां हुं, गोविन्दाय कनिष्ठाभ्यां वौषट्, स्वाहा करतलपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। ततो मुद्रादिदिग्बन्धनञ्च विधाय विंशत्यक्षरवद् ध्यात्वा तद्विधानेन पूजयेत्। पुरश्चरणञ्च तद्वत्॥३५॥

इस मन्त्र की पूजा-पद्धति इस प्रकार है—प्रात:कृत्यादि से आरम्भ कर वैष्णवोक्त पीठ मन्त्र-पर्यन्त पीठन्यास करके रत्नाभिषेक के इस प्रसंग में पहले कहे गये मन्त्र के समान ऋष्यादि न्यास करके मूलोक्त प्रकार से करांग न्यास करे; जैसे—श्रीं अंगुष्ठाभ्यां नम:, ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा, क्लीं मध्यमाभ्यां वषट्, कृष्णाय अनामिकाभ्यां हुं, गोविन्दाय कनिष्ठाभ्यां वौषट्, स्वाहा करतलपृष्ठभ्यां फट्। इसी प्रकार हृदयादि का भी न्यास करने के पश्चात् मुद्रा प्रदर्शन-प्रभृत्कि साथ-साथ दिग्बन्धन करके बीस अक्षर वाले मन्त्र के समान ही ध्यान करके इस मन्त्र से पूजाविधान के अनुसार पूजन करना चाहिये। इसका पुरश्चरण भी पूर्ववत् ही किया जाता है।।३५।।

मन्त्रान्तरम्—

तारं हृद्भगवते ङेऽन्तो रुक्मिणीवल्लभस्तथा।
शिरोऽन्तः षोडशार्णोऽयं रुक्मिणीवल्लभस्य च ॥३६॥

श्रीकृष्ण का मन्त्रान्तर है—तार (ॐ), हृत् (नम:), भगवते, चतुर्थी विभक्तियुक्त रुक्मिणीवल्लभ (रुक्मिणीवल्लभाय), शिर: अन्त (स्वाहा अन्त में)। रुक्मिणीवल्लभ श्रीकृष्ण का यह षोडश अक्षरों वाला मन्त्र है। मन्त्रोद्धार होता है—ॐ नमो भगवते रुक्मिणीवल्लभाय स्वाहा।।३६।।

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादि वैष्णवोक्तपीठमन्वन्तं विन्यस्य ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। यथा शिरसि नारदाय ऋषये नमः। मुखे अनुष्टुप् छन्दसे नमः। हृदि रुक्मिणीवल्लभाय देवतायै नमः। ततः कराङ्गन्यासौ। ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। नमः तर्जनीभ्यां स्वाहा। भगवते मध्यमाभां वषट्। रुक्मिणीवल्लभाय अनामिकाभ्यां हुं। स्वाहा कनिष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु॥३७॥

इस मन्त्र की पूजा में प्रात:कृत्य से लेकर वैष्णवोक्त पीठमन्त्र-पर्यन्त न्यास करके ऋष्यादि न्यास करना चाहिये। जैसे—मस्तक पर ॐ नारदाय ऋषये नम:, मुख में ॐ अनुष्टुप् छन्दसे नम:, हृदय में ॐ रुक्मिणीवल्लभाय देवतायै नम:। तत्पश्चात् इस प्रकार कराङ्गन्यास करना चाहिये—ॐ अंगुष्ठाभ्यां नम:, ॐ नम: तर्जनीभ्यां

स्वाहा, ॐ भगवते मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ रुक्मिणीवल्लभाय अनामिकाभ्यां हुं, ॐ स्वाहा कनिष्ठाभ्यां फट्। इसी प्रकार हृदयादि न्यास भी करना चाहिये।।३७।।

ततो ध्यानम्—

तापिच्छच्छविरङ्कगां प्रियतमां स्वर्णप्रभामम्बुज-
प्रोद्यद्दामभुजां स्ववामभुजया शिलष्यन् सचिन्ताश्मया।
शिलष्यन्तीं स्वयमन्यहस्तविलसत् सौवर्णवेत्रश्श्रिरं,
पायाद्वः शणसूनपीतवसनो नानाविभूषो हरिः ॥३८॥

ध्यान इस प्रकार किया जाता है—तमाल के समान श्याम वर्ण के अंक में स्थित स्वर्ण के समान प्रभा-युक्त एवं एक हाथ में उज्ज्वल कमल तथा दूसरे हाथ में चिन्तामणि की माला धारण करने वाली प्रियतमा को अपने बाँयें हाथ से आलिंगन करने वाले, अपने दाहिने हाथ में सुवर्णमय वेत्र धारण करने वाले, शणसूत्र से बने पीत वस्त्र धारण करने वाले तथा नाना आभूषणों से भूषित हरि आप सवकी रक्षा करें।।३८।।

एवं ध्यात्वा मानसपूजावैष्णवोक्तपीठपूजे विधाय पुर्नध्यात्वावाहनादि-पञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायाग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च षडङ्गानि सम्पूज्याष्टदलेषु पूर्वादितो नारदपर्वतजिष्णुनिशाटोऽक्रूरदारुकविष्वक्सेन-शैलेयान् अग्रे विनतासुतं तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च सम्पूज्य धूपादिवि-सर्जनान्तं कर्म कुर्यात्। अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः। मधुराप्लुतरक्त-पद्मैरयुतहोमश्च॥३९॥

इस प्रकार से ध्यान करके मानसोपचार से पूजा करने के बाद विशेषार्घ्य-स्थापन एवं वैष्णवोक्त पीठपूजनोपरान्त पुनः ध्यान के पश्चात् आवाहन से लेकर पञ्चपुष्पाञ्जलि दान-पर्यन्त समस्त कृत्य करके आग्नेयादि कोणों में तथा दिक्समूह में षडङ्ग पूजा करके अष्टदल में पूर्व दिशा से प्रारम्भ करके ॐ नारदाय नमः, ॐ पर्वताय नमः, ॐ निशाटाय नमः, ॐ अक्रूराय नमः, ॐ दारुकाय नमः, ॐ विष्वक्सेनाय नमः, ॐ शैलेयाय नमः से पूजन करके आगे विनतानन्दन गरुड़ की पूजा करनी चाहिये। दल के बाहरी भाग में इन्द्रादि लोकपाल तथा वज्रादि अस्त्रसमूह का पूजन करके धूपदान से लेकर विसर्जन-पर्यन्त कर्म करना चाहिये। इस मन्त्र का पुरश्चरण एक लाख जप से सम्पन्न होता है। त्रिमधुर द्वारा आप्लुत रक्त पद्म से दश हजार आहुति देते हुये हवन करना चाहिये।।३९।।

मन्त्रान्तरम्—

श्रीशक्तिकामपूर्वोऽङ्गजन्मशक्तिरमान्तकः ।
दशाक्षरः स एवासौ स्याच्छक्तिरमयान्वितः ।
मन्त्रौ विकृतिरव्यर्णौ आचक्राद्यङ्गिनाविमौ ।।४०।।

श्रीकृष्ण का अन्य मन्त्र इस प्रकार है—'गोपीजनवल्लभाय स्वाहा' इस दशाक्षर मन्त्र में श्री, शक्ति तथा काम को पूर्व में लगाकर तथा काम, शक्ति एवं रमान्तक होने पर (अर्थात् अन्त में होने पर) 'श्रीं ह्रीं क्लीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा क्लीं ह्रीं श्रीं' यह षोडशाक्षर मन्त्र बन जाता है। उपर्युक्त दशाक्षर मन्त्र में ही प्रथमतः शक्ति (ह्रीं) एवं रमा (श्रीं) द्वारा अन्वित होने पर 'ह्रीं श्रीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा' यह बारह अक्षरों वाले मन्त्र का मन्त्रोद्धार होता है। ये दोनों ही मन्त्र 'ॐ आचक्राय स्वाहा हृदयाय नमः' इत्यादि अंगन्यास से युक्त होते हैं।।४०।।

अस्यार्थः—पूर्वोक्तदशाक्षरमन्त्रस्यादौ रमामायाकामबीजानि अन्ते च काममायारमाबीजानि दद्यादित्येकः षोडशाक्षरः। आदौ बीजत्रयं दत्त्वा मायारमाबीजे, अन्ते तु न तत्रायमित्यपरो द्वादशाक्षरो मन्त्रः। अनयोः पूजा—ऋष्यादिषडङ्गन्यासौ दशाक्षरवत् कृत्वा विंशत्यर्णोक्तवत् पूजां कुर्यात्।।४१।।

पूर्वोक्त दशाक्षर मन्त्र के आदि में रमा (श्रीं) माया (ह्रीं) तथा कामबीज (क्लीं) एँवं अन्त में कामबीज (क्लीं), मायाबीज (ह्रीं) तथा रमाबीज (श्रीं) लगाना चाहिये। इससे सोलह अक्षरों का मन्त्र सम्पन्न होता है। अब प्रथमतः श्रीं ह्रीं क्लीं न लगाकर केवल ह्रीं तथा श्रीं लगाना चाहिये। अन्त में भी तीन बीज न लगाने से यह बारह अक्षरों वाला मन्त्र होता है। इन दोनों मन्त्रों का ऋष्यादि न्यास तथा षड़ङ्ग न्यास दशाक्षर कृष्णमन्त्र के ही अनुसार करके बीस अक्षरों वाले मन्त्र के अनुसार पूजन करना चाहिये।।४१।।

ध्यानं तु—

वरदाभयहस्ताभ्यां श्लिष्यन्तं स्वाङ्कगे प्रिये ।
पद्मोत्पलकरे ताभ्यां श्लिष्टं चक्रदरोज्ज्वलम् ।।४२।।

वरद हस्त तथा अभय हस्त द्वारा अपनी अंकगता कमल तथा उत्पलधारिणी दोनों प्रिया के आलिंगन में तत्पर, उनके द्वारा आश्लिष्ट चक्र तथा शंखधारी उज्ज्वल रूप कृष्ण का मैं भजन करता हूँ।।४२।।

पुरश्चरणं तु दशलक्षजपः। आज्येनायुतहोमः वाचनिकः।।४३।।

इस मन्त्र का पुरश्चरण दश लाख जप है। घृत द्वारा दश हजार होम करना चाहिये;

परन्तु यह वाचनिक है अर्थात् 'दशलक्षं जपेदाज्यैर्हुनेत् तावत्सहस्रकम्' इस शास्त्रवचन के अनुसार जप का दशांश अर्थात् एक लाख के स्थान पर दश हजार ही होम करना चाहिये।।४३।।

मन्त्रान्तरम्—

प्रणवं नमसा युक्तं कृष्णगोविन्दकौ तथा।
श्रीपूर्वौ ङेन्तावुच्चार्य हुं फट् स्वाहेति कीर्त्तितः ।।४४।।

श्रीकृष्ण का मन्त्रान्तर कहते हैं—नमोयुक्त प्रणव श्रीपूर्व चतुर्थी विभक्त्यन्त कृष्णाय गोविन्दाय उच्चारण करके 'हुं फट् स्वाहा' कहना चाहिये। यह श्रीकृष्ण का मन्त्र कहा गया है (ॐ नमः श्रीकृष्णाय गोविन्दाय हुं फट् स्वाहा)।।४४।।

अत्र कृष्णस्य पूर्वमेव श्रीशब्दादयः न तूभयत्र। यथा कवचे अष्टाक्षरोद्धारे कृष्णगोविन्दकौ पातु स्वराद्यौ ङेयुतौ मनुरित्यत्र स्वरादित्वं कृष्णस्यैव, न तु गोविन्दस्यापीत्ययं पञ्चदशाक्षरः। अस्य नारदऋषिरनुष्टुप् छन्दः परमात्मा हरिर्देवता क्लीं बीजं स्वाहा शक्तिः। आचक्राद्यैः कराङ्गन्यासौ। दशाक्षरवत् पूजाजपहोमादयः।।४५।।

यहाँ कृष्ण शब्द के पहले ही श्री शब्द-प्रभृति लगाया जाता है, गोविन्द के पहले नहीं। जैसा कि अष्टाक्षर के उद्धार में कहा गया कि स्वराद्य ङे विभक्तियुक्त कृष्ण तथा गोविन्द मन्त्र रक्षा करे। यहाँ कृष्ण का ही स्वरादित्व है, गोविन्द का स्वरादित्व नहीं है। अतः यह मन्त्र पन्द्रह वर्णों वाला होता है। इसके नारद ऋषि, अनुष्टुप् छन्द एवं परमात्मा हरि देवता है। क्लीं बीज है तथा स्वाहा शक्ति है। 'आचक्रादि' प्रभृति से इसमें करांगन्यास होता है। दशाक्षर मन्त्र के ही समान इसका भी जप, पूजा होम आदि सम्पन्न किया जाता है।।४५।।

अथ बालगोपालः

गौतमीये निबन्धे च—

चक्री वसुस्वरयुतः सर्ग्येकार्णो मनूर्मतः।
कृष्णेति द्व्यक्षरः कामपूर्वस्त्र्यर्णः स एव तु ।।४६।।

अब बालगोपाल मन्त्र कहा जाता है। गौतमीय तन्त्र तथा निबन्ध में कहते हैं कि चक्री (क) वसुस्वर (ऋकार) युक्त तथा सर्गी (विसर्ग) युक्त होने पर 'कृः' यह बालगोपाल का एकाक्षर मन्त्र कहा गया है। 'कृष्ण' दो अक्षर का मन्त्र है। अब यह दो अक्षरों वाला मन्त्र 'क्लीं' पूर्व में लगाने से यही द्व्यक्षर मन्त्र 'क्लीं कृष्ण' के रूप में त्र्यक्षर हो जाता है।।४६।।

स एव चतुर्वर्णः स्यात् ङेऽन्तोऽन्यश्चतुरक्षरः ।
वक्ष्यते पञ्चवर्णः स्यात् कृष्णाय नम इत्यपि ॥४७॥

उस 'क्लीं कृष्ण' इस तीन अक्षर वाले मन्त्र का 'कृष्ण' पद चतुर्थी विभक्त्यन्त होने पर 'कृष्णाय' हो जाता है; फलस्वरूप 'क्लीं कृष्णाय' यह चतुरक्षर मन्त्र हो जाता है। साथ ही 'कृष्णाय नमः' यह पञ्चाक्षर मन्त्र हो जाता है।।४७।।

स एव कामपूर्वश्चेत् षडक्षरमनुः स्मृतः ।
कृष्णायेति स्मरद्वन्द्वमध्ये पञ्चाक्षरोऽपरः ॥४८॥

यही पञ्चाक्षर मन्त्र पूर्व में कामबीज लगाये जाने पर षडक्षर मन्त्र 'क्लीं कृष्णाय नमः' हो जाता है। स्मरद्वन्द्व (दो क्लीं) के बीच में 'कृष्णाय' होने से 'क्लीं कृष्णाय क्ली' यह पञ्चाक्षर मन्त्र होता है।।४८।।

गोपालायाऽग्निजायान्तः षडक्षर उदाहृतः ।
कृष्णाय कामबीजाद्यो वह्निजायान्तकोऽपरः ॥४९॥

वह्निजायान्त (जिसके अन्त में स्वाहा हो) ऐसा 'गोपालाय' अर्थात् 'गोपालाय स्वाहा' यह षडक्षर मन्त्र कहा गया है। कामबीजाद्य अर्थात् पहले कामबीज (क्लीं) एवं अन्त में स्वाहा, दोनों के मध्य में 'कृष्णाय' कहने से षडक्षर मन्त्र 'क्लीं (कामबीजाद्य) कृष्णाय स्वाहा' यह मन्त्रोद्धार होता है।।४९।।

कृष्णगोविन्दकौ ङेऽन्तौ सप्तार्णो मनुरुत्तमः ।
कृष्णगोविन्दकौ ङेऽन्तौ कामाद्यचाष्टवर्णकः ॥५०॥

कृष्ण और गोविन्द के चतुर्थी विभक्त्यन्त होने पर 'कृष्णाय गोविन्दाय' यह सप्ताक्षर मन्त्र होता है। यही मन्त्र आदि में काम (क्लीं) लगाकर कृष्णाय गोविन्दाय कहने से 'क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय' अष्टाक्षर मन्त्र हो जाता है।।५०।।

आद्यन्तकामबीजश्चेत् नवाक्षर उदाहृतः ।
दधिभक्षणाय वह्निवल्लभान्तोऽष्टवर्णकः ॥५१॥

यदि 'कृष्णाय गोविन्दाय' के आदि तथा अन्त में कामबीज हो तब 'क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय क्लीं' यह नव अक्षरों वाला मन्त्र सम्पन्न होता है। 'दधिभक्षणाय स्वाहा' यह अष्टाक्षर मन्त्र है।।५१।।

सुप्रसन्नात्मने प्रोक्तो नमः इत्यक्षराष्टकः ।
कामबीजं धराबीजं पुनः कामं समुद्धरेत् ॥५२॥
श्यामलाङ्गपदं ङेऽन्तं नमोऽन्तोऽयं दशाक्षरः ।
शिरोऽन्तो बालवपुषे कृष्णायाऽन्यो मनुर्मतः ॥५३॥

'सुप्रसन्नात्मने' पद के आगे 'नमः' लगाने से 'सुप्रसन्नात्मने नमः' यह अष्टाक्षर मन्त्र होता है। कामबीज (क्लीं), धराबीज (ग्लौं), पुनः कामबीज, तदनन्तर चतुर्थी विभक्त्यन्त 'श्यामलाङ्ग' पद के पश्चात् अन्त में 'नमः' लगाने पर मन्त्रोद्धार होता है— क्लीं ग्लौं क्लीं श्यामलाङ्गाय नमः। यह दशाक्षर मन्त्र कहा गया है।।५२-५३।।

श्रीशक्तिमारकृष्णाय मारः सप्ताक्षरो मनूः।
शिरोऽन्तो बालवपुषे क्लीं कृष्णाय स्मृतो बुधैः ।।५४।।

श्री (श्रीं), शक्ति (ह्रीं), मार (क्लीं), कृष्णाय; तदनन्तर मार (क्लीं) लगाने से मन्त्रोद्धार होता है—श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय क्लीं। यह सप्ताक्षर मन्त्र है। बालवपुषे क्लीं कृष्णाय शिरोऽन्त (स्वाहान्त) होने से एकादश अक्षर के मन्त्र का उद्धार होता है— बालवपुषे क्लीं कृष्णाय स्वाहा।।५४।।

अयमर्थः। चक्री क। वसुस्वरो दीर्घ ॠकारः। वक्ष्यत इति सद्यः फलप्रदमित्यनेनेत्यर्थः। तच्च क्लीं कृष्ण क्लीं इति। धराबीजं ग्लौं। शिरः स्वाहा। तथा च १. कृः, २. कृष्ण, ३. क्लीं कृष्ण, ४. क्लीं कृष्णाय, ५. कृष्ण स्वाहा, ६. कृष्णाय नमः, ७. क्लीं कृष्णाय नमः, ८. क्लीं कृष्णाय क्लीं, ९. गोपालाय स्वाहा, १०. क्लीं कृष्णाय स्वाहा, ११. कृष्णाय गोविन्दाय, १२. क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय, १३. क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय क्लीं, १४. दधिभक्षणाय स्वाहा, १५. सुप्रसन्नात्मने नमः, १६. क्लीं ग्लौं क्लीं श्यामलाङ्गाय नमः, १७. बालवपुषे क्लीं कृष्णाय स्वाहा, १८. श्री ह्रीं क्लीं कृष्णाय क्लीं। एतेषां पूजायन्त्रं वृत्ताष्टादलपद्मं भूगृहं चतुर्द्वारं वृत्तमध्यस्थं कामबीजम्।।५५।।

चक्री—क, वसुस्वर—दीर्घ ॠ। वक्ष्यते का अर्थ है—सद्यः फलप्रद। जो मन्त्र बनते हैं, उन्हें मूल में १ से लेकर १८ तक में अंकित किया गया है। इन मन्त्रों के पूजायन्त्र में वृत्त, अष्टदल पद्म, भूगृह एवं चार द्वार होता है। वृत्त के मध्य में कामबीज 'क्लीं' लिखा जाता है।।५५।।

तथा च गौतमीये—

पद्ममष्टपलाशन्तु चतुरस्रं सुलक्षणम्।
चतुर्द्वारसमायुक्तं कामगर्भितकर्णिकम् ।।५६।।

चतुर्द्वारयुक्त सुलक्षण चतुरस्र, उसके मध्य में कामबीजयुक्त कर्णिकायुक्त अष्टदल कमल।।५६।।

अत्र षट्कोणाद्यपेक्षा नास्ति, प्रमाणाभावात्। एतेषां पूजा तु प्रातःकृत्यादि वैष्णवोक्तपीठमन्वन्तं पीठन्यासं विधाय ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। यथा शिरसि नारदाय ऋषये नमः। मुखे देवीगायत्रीछन्दसे नमः। हृदि श्रीकृष्णाय देवतायै नमः। ततः षड्दीर्घभाजा कामबीजेन कराङ्गन्यासौ कृत्वा पूर्ववन्मुद्रां प्रदर्श्य ध्यायेत्॥५७॥

कोई प्रमाण न होने के कारण यहाँ षट्कोण आदि की कोई अपेक्षा नहीं होती। पूजा-हेतु प्रातःकृत्यादि से लेकर वैष्णवगणोक्त पीठमन्त्र-पर्यन्त पीठन्यास करके ऋष्यादि न्यास करना चाहिये; जैसे मस्तक में ॐ नारदाय ऋषये नमः, मुख में ॐ देवीगायत्रीछन्दसे नमः, हृदय में ॐ श्रीकृष्णाय देवतायै नमः। इसके अनन्तर छः दीर्घ स्वरयुक्त कामबीज द्वारा करांगन्यास करके पूर्ववत् मुद्रा आदि प्रदर्शित करने के उपरान्त ध्यान करना चाहिये।।५७।।

यथा—

अव्याद्व्याकोशनीलाम्बुजरुचिररुणाम्भोजनेत्रोऽम्बुजस्थो
बालो जङ्घाकटिरस्थलकलितरणत् किङ्किणीको मुकुन्दः।
दोर्भ्यां हैयङ्गवीनं दधदतिविमलं पायसं विश्ववन्द्यो
गोगोपीगोपवीतो रुरुनखविलसत्कण्ठभूषश्चिरं नः॥५८॥

प्रस्फुटित नीलकमल के समान वर्ण वाले, लाल कमल के समान नयनों से युक्त, कमल पर विराजमान, जंघा तथा कमर में रुनझुन शब्दकारिणी छोटी-छोटी घंटियों से युक्त, हस्तकमल में सद्यः निकाले गये घृत (मक्खन) तथा अत्यन्त विमल दुग्ध को धारण करने वाले, गो-गोपी तथा गोपगणों से घिरे, कण्ठ में बाध का नख धारण करने वाले, उज्ज्वल कण्ठ में भूषण धारण करने वाले बालमुकुन्द हम सब की रक्षा करें।।५८।।

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्यार्घ्यस्थापनवैष्णवोक्तपीठमन्वन्तं पीठपूजादिकं विधाय पुनर्ध्यात्वावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणपूजा-मारभेत्। यथा केशरेषु अग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च षडङ्गानि सम्पूज्य इन्द्रादीन् वज्रादींश्च सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। एतेषां पुरश्चरणं लक्षजपः॥५९॥

इस प्रकार से ध्यान करने के अनन्तर मानसोपचार से पूजनोपरान्त विशेषार्घ्य का स्थापन करके वैष्णवोक्त पीठमन्त्र-पर्यन्त पीठपूजादि करके पुनः ध्यानोपरान्त आवाहन से पुष्पाञ्जलि-पर्यन्त विधान सम्पन्न करने के अनन्तर आवरणदेवों का पूजन करना

चाहिये। जैसे—केशरसमूह के आग्नेयादि कोणों में, मध्य में तथा दिक्समूह में षड‌ङ्ग पूजन करके इन्द्रादि लोकपालों तथा उनके वज्रादि अस्त्रों का पूजन करने के बाद धूपदान से लेकर विसर्जन-पर्यन्त कर्म करके पूजन का समापन करना चाहिये। इन मन्त्रों का पुरश्चरण एक लाख जप से सम्पन्न होता है।।५९।।

तथा च—

ध्यात्वैवमेवमेतेषां लक्षं जप्यान्मनूं ततः।
सर्पिःसितोत्पलोपेतैः पायसैरयुतं हुनेत्।
तर्पयेत् तावदेतेषां मनूनां हुतसंख्यया ॥६०॥

तन्त्र में कहा भी है कि इस प्रकार ध्यानोपरान्त एक लाख जप करके घृत तथा मिश्री-मिलित पायस द्वारा दश हजार होम करना चाहिये। होमसंख्या के अनुसार ही मन्त्रों का तर्पण भी करना चाहिये।।६०।।

मन्त्रान्तरम्—

सद्यः फलप्रदं मन्त्रं वक्ष्यामि चतुरक्षरम्।
सम्प्रोक्तो मारयुग्मान्तः संस्थकृष्णपदेन तु ॥६१॥

बालगोपाल का अन्य सद्यः फल प्रदान करने वाले चतुरक्षर मन्त्र को कहते हैं। मार (क्लीं) युग्म के मध्यवर्ती कृष्ण पद से यह मन्त्र बनता है; मन्त्रोद्धार होता है— क्लीं कृष्ण क्लीं।।६१।।

अस्य पूजा पूर्वोक्तबालगोपालवत् कार्या ॥६२॥

इनकी पूजा पूर्वोक्त बालगोपाल मन्त्र के समान ही करनी चाहिये।।६२।।

विशेषस्तु—

श्रीमत्कल्पद्रुमूलोद्गतकमललसत्कर्णिकासंस्थितो य-
स्तच्छाखालम्बिपद्मोदरविसरदसंख्यातरत्नाभिषिक्तः।
हेमाभःसुप्रभाभिस्त्रिभुवनमखिलं भासयन् वासुदेवः
पायान्नः पायसादोऽनवरतनवनीतामृताशी वशी सः ॥६३॥

इति ध्यानम्।

जो कल्पद्रुम के मूल से उद्गत कमल की उज्ज्वल कर्णिका के मध्य में अवस्थित हैं, कल्पवृक्ष की शाखाओं पर लगे कमल के उदर से निर्गत उज्ज्वल रत्नों द्वारा जो अभिषिक्त हैं, स्वर्णवर्ण देह की प्रभा से समस्त त्रिभुवन को जो प्रकाशित करने वाले हैं, जो पायस का भक्षण करने वाले हैं, अनवरत नवनीत तथा अमृतभोजी, वशी-प्रधान वे वासुदेव हम सबकी रक्षा करें।।६३।।

इन्द्रादिपूजायाः प्राक्पूर्वादिष्वष्टनिधीनां पूजा। तथा—

ध्यात्वैवं प्रजपेल्लक्षचतुष्कं जुहुयात्ततः।
त्रिमध्वक्तैर्बिल्वदलैश्चत्वारिंशत्सहस्रकम् ॥६४॥

उपर्युक्त प से ध्यान करने के उपरान्त इन्द्रादि लोकपालों की पूजा के पूर्व अष्टनिधि का पूजन करना चाहिये (अष्टनिधि का पूजन कृष्ण प्रकरण में कहा गया है)। इस मन्त्र का पुरश्चरण चार लाख जप से सम्पन्न होता है। तदनन्तर त्रिमधुर से लिपटे बिल्वपत्र द्वारा चालीस हजार हवन करना चाहिये।।६४।।

एतेन मन्त्रस्थकामबीजद्वयस्य लकारयोरन्ते रेफौ चेत्तदा मन्त्रचूड़ामणिर्भवति॥६५॥

अब इनका मन्त्रान्तर कहते हैं। इस मन्त्र के अन्तर्गत कामबीजद्वय के लकार के अन्त में दो रेफ लगे, तब यह मन्त्रचूड़ामणि हो जाता है। (इसे आगे स्पष्ट किया जा रहा है।)।।६५।।

यथा निबन्धे—

मारयोरस्य मांसाधो रक्तश्चेदपरो मनुः ॥६६॥

जैसा कि निबन्ध में कहा गया है कि यदि इस मन्त्र के कामवीजद्वय (मार) में मांस के ('ल' के) अधोभाग में रक्त (र) हो तब एक अन्य मन्त्र का उद्धार होता है।।६६।।

मारः कामबीजम्। मांसं लकारः। रक्तो रेफः। तथा च 'क्लरीं (क् ल् री) क्लरीं' इति। अस्य पूजादिकं सर्वं पूर्वमन्त्रवत्। विशेषन्तु क्लरां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, क्लरां हृदयाय नमः इत्यादिना कराङ्गन्यासौ॥६७॥

मार--कामबीज क्लीं। मांस—ल। रक्त—र। इससे यह मन्त्रोद्धार होता है—क्लरीं कृष्ण क्लरीं। इसका समस्त पूजादि विधान पूर्ववत् है। करांगन्यास इस प्रकार करना चाहिये—क्लरां अंगुष्ठाभ्यां नमः, क्लरां हृदयाय नमः इत्यादि।

ध्यानञ्च—

आरक्तोद्यानकल्पद्रुमतलविलसत्स्वर्णदोलाधिरूढं,
गोपीभ्यां प्रेङ्ख्यमानं विकसितनवरन्ध्रैकसिन्दूरभासम्।
बालं लोलालकान्तं कटितटविलसत्क्षुद्रघण्टाघटाढ्यं,
वन्दे शार्दूलकामाङ्कुशललितगलाकल्पदीप्तं मुकुन्दम् ॥६८॥

कामाङ्कुशो नखः।

ध्यान इस प्रकार किया जाता है—रक्तवर्ण उद्यान में कल्पवृक्ष के नीचे स्वर्णमय झूले पर आरूढ़, गोपीद्वय द्वारा देखे जा रहे, विकसित नवबन्धूक-पुष्प के समान

सिन्दूर वर्ण वाले, मुख के दोनों पार्श्व पर लटक रही केशराशि वाले, कमर में लटक रहे छोटे-छोटे घुंघरु के समान घण्टियों से युक्त, शार्दूल के नख से जड़े गले के आभूषण से दीप्त बालमुकुन्द की मैं वन्दना करता हूँ।।६८।।

तथा—

ध्यात्वैवं पूर्वरीत्यैव जप्त्वा रक्तोत्पलैर्नवैः।
मधुत्रययुतैर्हुत्वा अभ्यर्चेत् पूर्ववद्धरिम् ।।६९।।

इसी प्रकार और भी कहा है कि इस प्रकार से ध्यान करके पूर्वोक्त प्रकार से जप करने के पश्चात् त्रिमधुर से लिपटे नवीन कमलपुष्पों से होम करके पूर्ववत् हरि की अर्चना करनी चाहिये।।६९।।

मन्त्रान्तरम्—

ऊर्ध्वदन्तयुतं शार्ङ्गी चक्री दक्षिणकर्णयुक्।
मांसं नाथाय नत्यन्तो मूलमन्त्रोऽष्टवर्णकः ।।७०।।

अस्यार्थः—ऊर्ध्वदन्त ओकारः। शार्ङ्गी गकारः। चक्री ककारः। दक्षिण-कर्णो ह्रस्वोकारः। मांसं लकारः। नाशाय स्वरूपम्। नतिर्नमःपदम्। तेन गोकुलनाथाय नमः इति मन्त्रः।।७१।।

बालगोपाल का मन्त्रान्तर है—ऊर्ध्वदन्त (ओ) से युक्त शार्ङ्गी (ग), दक्षिणकर्ण (उ) से युक्त चक्री (क), मांस (ल), नाथाय एवं अन्त में नति (नमः)। यह अष्टाक्षर मूल मन्त्र कहा गया है। मन्त्रोद्धार होता है—गोकुलनाथाय नमः।।७०-७१।।

ऋषिर्ब्रह्मास्य गायत्री छन्दः कृष्णस्तु देवता।
वर्णयुग्मैः समस्तेन प्रोक्तं स्यादङ्गपञ्चकम् ।।७२।।

इस मन्त्र के ऋषि ब्रह्मा, गायत्री छन्द एवं श्रीकृष्ण देवता हैं। वर्णद्वय द्वारा एवं समस्त मन्त्र द्वारा इसका षडङ्गन्यास कहा गया है।।७२।।

तथा च—ॐ गो कु अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ॐ लना तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ थाय मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ नमः अनामिकाभ्यां हुं। ॐ नमः गोकुलनाथाय कनिष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु।।७३।।

ऊपर लिखे प्रकार से न्यास करके तद्वत् प्रकार से ही हृदयादि अंगन्यास भी करना चाहिये।।७३।।

ध्यानन्तु—

पञ्चवर्षमतिदीप्तमङ्गने धावमानमलकाकुलेक्षणम्।
किङ्किणीवलयहारनूपुरैरञ्चितं स्मरत गोपबालकम् ।।७४।।

ध्यात्वैवं प्रजपेदष्टलक्षं तावत् सहस्त्रकम्।
जुहुयाद् ब्रह्मवृक्षोत्थसमिद्भिः पायसेन वा ॥७५॥

इनका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—पाँच वर्ष के अतिदीप्त आंगन में दौड़ते हुये, अति चंचल नेत्रों वाले, किङ्किणी, हार, नूपुर से भूषित बालगोपाल का ध्यान करना चाहिये।

इस प्रकार ध्यान करके मन्त्र का आठ लाख जप एवं पलाश की समिधा से अथवा पायस से आठ हजार होम करना चाहिये।।७४-७५।।

●

अथ वासुदेवः

प्रणवो हृद् भगवते वासुदेवाय कीर्त्तितः।
प्रधानं वैष्णवे तन्त्रे मन्त्रोऽयं द्वादशाक्षरः ॥१॥

अब वासुदेव मन्त्र कहते हैं। प्रणव, हृत् (नमः) भगवते वासुदेवाय। 'ॐ नमः वासुदेवाय' यह बारह अक्षरों वाला वासुदेव मन्त्र वैष्णव शास्त्रों में प्रधान मन्त्र के रूप से प्रसिद्ध है।।१।।

अस्य प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्रीछन्दः वासुदेवो देवता। पूजा तु—प्रातःकृत्यादि पूर्वोक्तपीठमन्वन्तं विन्यस्य ऋष्यादिन्यासं कृत्वा कराङ्गन्यासौ कुर्यात्। यथा–ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, नमस्तर्जनीभ्यां स्वाहा, भगवते मध्यमाभ्यां वषट्, वासुदेवाय अनामिकाभ्यां हुं, समस्तमुच्चार्य कनिष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। ततो वर्णन्यासः॥२॥

इस मन्त्र के ऋषि हैं—प्रजापति, गायत्री छन्द है, वासुदेव देवता हैं, ॐ बीज है तथा नमः शक्ति है। पूजा में प्रातःकृत्य से लेकर पूर्वोक्त वैष्णवविधि से पीठमन्त्र-पर्यन्त न्यास करके ऋष्यादि न्यास करने के बाद करांगन्यास करना चाहिये। जैसे—ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ॐ नमस्तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ भगवते मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ वासुदेवाय अनामिकाभ्यां हुं, ॐ नमो भगवते वासुदेवाय कनिष्ठाभ्यां फट्। इसी प्रकार से हृदयादि न्यास भी करना चाहिये। सर्वान्त में वर्णन्यास करना चाहिये (आगे वर्णन्यास कहा जा रहा है)।।२।।

मूर्ध्नि माले दृशोरास्ये गले दोर्हृदयाम्बुजे।
कुक्षौ नाभौ ध्वजे जानुयुग्मे पादद्वये क्रमात् ॥३॥

मस्तक, ललाट, चक्षुर्द्वय, मुख, गला, बाहु, हृदयकमल, नाभि, लिंग, जानुद्वय तथा पादद्वय में क्रमानुसार द्वादश वर्ण का न्यास करना चाहिये।।३।।

द्वादशवर्णान् न्यसेदिति शेषः। ततः किरीटमन्त्रेण व्यापकं कृत्वा ध्यायेत्॥४॥

जैसे—मस्तक में ॐ नमः, ललाट में नं नमः, चक्षुद्वय में मं नमः, मुख में भं नमः, गले में गं नमः, बाहुद्वय में वं नमः, हृदय में तें नमः, उदर में वां नमः, नाभि में सुं नमः, लिंग में दें नमः, जानुद्वय में वां नमः एवं पादद्वय में यं नमः।

इसके पश्चात् मूर्त्तिपंजर न्यास करके किरीट मन्त्र से व्यापक न्यास के अनन्तर निम्न रूप से ध्यान करना चाहिये।।४।।

यथा—

विष्णुं शारदचन्द्रकोटिसदृशं शङ्खं रथाङ्गं गदा-
मम्भोजं दधतं सिताब्जनिलयं कान्त्या जगन्मङ्गलम्।
आवद्धाङ्गदहारकुण्डलमहामौलिं स्फुरत् कङ्कणं,
श्रीवत्साङ्कमुदारकौस्तुभधरं वन्दे मुनीन्द्रैः स्तुतम्॥५॥

शरत् कालीन कोटि चन्द्रमा के समान उज्ज्वल तथा मनोहर, दाहिने निचले तथा उपरि हाथों में चक्र तथा पद्मधारी, वाम निचले तथा उपरि हाथों में गदा तथा शंखधारी, श्वेत कमल पर आसीन, संसार को मोहित करने वाली कान्ति से युक्त, अंगद, हार, कुण्डल, महान् मुकुटधारी, उज्ज्वल कंकणधारी, श्रीवत्स चिह्नधारी, उत्कृष्ट कौस्तुभ मणि धारण करने वाले, मुनिगणों द्वारा वन्दनीय विष्णु की मैं वन्दना करता हूँ।।५।।

एवं ध्यात्वा विष्णुवदभ्यर्च्याङ्गमन्त्रेणार्चयित्वा शेषं विष्णुवत् समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं द्वादशलक्षजपः। आज्याक्ततिलैर्द्वादशसहस्रहोमः॥६॥

इस प्रकार ध्यान करके विष्णुपूजा के समान ही अर्चना करके अंगमन्त्र द्वारा षड़ङ्ग देवता की पूजा करने के उपरान्त अवशेष कर्म विष्णुपूजा के समान ही करना चाहिये। इसका पुरश्चरण बारह लाख जप से सम्पन्न होता है। घृत से सने तिलों द्वारा बारह हजार होम करना चाहिये।।६।।

अथ लक्ष्मीवासुदेवः

हृल्लेखाबीजयुगलं रमाबीजयुगं तथा।
लक्ष्म्यन्ते वासुदेवाय हृदन्तं प्रणवादिकः॥७॥

अब लक्ष्मीवासुदेव मन्त्र कहा जाता है। हृल्लेखा बीज (ह्रीं) दो बार, इसी प्रकार रमाबीज (श्रीं) दो बार तथा लक्ष्मी शब्द के अन्त में वासुदेवाय। आदि में प्रणव तथा अन्त में हृत् (नमः) लगाये।।७।।

तथा च—ॐ ह्रीं ह्रीं श्रीं श्रीं लक्ष्मीवासुदेवाय नमः इति चतुर्दशाक्षरो मन्त्रः। अस्य कराङ्गन्यासौ—ॐ ह्रीं ह्रीं अंगुष्ठाभ्यां नमः, ॐ श्रीं श्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ लक्ष्मी मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ वासुदेवाय अनामिकाभ्यां हुं, ॐ नमः कनिष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु॥८॥

इस प्रकार मन्त्रोद्धार होता है—ॐ ह्रीं ह्रीं श्रीं श्रीं लक्ष्मीवासुदेवाय नमः। यह चौदह अक्षरों का मन्त्र है। इसका करांगन्यास इस प्रकार होता है—ॐ ह्रीं ह्रीं अंगुष्ठाभ्यां नमः, ॐ श्रीं श्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ लक्ष्मी मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ वासुदेवाय अनामिकाभ्यां हुं, ॐ नमः कनिष्ठाभ्यां फट्। इसी प्रकार ॐ ह्रीं ह्रीं हृदयाय नमः इत्यादि मन्त्रों से हृदयादि न्यास भी करना चाहिये।।८।।

ध्यानं तु—

विद्युच्चन्द्रनिभं वपुः कमलजावैकुण्ठयोरेकतां
प्राप्तं स्नेहवशेन रत्नविलसद्भूषाभरालङ्कृतम्।
विद्यापङ्कजदर्पणान् मणिमयं कुम्भं सरोजं गदां,
शङ्खं चक्रममूनि विभ्रदमितां दिश्याच्छ्रीयं नः सदा॥९॥

ध्यान इस प्रकार होता है—कमल से उत्पन्न लक्ष्मी तथा वैकुण्ठवासी नारायण दोनों से एकाकार उनका शरीर विद्युत् तथा चन्द्रमा के समान मनोहर है। वे स्नेहवशात् एकता प्राप्त हैं। नाना रत्नों के उज्ज्वल भूषणों से भूषित हैं। उन दोनों के हाथों में विद्या, कमल, दर्पण, मणिमय घट, पद्म, गदा, शंख तथा चक्र है। यह युगल शरीर हम सबको सदा अमित ऐश्वर्य प्रदान करें।।९।।

सर्वमन्यद् वासुदेववत्। पुरश्चरणं चतुर्दशलक्षजपः। मधुरत्रयसंयुतपद्मैश्चतुर्दशसहस्रहोमश्च॥१०॥

इसके पूजन की समस्त विधियाँ वासुदेव-पूजन के समान ही होती हैं। इस मन्त्र का पुरश्चरण चौदह लाख जप तथा त्रिमधुर (मधु, घृत, शर्करा) से चौदह हजार होम द्वारा सम्पन्न किया जाता है।।१०।।

अथ दधिवामनः

'ॐ नमो विष्णवे सुरपतये महाबलाय स्वाहे'त्यष्टादशाक्षरो मन्त्रः। अस्य इन्दुर्ऋषिर्विराट् छन्दः दधिवामनो देवता। कराङ्गन्यासौ तु—ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः, नमस्तर्जनीभ्यां स्वाहा, विष्णवे मध्यमाभ्यां वषट्, सुरपतये अनामिकाभ्यां हुं, महाबलाय कनिष्ठाभ्यां वौषट्, स्वाहा करतलपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु॥११॥

अब दधिवामन मन्त्र कहते हैं। 'ॐ नमो विष्णवे सुरपतये महाबलाय स्वाहा' यह अट्ठारह अक्षरों वाला दधिवामन का मन्त्र है। इस मन्त्र के ऋषि इन्दु, छन्द विराट्, देवता दधिवामन, बीज प्रणव एवं शक्ति स्वाहा हैं। इसका विनियोग इस प्रकार किया जाता है—ॐ अस्य श्रीदधिवामनमन्त्रस्य इन्दुर्ऋषिर्विराट् च्छन्दः दधिवामनो देवता प्रणवो बीजं स्वाहा शक्तिः ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे विनियोगः। ऋष्यादि न्यास इस प्रकार किया जाता है—मस्तक पर ॐ इन्दवे ऋषये नमः, मुख में विराट् च्छन्दसे नमः, हृदय पर दधिवामनदेवतायै नमः, गुह्य में प्रणवाय बीजाय नमः, पैरों में स्वाहा शक्तये नमः। ऋष्यादि न्यास करने के उपरान्त मूलोक्त विधानानुसार करन्यास-अंगन्यास आदि करके ध्यान करना चाहिये।।११।।

ध्यानन्तु—

मुक्तागौरं मणिमयलसद्भूषणं चन्द्रसंस्थं
भृङ्गाकारैरलकनिकरैः शोभिवक्त्रारविन्दम्।
हस्ताब्जाभ्यां कनककलशं शुद्धतोयाभिपूर्णं
दध्यन्नाढ्यं कनकचषकं धारयन्तं भजामः ॥१२॥

ध्यान इस प्रकार किया जाता है—मुक्ता के समान गौर वर्ण वाले, मणियों से निर्मित उज्ज्वल आभूषणों से भूषित, चन्द्रमण्डल के मध्य विराजमान, भ्रमरों के सदृश अतिशय काले रंग के अलकों से अलंकृत मुखकमल वाले, करकमल में शुद्ध जल से परिपूर्ण कलश धारण किये हुये तथा दधि-मिश्रित अन्नयुक्त स्वर्णचषक को धारण करने वाले देवता का मैं भजन करता हूँ।।१२।।

इति ध्यात्वा विष्णुवदभ्यर्च्य षडङ्गानि सम्पूज्य शेषं समापयेत्। पुरश्चरणं लक्षत्रयजपः। घृतप्लुतपायसान्नेन दशांशहोमश्च॥१३॥

इस प्रकार ध्यान करके विष्णु प्रकरण में कथित विधानानुसार मानसोपचार पूजन, विशेषार्घ्य-स्थापन, रवि तथा अग्निमण्डल में पूजन करके चन्द्रमण्डल-पर्यन्त पूजन करना चाहिये। पुनः ध्यान तथा आवाहनादि करके पुष्पाञ्जलि दान-पर्यन्त समस्त विधान सम्पन्न करने के पश्चात् पूर्ववत् षडङ्ग पूजन करके धूप-दानादि से लेकर विसर्जन-पर्यन्त शेष कर्म सम्पन्न करना चाहिये। इस मन्त्र का पुरश्चरण तीन लाख मन्त्रजप एवं उसके दशांश घृतप्लुत पायस अथवा दधि-मिश्रित अन्न के होम से सम्पन्न होता है।।१३।।

●

अथ हयग्रीवः

ॐ उद्गिरत्प्रणवोद्गीथसर्ववागीश्वरेश्वर ।
सर्ववेदमयाचिन्त्य सर्वं बोधय बोधय ॥

इति पद्यात्मको मन्त्रः। उद्गीथेति तवर्गद्वितीयान्तम्। अस्य ब्रह्मा ऋषिरनुष्टुप् च्छन्दः हयग्रीवो देवता। कराङ्गन्यासौ तु ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, उद्गिरत् प्रणवोद्गीथ तर्जनीभ्यां स्वाहा, सर्ववागीश्वरेश्वर मध्यमाभ्यां वषट्, सर्ववेदमयाचिन्त्य अनामिकाभ्यां हुं, सर्वं बोधय बोधय कनिष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु॥१४॥

अब हयग्रीव मन्त्र कहा जाता है। 'ॐ उद्गिरत्प्रणवोद्गीथ सर्ववागीश्वरेश्वर सर्ववेद-मयाचिन्त्य सर्वं बोधय बोधय' यह हयग्रीव का पद्यात्मक मन्त्र है। इस मन्त्र के ऋषि ब्रह्मा, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता हयग्रीव हैं। करांगन्यास इस प्रकार किया जाता है— ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः, उद्गिरत् प्रणवोद्गीथ तर्जनीभ्यां स्वाहा, सर्ववागीश्वरेश्वर मध्यमाभ्यां वषट्, सर्ववेदमयाचिन्त्य अनामिकाभ्यां हुं, सर्वं बोधय बोधय कनिष्ठाभ्यां फट्। इस मन्त्र का विनियोग इस प्रकार कहा गया है—अस्य श्रीहयग्रीवमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, हयग्रीवो देवता हलो बीजानि स्वराः शक्तयः वागैश्वर्यसिद्ध्यर्थं पूजने विनियोगः। ऋष्यादि न्यास इस प्रकार होता है—मस्तक पर ॐ ब्रह्मणे ऋषये नमः, मुख में ॐ अनुष्टुप् छन्दसे नमः, हृदय में ॐ हयग्रीवाय देवतायै नमः, गुह्य में व्यञ्जनेभ्यो बीजेभ्यो नमः, पादद्वय में स्वरेभ्यः शक्तिभ्यो नमः। इन्हीं मन्त्रों से हृदयादि अंगन्यास भी सम्पन्न करना चाहिये।।१४।।

ततो ध्यानम्—

शरच्छशाङ्कप्रभमश्ववक्त्रं मुक्तामयैराभरणैः प्रदीप्तम् ।
रथाङ्गशङ्खार्चितबाहुयुग्मं जानुद्वयं न्यस्तकरं भजामः ॥१५॥

तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करना चाहिये—शरत्कालीन चन्द्रमा के समान प्रभा वाले, अश्व के सदृश मुख वाले, मुक्तामय आभरणों से प्रदीप्त, चक्र तथा शंख द्वारा चर्चित बाहुद्वयधारी एवं जानुद्वय पर हाथ रखे हुये हयग्रीव का मैं भजन करता हूँ।।१५।।

एवं ध्यात्वा मानसैरभ्यर्च्यार्घ्यं संस्थाप्य वैष्णवोक्तपीठपूजां कृत्वा ह्सूं इत्यनेन मूर्त्तिं सङ्कल्प्य पुनर्ध्यात्वावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय केशरेषु चतुर्दिक्षु ऋग्यजुःसामाथर्वाख्यचतुर्वेदान्, विदिक्षु अङ्गस्मृतिन्याय-सर्वशास्त्राणि, पत्राग्रेष्वग्न्यादिकोणेषु दिक्षु च पञ्चाङ्गानि तद्बहिरिन्द्रादीन्

वज्रादींश्च सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। पुरश्चरणं त्रयस्त्रिंशल्लक्षजपः। मधुप्लुतकुन्दपुष्पैर्दशांशहोमश्च॥१६॥

इस प्रकार से ध्यानोपरान्त मानसोपचार से पूजन करके विशेषार्घ्य का स्थापन करके वैष्णवोक्त पीठपूजन के पश्चात् 'ह्सूं' मन्त्र द्वारा मूर्त्ति की कल्पना करने के पश्चात् पुनः ध्यान करके आवाहन से लेकर पुष्पाञ्जलि-पर्यन्त समस्त विधि सम्पन्न करने के उपरान्त चारों ओर केशरों में ॐ ऋग्वेदाय नमः, ॐ यजुर्वेदाय नमः, ॐ सामवेदाय नमः, ॐ अथर्ववेदाय नमः—इन चारो वेदों का तथा आग्नेय आदि चारो कोणों में ॐ अंगशास्त्राय नमः, ॐ स्मृतिशास्त्राय नमः, ॐ न्यायशास्त्राय नमः, ॐ सर्वशास्त्राय नमः से शास्त्रों का पूजन करना चाहिये। तदनन्तर अग्न्यादि कोणों में तथा चारों दिक्समूह में पत्र के आगे ॐ हृदयाय नमः इत्यादि मन्त्रों से पञ्चोपचार पूजन करने के पश्चात् दल के बाहर इन्द्रादि लोकपाल तथा उनके वज्र आदि अस्त्रसमूह का पूजन करके धूपदान से विसर्जन-पर्यन्त कर्म का सम्पादन करना चाहिये। इस मन्त्र का पुरश्चरण तैंतीस लाख जप से पूर्ण होता है। पूर्णता-हेतु मधु से लिपटे कुन्दपुष्पों द्वारा तैंतीस हजार होम करना चाहिये।।१६।।

मन्त्रान्तरम्—

वियद्भृगुस्थमर्घीशबिन्दुमद्बीजमीरितम् ।
एकाक्षरो मनुः प्रोक्तश्चतुर्वर्गफलप्रदः ॥१७॥

हयग्रीव का एकाक्षर मन्त्र कहा जाता है। भृगुस्थ (सकारस्थ) वियत् (ह) अर्घीश (उ) विन्दुमत होकर बीज बनता है। चतुर्वर्ग फल देने वाला 'ह्सूं' यह एकाक्षर मन्त्र कहा गया है।।१७।।

वियत् हकारः, भृगुर्दन्त्यसकारः अर्घीशः षष्ठस्वरः। तेन ह्सूं इत्येकाक्षरमन्त्रः। अस्य ब्रह्मा ऋषिरनुष्टुप् छन्दः हयग्रीवरूपिणे विष्णुर्देवता हकारो बीजं ऊकारः शक्तिः। ह्सां ह्सीं ह्सूं ह्सैं ह्सौं ह्सः इति क्रमेण कराङ्गन्यासौ॥१८॥

वियत् ह। भृगु स। अर्घीश ऊ। ह्सूं यह एकाक्षर मन्त्र है। इसके ब्रह्मा ऋषि, अनुष्टुप् छन्द, हयग्रीवरूपी विष्णु देवता, हकार बीज एवं ॐ शक्ति है। वागैश्वर्यप्राप्त्यर्थ इसका विनियोग किया जाता है। ऋष्यादि न्यास इस प्रकार किया जाता है—मस्तक पर ॐ ब्रह्मणे नमः, मुख में अनुष्टुप् छन्दसे नमः, हृदय में ॐ हयग्रीवरूपिणे विष्णवे नमः, गुह्य में हकाराय बीजाय नमः, पादद्वय में उकाराय शक्तये नमः।

करांग न्यास इस प्रकार होता है—ॐ ह्सां अंगुष्ठाभ्यां नमः, ॐ ह्सीं

तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ ह्सूं मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ ह्सैं अनामिकाभ्यां हुं, ॐ ह्सौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्, ॐ ह्सः करतलपृष्ठाभ्यां फट्। इसी प्रकार से ॐ ह्सां हृदयाय नमः इत्यादि से हृदयादि अंगन्यास करना चाहियें।।१८।।

ततो ध्यानम्—

धवलनलिननिष्ठं क्षीरगौरं कराग्रै-
र्जपवलयसरोजपुस्तकाभीष्टदाने ।
दधतममलवस्त्राकल्पजालाभिरामं
तुरगवदनविष्णुं नौमि विद्याग्रजिष्णुम् ॥१९॥

तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करना चाहिये—श्वेत कमल पर बैठे, दूध के समान गौर वर्ण वाले, हाथों द्वारा जपमालारूप वलय तथा पद्म, पुस्तक एवं अभयमुद्राधारी, शुद्ध मलरहित वस्त्र तथा भूषणों से रमणीय लगने वाले, विद्या देने के अधिकारी, अश्वमुख वाले हयग्रीवस्वरूप विष्णु की मैं स्तुति करता हूँ।।१९।।

एवं ध्यात्वा मानसपूजार्घ्यस्थापनपुनर्ध्यानावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानानि विधायावरणानि पूजयेत्। तत्राङ्गैः प्रथमावरणम्। प्रज्ञायमेधाऽयस्मृतिहयविद्याहयलक्ष्मीहयवागीशीहयविद्याविशालहयनादविमर्दनहयैरष्टभिर्द्वितीयं, लक्ष्मीसरस्वतीरतिप्रीतिकान्तिपुष्टितुष्टिभिस्तृतीयं, कुसुमादिभिर्गजैश्चतुर्थं, इन्द्रादिभिः पञ्चमम्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म। अस्य पुरश्चरणं चतुर्लक्षजपः। दशांशमाज्येन होमः॥२०॥

ध्यानोपरान्त मानस पूजनादि करने के उपरान्त आवरण पूजन करना चाहिये। इस आवरण पूजन में अंगमन्त्र द्वारा प्रथम आवरण का पूजन किया जाता है; जैसे—एते गन्धपुष्पे ॐ ह्सां हृदयाय नमः इत्यादि।

अब अष्टहय द्वारा द्वितीयावरण-पूजन किया जाता है—एते गन्धपुष्पे ॐ प्रज्ञाहयाय नमः, एते गन्धपुष्पे ॐ मेधाहयाय नमः, एते गन्धपुष्पे ॐ स्मृतिहयाय नमः, एते गन्धपुष्पे ॐ विद्याहयाय नमः, एते गन्धपुष्पे ॐ लक्ष्मीहयाय नमः, एते गन्धपुष्पे ॐ वागीशीहयाय नमः, एते गन्धपुष्पे ॐ विद्याविलासहयाय नमः, एते गन्धपुष्पे ॐ नादविमर्दनहयाय नमः।

तदनन्तर लक्ष्मी, सरस्वती, रति, प्रीति, कान्ति, पुष्टि द्वारा तीसरे आवरण का पूजन करना चाहिये; जैसे—एते गन्धपुष्पे ॐ लक्ष्म्यै नमः। इसी प्रकार प्रत्येक में एते गन्धपुष्पे ॐ लगाकर अन्त में नमः लगाना चाहिये।

चतुर्थ आवरण-पूजन इस प्रकार करना चाहिये—ॐ कुमुदाय नमः, ॐ

कुमुदाक्षकाय नमः इत्यादि के साथ पुण्डरीक, सर्वनेत्र, वामन, शंकुकर्ण, सुमुख तथा सुप्रतिष्ठरूपी आठो गजराज का क्रमशः पूजन करना चाहिये।

इन्द्रादि लोकपालों का पञ्चम आवरण में पूजन तथा उनके वज्रादि आयुधों का षष्ठ आवरण में पूजन किया जाता है। उसके अनन्तर धूपदान से लेकर विसर्जन-पर्यन्त समस्त कार्य करना चाहिये। इनका पुरश्चरण चार लाख जप एवं जप के दशांश घृत के होम से सम्पन्न होता है।।२०।।

विशेष—राघवभट्ट पदार्थादर्श ग्रन्थ में इन हयग्रीव का आवाहन गायत्री से करने का विधान कहते हैं। इनकी गायत्री है—ॐ वागीश्वराय विद्महे हयग्रीवाय धीमहि तन्नो हंसः प्रचोदयात्।

मन्त्रान्तरम्—ह्सूं हयशिरसे नमः। अस्य सर्वमेकाक्षरवत्। ह्सूं ॐ उद्गिरत् प्रणवोद्गीथ सर्ववागीश्वरेश्वर। सर्ववेदमयाचिन्त्य सर्वं बोधय स्वाहा ॐ ह्सूं। हंसः विश्वोत्तीर्णस्वरूपाय चिन्मयानन्दरूपिणे। तुभ्यं नमो हयग्रीव विद्याराजाय विष्णवे स्वाहा सोऽहं। एतावप्येकाक्षरवत्॥२१-२२॥

हयग्रीव का मन्त्रान्तर है—हसूं हयशिरसे नमः। यह अष्टाक्षर मन्त्र है। इसके ब्रह्मा ऋषि एवं देवी गायत्री छन्द हैं। हयग्रीवरूपी विष्णु देवता, हं बीज एवं सौः शक्ति है। इसका समस्त विधान एकाक्षर के ही समान सम्पन्न किया जाता है।

इनका अन्य मन्त्र है—ह्सूं ॐ उद्गिगरत् प्रणवोद्गीथ सर्ववागीश्वरेश्वर। सर्ववेदमयाचिन्त्य सर्वं बोधय बोधय स्वाहा ॐ ह्सूं।

एक अन्य मन्त्र है—ॐ हंसः विश्वोत्तीर्णस्वरूपाय चिन्मयानन्दरूपिणे। तुभ्यं नमो हयग्रीव विद्याराजाय विष्णवे स्वाहा सोऽहं।

इन सबका प्रयोग एकाक्षर मन्त्र प्रकरण में लिखे विधानानुसार ही करना चाहिये।

●

अथ नृसिंहः

उग्रं वीरं महाविष्णुं ज्वलन्तं सर्वतोमुखम्।
नृसिंहं भीषणं भद्रं मृत्युमृत्युं नमाम्यहम्॥२३॥

अयं मन्त्रराजः। अयन्तु मन्त्रो मायापुटितश्चेद परः। अस्य ब्रह्मा ऋषिरनुष्टुप् छन्दः नृसिंहो देवता॥२४॥

यह 'उग्रं' से लेकर 'नमाम्यहम्'-पर्यन्त बत्तीस अक्षरों का मन्त्रराज है। इसमें

मायावीज 'ह्रीं' लगा देने से अन्य मन्त्र हो जाता है। इस मन्त्र के ब्रह्मा ऋषि, अनुष्टुप् छन्द, नृसिंह देवता, 'हं' बीज तथा 'ईं' शक्ति हैं।

विशेष—प्रकृत ग्रन्थ में अंकित न होने पर भी महत्त्वपूर्ण होने के कारण इस मन्त्र की पूजापद्धति का यहाँ विस्तार से विवेचन करना आवश्यक समझकर उसे लिखा जा रहा है। (वैष्णवोक्त पद्धति के अनुसार) प्रातःकृत्य से लेकर पीठन्यास-पर्यन्त कर्म सम्पादित करके मस्तक में ॐ ब्रह्मणे ऋषये नमः, मुख में ॐ अनुष्टुप् छन्दसे नमः, हृदय में ॐ नरसिंहाय देवतायै नमः, गुह्य में हं बीजाय नमः एवं पैरों में ईं शक्तये नमः से ऋष्यादि न्यास करना चाहिये।

तदनन्तर ॐ उग्रं वीरं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ॐ महाविष्णुं तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ ज्वलन्तं सर्वतोमुखं मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ नृसिंहं भीषणं अनामिकाभ्यां हुं, ॐ भद्रं मृत्युमृत्यं कनिष्ठाभ्यां वौषट्, ॐ नमाम्यहं करतलपृष्ठाभ्यां फट्—इस प्रकार से करन्यास तथा अंगन्यास करना चाहिये।

इसके अनन्तर नीचे लिखे अंगों में यथाक्रमेण प्रणवपुटित विन्दुयुक्त (ऊपर मन्त्रात्मक श्लोक २४ के) एक-एक वर्णों से (इन अंगों में) न्यास करके ध्यान करना चाहिये। बत्तीस अंग इस प्रकार हैं—मस्तक, ललाट, दाहिना नेत्र, वाम नेत्र, मुख, दक्षिण बाहुमूल, दक्षिण बाहु की मध्य सन्धि, दाहिनी बाहु का मणिबन्ध, दाहिनी अंगुलि का मूल, दाहिनी अंगुलियों के अग्रभाग, वाम बाहुमूल, वाम बाहु की मध्य सन्धि, वाम बाहु का मणिबन्ध, वाम अंगुलियों का मूल भाग, वाम अंगुलियों का अग्रभाग, दाहिने पैर की ऊरुसन्धि, दाहिने पैर की मध्यसन्धि, दाहिने जंघा की निचली सन्धि, दाहिने पैर की अंगुलियों का मूल, दाहिने पैर की अंगुलियों का अग्रभाग, वाम पैर की ऊरुसन्धि, वाम पैर की मध्यसन्धि, वाम जंघा की निम्न सन्धि, वाम पैर की अंगुलियों का मूल, वाम पैर की अंगुलियों का अग्रभाग, उदर, हृदय, गला, दक्षिण पार्श्व, वामपार्श्व, अपरांग (पीठ) एवं ग्रीवा।

अस्य ध्यानं—

माणिक्यादिसमप्रभं निजरुचा संत्रस्तवक्षोगणं
जानुन्यस्तकराम्बुजं त्रिनयनं रत्नोल्लसद्भूषणम्।
बाहुभ्यां धृतचक्रशङ्खमनिषं दंष्ट्राग्रवक्त्रोल्लस-
ज्ज्वालाजिह्वमुदग्रकेशनिचयं वन्दे नृसिंहं विभुम्॥२५॥

अन्यदन्यत्र॥२६॥

माणिक्य पर्वत की प्रभा के समान प्रभा से युक्त, अपनी दीप्ति से राक्षसों में त्रास

उत्पन्न करने वाले, जानु पर टिकाये करकमलों से शोभित, तीन नयनों वाले, रत्न के समान उज्ज्वल आभूषणों से भूषित, बाहुद्वय में शंख-चक्र सदा धारण करने वाले, बृहद्दन्तों से उग्र रूप मुख तथा उससे लपलपा रही जिह्वा से ज्वाला निकलती हुई, खड़े केशों वाले विभु नृसिंहदेव की मैं अर्चना करता हूँ। अन्यान्य विषय अन्य ग्रन्थों में देखना चाहिये।।२५-२६।।

विशेष—शारदातिलक में इनकी पूजा का वर्णन किया गया है; तदनुसार इस प्रकार से ध्यान करने के उपरान्त मानसोपचार पूजन, विशेष अर्घ्य-स्थापन, वैष्णवोक्त पीठपूजा करके पुनः ध्यान, आवाहन, पञ्चपुष्पाञ्जलि-निवेदन एवं आवरण-पूजन करना चाहिये। प्रथमतः केशरसमूह में, आग्नेयादि कोण में तथा दिक्समूह में 'एते गन्धपुष्पे ॐ उग्रं वीरं हृदयाय नमः' इस प्रकार से तथा 'ॐ महाविष्णुं शिरसे स्वाहा, ॐ ज्वलन्तं सर्वतोमुखं शिखायै वषट्, ॐ नृसिंहं भीषणं कवचाय हुं, ॐ भद्रं मृत्युमृत्युं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ नमाम्यहं अस्त्राय फट्' द्वारा न्यास करना चाहिये।

तत्पश्चात् पूर्वादि दिक्समूह के दलों में ॐ गरुड़ाय नमः, ॐ शङ्कराय नमः, ॐ शेषाय नमः, ॐ पद्मयोन्यै नमः से पूजन करके आग्नेयादि कोणसमूह में ॐ श्रियै नमः, ॐ ह्रियै नमः, ॐ धृत्यै नमः, ॐ पुष्ट्यै नमः से पूजन करने के अनन्तर दल के बाहर पूर्वादि दिशाक्रम से इन्द्रादि लोकपाल तथा उनके वज्रादि अस्त्रों की पूजा करनी चाहिये।

इसके अनन्तर धूपदान से लेकर विसर्जन-पर्यन्त समस्त कृत्य का सम्पादन करना चाहिये। इसका पुरश्चरण बत्तीस लाख जप तथा घृत-मिश्रित पायस से बत्तीस हजार होम करने से सम्पन्न होता है। ऐसा शारदातिलक (१६-७) में कहा गया है।

पाशशक्तिनरहरिरङ्कुशो वर्म फट् ततः ।
तेन आं ह्रीं क्ष्रौं क्रों हुं फट्।।२७।।

मन्त्रान्तर कहते हैं—पाश (आं) शक्ति (ह्रीं) नरहरिबीज (क्ष्रौं) अंकुश (क्रों) वर्म (हुं) तथा फट्। यह सर्वकामप्रद षडक्षर नारसिंह मन्त्र कहा गया है। मन्त्रोद्धार होता है—आं ह्रीं क्ष्रौं क्रों हुं फट्। इस मन्त्र के ऋषि ब्रह्मा, छन्द पंक्ति, देवता नरसिंह, बीज क्ष्रौं तथा शक्ति ह्रीं है।।२७।।

विशेष—इसकी पूजा-पद्धति इस प्रकार है—प्रातःकृत्य से लेकर वैष्णवोक्त पीठन्यासोपरान्त इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करना चाहिये—मस्तक पर ॐ ब्रह्मणे ऋषये नमः, मुख में ॐ पंक्तिछन्दसे नमः, हृदय में ॐ नारसिंहाय देवतायै नमः, गुह्य में क्ष्रौं बीजाय नमः, पादद्वय में ह्रीं शक्तये नमः।

तदनन्तर आं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ क्ष्रौं मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ क्रों अनामिकाभ्यां हुं, ॐ हुं कनिष्ठाभ्यां वौषट्, ॐ फट् करतलपृष्ठाभ्यां फट्—इस प्रकार अंगन्यासादि करके आगे लिखा ध्यान करना चाहिये।

कोपादालोलजिह्वं विवृतनिजमुखं सोमसूर्याग्निनेत्रं
पादादानाभिरक्तप्रभमुपरि दधद्भिन्नदैत्येन्द्रगात्रम्।
शङ्खं चक्रासिपाशाङ्कुशकुलिशगदादारणान्युद्वहस्तं
भीमं तीक्ष्णोग्रदंष्ट्रं मणिमयविविधाकल्पमीडे नृसिंहम्॥२८॥

अन्यदन्यत्र।

कोप के कारण जिह्वा लपलपाने वाले, अपने मुख को फाड़े हुये सोम, सूर्य तथा अग्निरूपी तीन नेत्र से युक्त, पैर से लेकर नाभि-पर्यन्त रक्त वर्ण एवं उससे ऊपर श्वेत वर्ण वाले, दैत्येन्द्र हिरण्यकश्यप के देह को पकड़कर विदीर्ण करने वाले, अपने आठ हाथों में से ऊपर के चार हाथों में शंख, चक्र पाश तथा अंकुश धारण करने वाले तथा नीचे के चार हाथों में वज्र, गदा एवं मुद्रा धारण करने वाले, अतिशय भयंकर, तीक्ष्ण तथा उग्र दाँतों से युक्त, मणिमय विविध आभूषणों से समन्वित नृसिंह की मैं स्तुति करता हूँ।।२८।।

विशेष—इस ग्रन्थ में अनुक्त होने के कारण शारदातिलक के अनुसार ध्यान के अनन्तर का प्रसंग यहाँ लिखा जा रहा है; क्योंकि ग्रन्थकार ने अन्य ग्रन्थों को देखने की अनुमति प्रदान की है। तदनुसार इस ध्यान के पश्चात् मानसोपचार पूजन, विशेषार्घ्य का स्थापन एवं वैष्णवोक्त पीठपूजा करके पुनः ध्यान करने के उपरान्त आवाहन से लेकर पुष्पाञ्जलि दान तक की क्रिया सम्पन्न करने के पश्चात् आवरण-पूजन करना चाहिये। केशर के अग्नि-प्रभृति कोण में, मध्य में तथा चारो दिशाओं में 'एते गन्धपुष्पे ॐ आं हृदयाय नमः, एते गन्धपुष्पे ॐ क्रों कवचाय हुं, एते गन्धपुष्पे ॐ हुं नेत्रत्रयाय वौषट्, एते गन्धपुष्पे ॐ फट् करतलपृष्ठाभ्यां फट्* (यहाँ 'फट्' आगे तथा अन्त दोनों स्थान में रहता है)—इस प्रकार षडंग पूजा करके 'ॐ शंखाय नमः, ॐ चक्राय नमः, ॐ पाशाय नमः, ॐ अंकुशाय नमः, ॐ कुलिशाय नमः, ॐ गदायै नमः, ॐ खड्गायै नमः, ॐ षट्कायै नमः' से पद्मदल में पूर्वादिक्रम से पूजा करनी चाहिये। अब दल के बहिर्भाग में इन्द्रादि लोकपालों तथा उनके वज्रादि अस्त्रसमूह का पूजन करके धूपदान से विसर्जन-पर्यन्त कृत्य सम्पन्न करना चाहिये। इस मन्त्र का पुरश्चरण छः लाख जप तथा घृत से छः हजार होम करने से सम्पन्न होता है; क्योंकि शारदातिलक में ऐसा ही कहा गया है।

मन्त्रान्तरम्—

क्षकारो वह्निमारूढो मनुविन्दुसमन्वितः।
एकाक्षरो मनुः प्रोक्तः सर्वकामफलप्रदः ॥२९॥

तेन क्ष्रौं इत्येकाक्षरः। अस्य ध्यानादि सर्वं मन्त्रराजवत्। विशेषस्तु अत्रिर्ऋषिर्गायत्रीछन्दः नृसिंहो देवता क्षकारो बीजमोकारः शक्तिः। षड्दीर्घभाजा मायाबीजेन कराङ्गन्यासौ॥३०॥

मन्त्रान्तर कहते हैं—क्षकार अग्नि (र) पर आरूढ़ (युक्त) होकर मनु (औ) तथा विन्दु से विभूषित होने पर सर्वकामप्रद एकाक्षर मन्त्र निष्पन्न होता है। यह मन्त्र है—क्ष्रौं। इसका ध्यानादि सब कुछ पहले कहे गये नृसिंह मन्त्रराज की ही तरह होता है। ऋष्यादि न्यास में यह विशेष है कि इसके ऋषि अग्नि हैं, छन्द गायत्री है, नृसिंह देवता हैं, क्ष बीज है तथा 'ओ' शक्ति है। समस्त काम्य फल इससे प्राप्त किये जा सकते हैं। छः दीर्घ स्वरयुक्त मायाबीज द्वारा इसका करांग न्यास करना चाहिये।

जयद्वयं समुच्चार्य श्रीपूर्वो नृसिंहेत्यपि।
अष्टाक्षरो मनुः प्रोक्तो भजतां कामदो मणिः ॥३१॥

सर्वं मन्त्रराजवत्।

नृसिंह का मन्त्रान्तर है—जयद्वय अर्थात् 'जय-जय' का उच्चारण करके 'श्री' को पूर्व में रखकर 'नृसिंह' का उच्चारण करने से यह अष्टाक्षर मन्त्र होता है—जय जय श्री नृसिंह। यह मन्त्र जप करने वालों के लिये सर्वकामप्रद मणिस्वरूप कहा गया है। इसका पूजन, पुरश्चरणादि सब कुछ नृसिंह मन्त्र के अनुरूप होता है।।३१।।

●

अथ वराहः

ॐ नमो भगवते वराहरूपाय भूर्भुवःस्वःपतये भूपतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा। इति त्रयस्त्रिंशदक्षरो मन्त्रः॥३२॥

वराह का मन्त्र है—ॐ नमो भगवते वराहरूपाय भूर्भुवःस्वःपतये भूपतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा। यह तैंतीस अक्षरों का मन्त्र है।।३२।।

यथा—

ॐ नमः पदमाभाष्य ततो भगवते पदम्।
ततो वराहरूपाय भूर्भुवःस्वःपतिं तथा ॥३३॥
भेन्तञ्च भूपतित्वञ्च मे देहीति ददापय।
वह्निजायान्वितो मन्त्रो वराहस्य वरानने ॥३४॥

अस्य भार्गवऋषिरनुष्टुपछन्दः आदिवराहो देवता॥३५॥

जैसा कि कहा भी है—हे वरानने! 'ॐ नमः' कहकर 'भगवते' कहने के बाद 'वराहरूपाय' (चतुर्थी विभक्त्यन्त) भूर्भुवःस्वःपतिं अर्थात् भूर्भुवःस्वःपतये भूपतित्वं मे देहि तथा वह्निजायान्त (स्वाहा) ददापय अर्थात् ददापय स्वाहा कहने पर मन्त्रोद्धार इस प्रकार होता है—ॐ नमो भगवते वराहरूपाय भूर्भुवःस्वःपतये भूपतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा। इस मन्त्र के भार्गव ऋषि, अनुष्टुप् छन्द, आदिवराह देवता, हुं बीज तथा स्वाहा शक्ति हैं।।३३-३५।।

विशेष—इस मन्त्र की पूजा-पद्धति इस प्रकार है—प्रातःकृत्य से लेकर वैष्णवोक्त पीठमन्त्र-न्यास तक करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करना चाहिये—मस्तक पर ॐ भार्गवाय ऋषये नमः, मुख में ॐ अनुष्टुप् छन्दसे नमः, हृदय में ॐ आदिवराहाय देवतायै नमः, गुह्य में हुं बीजाय नमः, पादद्वय में स्वाहा शक्तये नमः। तत्पश्चात् इस रीति से करांगन्यास करना चाहिये—ॐ एकदंष्ट्राय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ॐ व्योमोङ्काराय तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ तेजोधिपतये मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ विश्वरूपाय अनामिकाभ्यां हुं, ॐ महादंष्ट्राय कनिष्ठाभ्यां फट्। इस प्रकार से न्यासादि सम्पन्न करने के उपरान्त ध्यान करना चाहिये।

आपादं जानुदेशाद्वरकनकनिभं नाभिदेशादधस्तान्
मुक्ताभं कण्ठदेशात्तरुणरविनिभं मस्तकान्नीलभासम्।
ईडे हस्तैर्दधानं रथचरणदरौ खड्गखेटौ गदाख्यां
शक्तिं दानाभये च क्षितिधरणलसद्दंष्ट्रमाद्यं वराहम्॥३६॥

अन्यदन्यत्र।

इनका ध्यान इस प्रकार करना चाहिये—जानुदेश से पादतल-पर्यन्त उत्तम सुवर्ण के समान पीत वर्ण वाले, नाभि से जंघा (जानु)-पर्यन्त मुक्ता के समान शुभ्र वर्ण वाले, कण्ठ से नाभि-पर्यन्त तरुण सूर्य के समान रक्त वर्ण वाले तथा मस्तक से कण्ठ-पर्यन्त नील वर्ण वाले, दाहिने तथा बाँयें ऊपर वाले हाथों में रथचरण (चक्र) तथा शंख एवं उसके नीचे वाले दाहिने तथा बाँयें हाथ में पुनः शंख तथा खेटक, उसके नीचे वाले दाहिने तथा बाँयें हाथ में गदा तथा शक्ति एवं उसके नीचे वाले दो हाथों में वर तथा अभय मुद्रा धारण करने वाले (अर्थात् उनके आठ हाथ हैं), जिनके दाँत पृथ्वी के मूल में अन्दर लगे हुये हैं, ऐसे उज्ज्वल दाँतों वाले भगवान् वराह की मैं स्तुति करता हूँ।।३६।।

विशेष—इस मन्त्र के सम्बन्ध में ग्रन्थकार ने अन्यत्र देखने को कहा है; अतः

यहाँ अन्यत्र से सामग्री एकत्र करके लिखा जा रहा है। ऊपर लिखा ध्यान करके मानसोपचार पूजन, विशेषार्घ्य-स्थापन, वैष्णवोक्त पीठपूजनादि करने के उपरान्त पुनः ध्यान करके दो प्रकार की वाराह मुद्रा प्रदर्शित करनी चाहिये। तत्पश्चात् आवाहन से लेकर पुष्पांजलि निवेदन-पर्यन्त विधान सम्पन्न करके आवरण-पूजन करना चाहिये। यथा—पूर्वादिदिक् तथा सम्मुख यथा क्रमेण ॐ एकदंष्ट्राय हृदयायनमः, ॐ व्योमोल्काय शिरसे स्वाहा नमः। ॐ तेजोधिपतये शिखायै वषट् नमः। ॐ विश्वरूपाय कवचाय हुं नमः। सम्मुख में ॐ महाद्रंष्टाय अस्त्राय फट् नमः। तत्पश्चात् कोणसमूह में अधः तथा ऊर्ध्व में अस्त्रपूजन करना चाहिये। पत्र में ॐ चक्राय नमः, ॐ शंखाय नमः, ॐ खड्गाय नमः, ॐ खेटाय नमः, ॐ गदायै नमः, ॐ शक्तये नमः, ॐ वराय नमः, ॐ अभयाय नमः से पूजन करके पत्र के बहिर्भाग में इन्द्रादि लोकपाल तथा उनके वज्रादि अस्त्रों की पूजा करके धूपदान से विसर्जन-पर्यन्त कार्य सम्पन्न करना चाहिये। इस मन्त्र का पुरश्चरण एक लाख जप तथा मधुर (त्रिमधुर) से सने कमलों द्वारा दशांश होम करना चाहिये, ऐसा शारदातिलक में कहा गया है।

●

अथ हरिहरः

मन्त्रदेवप्रकाशिकायां—तारो माया प्रासादं शङ्करनारायणाय नमः प्रासादं माया तारः। तेन ॐ ह्रीं हौं शङ्करनारायणाय नमः हौं ह्रीं ॐ इति षोडशाक्षरो मन्त्रः। अस्य नारायण ऋषिरनुष्टुप् छन्दः हरिहरो देवता हौं बीजं ह्रीं शक्तिः। पूजा तु प्रातःकृत्यादिवैष्णवोक्तं शैवोक्तं वा पीठन्यासं विधाय ऋष्यादीन् न्यस्य ह्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहेत्यादि षट्दीर्घयुक्तमायया कराङ्गन्यासौ कृत्वा ध्यायेत्॥३७॥

अब हरिहर मन्त्र कहते हैं। मन्त्रदेवप्रकाशिका ग्रन्थ में कहा गया है कि तार (ॐ) माया (ह्रीं) प्रासाद (हौं) शङ्करनारायणाय नमः प्रासाद (हौं) माया (ह्रीं) तथा तार (ॐ)। मन्त्रोद्धार होता है—ॐ ह्रीं हौं शकरनारायणाय नमः हौं ह्रीं ॐ। यह सोलह अक्षरों वाला मन्त्र होता है। इसके नारायण ऋषि, अनुष्टुप् छन्द, हरिहर देवता, हौं बीज तथा ह्रीं शक्ति है। इसकी पूजा के क्रम में प्रातःकृत्यादि से लेकर वैष्णवोक्त अथवा शैवोक्त पीठन्यास-पर्यन्त करके पूर्वोक्तवत् ऋष्यादि न्यास करके छः दीर्घ स्वरयुक्त मायाबीज (ह्रीं) से युक्त जैसे कि ॐ ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः, ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा इत्यादि प्रकार से करन्यास तथा अंगन्यास सम्पन्न करके ध्यान करना चाहिये।।३७।।

शूलं चक्रं पाञ्चजन्यमभीतिं दधतं करैः।
स्व-स्वभूषाच्छलीलार्द्धदेहं हरिहरं भजे ॥३८॥

हाथों में शूल, चक्र, पाञ्चजन्य तथा अभय मुद्रा धारण करने वाले, लीला से दोनों (हरि तथा हर के अलग-अलग) प्रकार से आभूषणों से भूषित, हरि तथा हर के आधे-आधे शरीर को धारण करने वाले हरिहर का मैं भजन करता हूँ।।३८।।

एवं ध्यात्वा मानसै: सम्पूज्यार्घ्यं संस्थाप्य वैष्णवोक्तं शैवोक्तं वा पीठार्चनं विधाय पुनर्ध्यात्वावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणानि पूजयेत्। केशरेष्वग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च षडङ्गेन सम्पूज्य पूर्वादिपत्रेषु लक्ष्मी नारायणी धरा भूधराम्बिका त्र्यम्बिका गङ्गा गङ्गाधरास्तद्बहिरिन्द्रादीन् सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अत्र वज्रादिपूजा नास्त्यनुक्तत्वात्।।३९।।

उपर्युक्त प्रकार से ध्यान करके मानसोपचार पूजन, विशेषार्घ्य-स्थापन, वैष्णवोक्त अथवा शैवोक्त पीठपूजन, पुन: ध्यान तथा आवाहन से लेकर पञ्चपुष्पाञ्जलि दान तक का विधान सम्पन्न करके आवरण-पूजन करना चाहिये। केशरसमूह के अग्न्यादि कोणों में, मध्य तथा दिक्समूह में पूर्वोक्त प्रकार से षडङ्ग पूजन करके पूर्वादि पत्रों में लक्ष्मी, नारायणी, धरा, भूधरा, अम्बिका, त्र्यम्बिका, गंगा तथा गंगाधर का पूजन करना चाहिये। सबके नामों के आगे ॐ तथा अन्त में नम: लगा कर यह पूजा करनी चाहिये; जैसे—ॐ लक्ष्म्यै नम: इत्यादि। तदनन्तर बहिर्भाग में इन्द्रादि लोकपालों की पूजा करके धूपदान से लेकर विसर्जन तक का कृत्य सम्पन्न करना चाहिये। इस ग्रन्थ में (मन्त्रदेवप्रकाशिका में) अस्त्रपूजा का उल्लेख नहीं है।।३९।।

तथा—

लक्षमात्रं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं घृतप्लुतै:।
पायसैर्हवनं कुर्यात् संस्कृते हव्यवाहने ।।४०।।

पुरश्चरण में इस मन्त्र का एक लाख जप तथा घृतमिश्रित पायस द्वारा संस्कृत अग्नि में दश हजार होम करना चाहिये।।४०।।

विष्णुमन्त्रं रात्रौ न जपेत्। 'न जपेद् वैष्णवं रात्रौ शक्तिमन्त्रे न दूष्यति' इति वैशम्पायनसंहितावचनात्।।४१।।

विष्णुमन्त्र का रात्रि में जप नहीं करना चाहिये, ऐसा वैशम्पायनसंहिता में कहा गया है। रात्रि में शक्तिमन्त्र का जप करने से कोई दोष नहीं होता।।४१।।

अथ शिवप्रकरणम्

अथ वक्ष्ये महेशस्य मन्त्रान् सर्वसमृद्धिदान्।
यै पूर्वमृषयः प्राप्ताः शिवसायुज्यमञ्जसा ॥१॥

अब शिवप्रकरण कहते हैं। जिस मन्त्र से ऋषिगणों ने पूर्व में अनायास ही शीघ्र शिवसायुज्य प्राप्त किया था, भगवान् महेश्वर के समस्त प्रकार की समृद्धियों को देने वाले उन मन्त्रों को अब मैं कहता हूँ।।१।।

शान्तः सत्यान्तसंयुक्तो विन्दुभूषितमस्तकः।
प्रासादाख्यो मनुः प्रोक्तो भजतां कामदो मणिः ॥२॥

सान्त तथा सत्यन्त 'औ' द्वारा युक्त एवं विन्दुभूषित होकर 'हौं' बनता है। यह प्रासाद नामक मन्त्र है। यह भजनकारियों के लिये कामप्रद मणि के समान है।।२।।

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादिमातृकान्यासं प्राणायामांश्च कृत्वा श्रीकण्ठन्यासं मातृकास्थाने कुर्यात्। तद्यथा—अं श्रीकण्ठपूर्णोदरीभ्यां नमः, आं अनन्तविरजाभ्यां, इं सूक्ष्मशाल्मलीभ्यां, ईं त्रिमूर्त्तिलोलाक्षीभ्यां, उं अमरेश्वरवर्त्तुलाक्षीभ्यां, ऊं अर्घीशदीर्घघोणाभ्यां, ऋं भारभूतीशसुदीर्घमुखीभ्यां, ॠं तिथीशगोमुखीभ्यां, एं झिण्टीशोद्ध्र्वकेशीभ्यां, ऐं भौतिकविकृतमुखीभ्यां, ॐ ओं सद्योजातज्वालामुखीभ्यां, औं अनुग्रहेश्वरोल्कामुखीभ्यां, अं अक्रूरसुश्रीमुखीभ्यां, अः महासेनविद्यामुखीभ्यां, कं क्रोधीशमहाकालीभ्यां, खं चण्डेशसरस्वतीभ्यां, गं पञ्चान्तकसर्वसिद्धिगौरीभ्यां, घं शिवोत्तमत्रैलोक्यविद्याभ्यां, ङं एकरुद्रमन्त्रशक्तिभ्यां, चं कूर्मात्मशक्तिभ्यां, छं एकनेत्रभूतमातृभ्यां, जं चतुराननलम्बोदरीभ्यां, झं अजेशद्राविणीभ्यां, ञं शर्वनागरीभ्यां, टं सोमेशखेचरीभ्यां, ठं लाङ्गलिमञ्जरीभ्यां, डं दारुकरूपिणीभ्यां, ढं अर्द्धनारीश्वरवीरिणीभ्यां, णं उमाकान्तकाकोदरीभ्यां, तं आषाढ़िपूतनाभ्यां, थं दण्डिभद्रकालीभ्यां, दं अर्द्रियोगिनीभ्यां, धं मीनशङ्खिनीभ्यां, नं मेषगर्जिनीभ्यां, पं लोहितकालरात्रिभ्यां, फं शिखिकूजिनीभ्यां, बं छगलण्डेशकपर्दिनीभ्यां, भं द्विरण्डेशवज्रिणीभ्यां, नं महाकालजयाभ्यां, यं त्वगात्मबालिसुमुखेश्वरीभ्यां, रं असृगात्मभुजङ्गेशरेवतीभ्यां, लं

मांसात्मपिनाकीशमाधवीभ्यां, वं मेदआत्मखड्गीशवारुणीभ्यां, शं अस्थ्यात्मबकवायवीभ्यां, षं मज्जात्मश्वेतरक्षोविदारिणीभ्यां, सं शुक्रात्मभृग्वीशसहजाभ्यां, हं प्राणात्मनकुलीशलक्ष्मीभ्यां, लं जीवात्मशिवव्यापिनीभ्यां, क्षं क्रोधात्मसंवर्त्तकमायाभ्यां।

ततः सामान्यपद्धत्युक्तपीठन्यासं कृत्वा पीठशक्तिर्न्यसेत्। यथा—वामायै नमः, ज्येष्ठायै नमः, रौद्र्यै नमः, काल्यै नमः, कलविकरण्यै नमः, बलविकरण्यै नमः, बलप्रमथन्यै नमः, सर्वभूतदमन्यै नमः। एतां हृत्पद्मस्य पूर्वादिकेशरेषु विन्यस्य मध्ये ॐ मनोन्मन्यै, तदुपरि ॐ नमो भगवते सकलगुणात्मशक्तियुक्तायानन्ताय योगपीठात्मने नमः॥३॥

इस मन्त्र की पूजा-पद्धति इस प्रकार है—प्रातःकृत्य से लेकर मातृकान्यास-पर्यन्त कृत्यों को सम्पन्न करने के उपरान्त मूलोक्त विधान के अनुसार श्रीकण्ठ न्यास करना चाहिये। न्यास के समस्त मन्त्रों के अन्त में 'नमः' का प्रयोग करना चाहिये; जैसे—अं श्रीकण्ठपूर्णोदरीभ्यां नमः, आं अनन्तविरजाभ्यां नमः इत्यादि। इस प्रकार 'अ' से 'क्ष'-पर्यन्त न्यास करने के पश्चात् सामान्य पूजापद्धति में बताये गये पीठन्यास को सम्पन्न करके हृदयकमल के पूर्वादि केशरों पर पीठशक्ति का न्यास करना चाहिये। 'वामायै नमः' से आरम्भ कर 'सर्वभूतदमन्यै नमः' तक के मूलोक्त नामों से यह न्यास करने के बाद मध्य में 'ॐ मनोन्मन्यै नमः' से न्यास करके उसके उपरिभाग में 'ॐ नमो भगवते सकलगुणात्मशक्तियुक्तायानन्ताय योगपीठात्मने नमः' से न्यास करना चाहिये।।३।।

तत ऋष्यादिन्यासः। शिरसि वामदेवाय ऋषये नमः। मुखे पंक्तिच्छन्दसे नमः, हृदि सदाशिवाय देवतायै नमः। ततः कराङ्गन्यासौ। हां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः इत्यादिषड्दीर्घयुक्तेन न्यसेत्। एवं हृदयादिषु। तत ईशानाद्याः करयोः पञ्चमूर्तिर्न्यसेत्। यथा अङ्गुष्ठयोः हों ईशानाय नमः, तर्जन्योः हें तत्पुरुषाय नमः, मध्यमयोः हुं अघोराय नमः, अनामिकयोः हिं वामदेवाय नमः, कनिष्ठयोः हं सद्योजाताय नमः। ततस्तत्तदङ्गुलीभिः हों ईशानाय नमः इत्यादि शिरोवदनहृद्गुह्यपादेषु पञ्चमूर्त्तिर्न्यसेत्। तत ऊर्द्ध्वप्राग्दक्षिणोदीच्यपश्चिममुखेषु तत्तदङ्गुलीभिस्तत्तद्बीजैस्तत्तन्मूर्त्तिर्न्यसेत्। शूद्रस्तु एतत्पर्यन्तं न्यासं कृत्वा ध्यायेत्; अन्यत्राऽनधिकारात्॥४॥

तत्पश्चात् ऋष्यादि न्यास करना चाहिये। इसका विनियोग इस प्रकार किया जाता है—ॐ अस्य श्रीप्रासादमन्त्रस्य वामदेव ऋषिः पंक्तिः छन्दः सदाशिवो देवता हं बीजं

औं शक्तिः सर्वसिद्धिलाभार्थे न्यासे विनियोगः। विनियोग करने के उपरान्त मस्तक पर ॐ वामदेवाय ऋषये नमः, मुख में ॐ पंक्तिच्छन्दसे नमः, हृदय में ॐ सदाशिवाय देवतायै नमः, गुह्य में ॐ हौं बीजाय नमः, दोनों पैरों में ॐ औं शक्तये नमः मन्त्रों से न्यास किया जाता है। तदनन्तर 'ह' में क्रमशः एक-एक दीर्घ स्वर लगाते हुये ॐ हां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ॐ हां हृदयाय नमः इत्यादि प्रकार से कराङ्गन्यास करना चाहिये।

इसके बाद अंगुष्ठादि में इस प्रकार न्यास करना चाहिये—दोनों अंगूठों में ॐ हों ईशानाय नमः, दोनों तर्जनियों में ॐ हें तत्पुरुषाय नमः, दोनों मध्यमाओं में ॐ हुं अघोराय नमः, दोनों अनामिकाओं में ॐ हिं वामदेवाय नमः, दोनों कनिष्ठिकाओं में ॐ हं सद्योजाताय नमः।

अब समष्टि अंगुष्ठ से (दोनों अंगूठे से) मस्तक, साङ्गुष्ठ तर्जनी द्वारा मुख, अंगुष्ठा-मध्यमा से हृदय, अंगुष्ठ-अनामिका द्वारा गुह्य तथा अंगुष्ठ-कनिष्ठा द्वारा पाददेश में उपरोक्त ॐ ईशानाय नमः इत्यादि मन्त्रों से पञ्चमूर्त्ति न्यास करना चाहिये। इसके पश्चात् अपने मस्तक में कल्पित ऊर्ध्व मुख में पूर्वोक्त 'ॐ हों ईशानाय नमः' से तथा इसी प्रकार कल्पित (मस्तक में) पूर्वमुख, दक्षिणमुख, उत्तरमुख तथा पश्चिममुख में क्रमशः 'ॐ हें तत्पुरुषाय नमः, ॐ हुं अघोराय नमः, ॐ हिं वामदेवाय नमः, ॐ हं सद्योजाताय नमः' से मूर्त्तिन्यास करना चाहिये। शूद्रों को यहीं तक न्यास करना चाहिये; क्योंकि उन्हें अन्य न्यासों को करने का अधिकार नहीं है।।४।।

ततः पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरमध्यमुखेषु ईशानस्य शशिन्यादिपञ्चकला ईशान इत्यादि ब्रह्मऋचपदादिकाः प्रणवाद्यनमोऽन्ता न्यसेत्; यथा—ॐ ईशानः सर्वविद्यानां ॐ शशिन्यै कलायै नमः, ईश्वरः सर्वभूतानां ॐ अङ्गदायै कलायै नमः, ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्मा ॐ इष्टदायै कलायै नमः, शिवो मेऽस्तु ॐ मरीच्यै कलायै नमः, सदाशिवोम् ॐ अंशुमालिन्यै कलायै नमः।।५।।

तदनन्तर ऊर्ध्वमुख, पूर्वमुख, दक्षिणमुख, पश्चिममुख तथा उत्तरमुखों में (जिसे साधक ने अपने मस्तक पर कल्पित किया था) ईशान की शशिनी-प्रभृति कला का न्यास करना चाहिये; जैसे—ऊर्ध्वमुख में ॐ ईशानः सर्वविद्यानां ॐ शशिन्यै कलायै नमः, पूर्वमुख में ॐ ईश्वरः सर्वभूतानां ॐ अंगदायै कलायै नमः, दक्षिणमुख में ॐ ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्मा ॐ इष्टदायै कलायै नमः, पश्चिममुख में ॐ शिवो

मेऽस्तु ॐ मरीच्यै कलायै नमः, उत्तरमुख में ॐ सदाशिवोम् ॐ अंशुमालिन्यै कलायै नमः।।५।।

ततः पूर्वपश्चिमदक्षिणोत्तरवक्त्रेषु तत्पुरुषस्य चतस्रः कलाः न्यसेत्। यथा ॐ तत्पुरुषाय विद्महे ॐ शान्त्यै कलायै नमः, महादेवाय धीमहि ॐ विद्यायै कलायै नमः, तन्नो रुद्रः ॐ प्रतिष्ठायै कलायै नमः, प्रचोदयात् ॐ निवृत्त्यै कलायै नमः।।६।।

तदनन्तर पूर्व, पश्चिम, दक्षिण तथा उत्तरमुख में तत्पुरुष की चार कला का न्यास करना चाहिये; जैसे—पूर्वमुख में ॐ तत्पुरुषाय विद्महे ॐ शान्त्यै कलायै नमः, पश्चिममुख में ॐ महादेवाय धीमहि ॐ विद्यायै कलायै नमः, दक्षिणमुख में ॐ तन्नो रुद्रः ॐ प्रतिष्ठायै कलायैः नमः, उत्तरमुख में ॐ प्रचोदयात् ॐ निवृत्त्यै कलायै नमः।।६।।

ततो हृदये ग्रीवायामंसद्वये नाभौ कुक्षौ पृष्ठे वक्षसि अघोरस्याष्टौ कलाः न्यसेत्। ॐ अघोरेभ्यः ॐ उमायै कलायै नमः, अथ घोरेभ्यः ॐ मोहायै कलायै नमः, घोरे ॐ क्षमायै कलायै नमः, अथः घोरतरेभ्यः ॐ निद्रायै कलायै नमः, सर्वतः शर्व ॐ व्याधये कलायै नमः, शर्वेभ्यः ॐ मृत्यवे कलायै नमः, नमस्तेऽस्तु ॐ क्षुधायै कलायै नमः, रुद्ररूपेभ्यः ॐ तृषायै कलायै नमः।।७।।

तत्पश्चात् हृदय, ग्रीवा, अंसद्वय, नाभि, कुक्षि, पृष्ठ तथा वक्ष में आठ अघोरकला का न्यास करना चाहिये; जैसे—हृदय में ॐ अघोरेभ्यः ॐ उमायै कलायै नमः, ग्रीवा में ॐ अथ घोरेभ्यः ॐ मोहायै कलायै नमः, दक्षिण स्कन्ध में ॐ घोर ॐ क्षमायै कलायै नमः, वाम स्कन्ध में ॐ घोरतरेभ्यः ॐ निद्रायै कलायै नमः, नाभि में ॐ सर्वतः सर्व ॐ व्याधये कलायै नमः, कुक्षि में ॐ शर्वेभ्यः ॐ मृत्यवे कलायै नमः, पृष्ठ में ॐ नमस्तेऽस्तु ॐ क्षुधायै कलायै नमः, वक्षःस्थल पर ॐ रुद्ररूपेभ्यः ॐ तृषायै कलायै नमः।।७।।

ततो गुह्ये, अण्डकोषे, ऊरुद्वये, जानुद्वये, जङ्घाद्वये, स्फिग्द्वये, कट्यां, पार्श्वयोः वामदेवस्य त्रयोदशकलाः न्यसेत्। यथा–ॐ वामदेवाय नमः ॐ ऊर्द्ध्वायै कलायै नमः, ज्येष्ठाय नमः ॐ रक्षायै कलायै नमः, रुद्राय नमः ॐ रत्यै कलायै नमः, कालाय नमः ॐ पालिन्यै कलायै नमः, कल ॐ कामायै कलायै नमः, विकरणाय नमः ॐ संयमिन्यै कलायै नमः, बल ॐ क्रियायै कलायै नमः, विकरणाय नमः ॐ

वृद्ध्यै कलायै नमः, बल ॐ स्थिरायै कलायै नमः, प्रमथनाय नमः ॐ रात्र्यै कलायै नमः, सर्वभूतदमनाय नमः ॐ भ्रामिण्यै कलायै नमः, मन ॐ मोहिन्यै कलायै नमः, उन्मनायै नमः ॐ जरायै कलायै नमः॥८॥

तदनन्तर गुह्य, अण्डकोष, ऊरुद्वय, जानुद्वय, जंघाद्वय, स्फिक्-द्वय, कटि एवं पार्श्वद्वय में वामदेव की बारह कलाओं का न्यास करना चाहिये; जैसे—गुह्य में ॐ वामदेवाय नमः ॐ ऊद्र्ध्वायै कलायै नमः, अण्डकोष में ॐ ज्येष्ठाय नमः ॐ रक्षायै कलायै नमः, दक्षिण ऊरु में ॐ रुद्राय नमः ॐ तुष्ट्यै कलायै नमः, वाम ऊरु में ॐ कालाय नमः ॐ कपालिन्यै कलायै नमः, दक्षिण जानु में ॐ विकरणाय नमः ॐ संयमिन्यै कलायै नमः, दक्षिण जंघा में ॐ बल ॐ क्रियायै कलायै नमः। वाम जंघा में ॐ विकरणाय नमः ॐ बुद्ध्यै कलायै नमः, दक्षिण स्फिक् में ॐ बल ॐ स्थिरायै कलायै नमः, वाम स्फिक् में ॐ प्रमथनाथाय नमः ॐ धात्र्यै कलायै नमः, कटि में ॐ सर्वभूतदमनाय नमः ॐ भ्रामिण्यै कलायै नमः, दक्षिण पार्श्व में ॐ नमः ॐ मोहिन्यै कलायै नमः, वाम पार्श्व में ॐ उन्मनाय नमः ॐ जयायै कलायै नमः।।८।।

ततः पादयोः हस्ततलयोः नासिकायां मूर्ध्नि बाहुयुग्मे सद्योजातस्याष्टौ कलाः न्यसेत्। यथा–ॐ सद्योजातं प्रपद्यामि ॐ सिद्ध्यै कलायै नमः, सद्योजाताय वै नमः ॐ बुद्ध्यै कलायै नमः, भवे ॐ द्युत्यै कलायै नमः, अभवे ॐ लक्ष्म्यै कलायै नमः, अनातिभवे ॐ मेधायै कलायै नमः, भजस्व मां ॐ प्रज्ञायै कलायै नमः, भव ॐ प्रभायै कलायै नमः, उद्भवाय नमः ॐ स्वधायै कलायै नमः॥९॥

तत्पश्चात् पादद्वय, दोनों हस्ततल, नासिका, मस्तक तथा बाहुद्वय में सद्योजात की आठ कलाओं का न्यास करना चाहिये; जैसे—दक्षिण पाद में ॐ सद्योजातं प्रपद्यामि ॐ सिद्ध्यै कलायै नमः, वाम पाद में ॐ सद्योजाताय वै नमः ॐ बुद्ध्यै कलायै नमः, दक्षिण हस्ततल में ॐ भवे ॐ मत्यै कलायै नमः, वाम हस्ततल में ॐ अभवे ॐ लक्ष्म्यै कलायै नमः, नासिका में ॐ अनातिभवे ॐ मेधायै कलायै नमः, मस्तक में ॐ भजस्व मां ॐ प्रज्ञायै कलायै नमः, दक्षिण बाहु में ॐ भव ॐ प्रभायै कलायै नमः, बाम बाहु में ॐ उद्भवाय नमः ॐ सुधायै कलायै नमः।।९।।

ततः पञ्चाङ्गुलीषु ईशानाद्याः पञ्च ऋचो न्यसेत्। यथा—

१. ॐ ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणो अधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मेऽस्तु सदाशिवोम्॥१०॥

२. ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्॥११॥

३. ॐ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः सर्वतः शर्वसर्वेभ्यो नमस्तेऽस्तु रुद्ररूपेभ्यः॥१२॥

४. ॐ वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमो रुद्राय नमो कालाय नमो कलविकरणाय नमो बलविकरणाय नमो बलप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मनाय नमः॥१३॥

५. ॐ सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमः।
भवे भवेऽनातिभवे भजस्व मां भवोद्भवाय नमः॥१४॥

तत्पश्चात् पाँचो अंगुलियों में ऋक् न्यास करना चाहिये; यथा—

अंगुष्ठद्वय में—ॐ ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मेऽस्तु सदाशिवोम् अंगुष्ठाभ्यां नमः।

तर्जनी में—ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् तर्जनीभ्यां स्वाहा।

मध्यमा में—ॐ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः सर्वतः सर्वशर्वेभ्यो नमस्तेऽस्तु रुद्ररूपेभ्यः मध्यमाभ्यां वषट्।

अनामिका में—ॐ वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमो रुद्राय नमो कालाय नमो कलविकरणाय नमो बलाय नमो बलप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मनाय नमः अनामिकाभ्यां हुं।

कनिष्ठाद्वय में—ॐ सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमः। भवेऽभवेनातिभवे भजस्व मां भवोद्भवाय नमः कनिष्ठाभ्यां वौषट्।।१०-१४।।

एवं मूर्द्धास्यहृदयगुह्यपादेषु एता ऋचो न्यसेत्। ततोऽङ्गन्यासान्तरं कुर्यात्। यथा—ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः सर्वज्ञाय हृदयाय नमः, अमृततेजोमालिने नित्यतृप्ताय ब्रह्मणे शिरसे स्वाहा, ज्वलितशिखिशिखाय अनादिबोधाय शिखायै वषट्, वज्रिणे वज्रहस्ताय स्वतन्त्राय कवचाय हुं, सौं वौं हौं पुरतो लुप्तशक्तये नेत्रत्रयाय वौषट्, श्लीं ह्लीं पशुं हुं फट् अनन्तशक्तये अस्त्राय फट्॥१५॥

इसी प्रकार मस्तक, मुख, हृदय, गुह्य तथा पाद—यहाँ भी पाँच ऋङ्मन्त्रों का न्यास करना चाहिये। तत्पश्चात् अन्य रूप से अंगन्यास करना चाहिये; जैसे—ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः सर्वज्ञाय हृदयाय नमः, ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः अमृततेजोमालिने नित्यतृप्ताय ब्रह्मशिरसे स्वाहा, ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः ज्वलितशिखिशिखायानादिबोधाय शिखायै

वषट्, ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः वज्रिणे वज्रहस्ताय कवचाय हुं, सौं वौं हौं परतोऽलुप्तशक्तये नेत्रत्रयाय वौषट्, श्लीं ह्लीं पशुं हुं फट् अनन्तशक्तये अस्त्राय फट्।।१५।।

ततो ध्यानम्—

मुक्तापीतपयोदमौक्तिकजवावर्णैर्मुखैः पञ्चभि-
स्त्र्यक्षैरञ्चितमीशमिन्दुमुकुटं पूर्णेन्दुकोटिप्रभम्।
शूलं टङ्ककृपाणवज्रदहनान् नागेन्द्रघण्टाङ्कुशान्
पाशं भीतिहरं दधानममिताकल्पोज्ज्वलाङ्गं भजे ।।१६।।

इसके पश्चात् इस प्रकार ध्यान करना चाहिये—मुक्तावर्ण ऊर्ध्वमुख, पीतवर्ण पूर्वमुख, नीलमेघ वर्ण दक्षिणमुख, मुक्तावर्ण पश्चिममुख तथा जवावर्ण उत्तरमुख—इन पाँच मुखों से युक्त, तीन नयनों से भूषित, चन्द्रमौलि, कोटि-कोटि पूर्णेन्दु की प्रभा के समान प्रभायुक्त, दक्षिण के ऊर्ध्वादि हस्त में शूल, टंक, कृपाण, वज्र तथा अग्नि एवं वाम के ऊर्ध्वादि हस्त में सर्पराज, घण्टा, अंकुश, पाश तथा अभय मुद्रा धारण करने वाले, अपरिमित भूषणों से उज्ज्वल ईश का मैं भजन करता हूँ।।१६।।

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्यार्घ्यं संस्थाप्य शैवोक्तपीठमन्वन्तां पीठपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणानि पूजयेत्। यथा—ऐशान्यां ॐ ईशानाय नमः, पूर्वे तत्पुरुषाय, दक्षिणे अघोराय, उत्तरे वामदेवाय, पश्चिमे सद्योजाताय। तत ईशानादिकोणेषु निवृत्त्यै, प्रतिष्ठायै, विद्यायै, शान्त्यै। अष्टपत्रेषु येषु पूर्वादितः अनन्ताय, सूक्ष्माय, शिवोत्तमाय, एकनेत्राय, एकरुद्राय, त्रिनेत्राय, श्रीकण्ठाय, शिखण्डिने। उत्तरादिपत्राग्रेषु उमायै, चण्डेश्वराय, नन्दिने, महाकालाय, गणेशाय, वृषाय, भृङ्गरीटाय, स्कन्दाय। तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्।।१७।।

उपर्युक्त रीति से ध्यान करके मानसोपचार पूजन, विशेष अर्घ्य-स्थापन, शैव पीठमन्त्र से पीठपूजा, पुनः ध्यान तथा आवाहन से लेकर पञ्चपुष्पाञ्जलि दान-पर्यन्त कर्म सम्पन्न करके आवरण पूजा करनी चाहिये। आवरण पूजन का क्रम इस प्रकार है; यथा—ईशान में ॐ ईशानाय नमः, पूर्व में ॐ तत्पुरुषाय नमः, दक्षिण में ॐ अघोराय नमः, उत्तर में ॐ वामदेवाय नमः, पश्चिम में ॐ सद्योजाताय नमः। तत्पश्चात् ईशानादि कोण में ॐ निवृत्त्यै नमः, ॐ प्रतिष्ठायै नमः, ॐ विद्यायै नमः, ॐ शान्त्यै नमः।

तदनन्तर पूर्ववत् षडङ्गपूजनोपरान्त पूर्वादि अष्टपत्रों में 'ॐ अनन्ताय नमः, ॐ

सूक्ष्माय नमः, ॐ शिवोत्तमाय नमः, ॐ एकनेत्राय नमः, ॐ एकरुद्राय नमः, ॐ त्रिनेत्राय नमः, ॐ श्रीकण्ठाय नमः, ॐ शिखण्डिने नमः' कह कर पूजन करने के पश्चात् उत्तरादि पत्राग्र में 'ॐ उमायै नमः, ॐ चण्डेश्वराय नमः, ॐ नन्दिने नमः, ॐ महाकालाय नमः, ॐ गणेशाय नमः, ॐ वृषाय नमः, ॐ भृङ्गिरीटाय नमः, ॐ स्कन्दाय नमः' द्वारा पूजन करना चाहिये।

अब उसके बाहर इन्द्रादि लोकपालों तथा उनके वज्रादि अस्त्रसमूह का पूजन करके धूपदान से लेकर विसर्जन-पर्यन्त समस्त कृत्य सम्पन्न करना चाहिये।।१७।।

अस्य पुरश्चरणं पञ्चलक्षजपः। यथा—

एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं पञ्चलक्षं मधुप्लुतैः।
प्रसूनैः करवीरोत्थैर्जुहुयात् तद्दशांशतः ॥१८॥

इस मन्त्र का पुरश्चरण पाँच लाख जप से सम्पन्न होता है; जैसा कि कहा भी है— इस प्रकार ध्यान करके मन्त्र का पाँच लाख जप करने के उपरान्त मधु से लिपटे कनेरपुष्पों द्वारा पचास हजार होम करना चाहिये।।१८।।

अथ मन्त्रान्तरम्—

हृदयं वपरं साक्षिलान्तोऽनन्तान्वितो मरुत्।
पञ्चाक्षरो मनूः प्रोक्तस्ताराद्योऽयं षडक्षरः ॥१९॥

अब शिव का मन्त्रान्तर कहते हैं। प्रथमतः हृदय (नमः) तत्पश्चात् अक्षि (इ) युक्त वपर (श) अर्थात् 'शि' तदनन्तर अनन्त (आ) युक्त लान्त (वा), तत्पश्चात् मरुत् (य); यह शिव का पञ्चाक्षर मन्त्र है, जो आदि में प्रणव के योग से षडक्षर होता है।।१९।।

वपरं तालव्यशकारः साक्षि तृतीयस्वरवत् लान्तो वकारः। अनन्तरं आकारः। मरुत् यकारः—इत्येकः। प्रणवादिश्चेदपरः॥२०॥

वपर तालव्य शकार, साक्षि तृतीय स्वर 'इ'। अनन्त आ। मरुत् य। आदि में प्रणव लगाने पर यह षडक्षर हो जाता है। मन्त्रोद्धार होता है—ॐ नमः शिवाय।।२०।।

अनयोः पूजा। प्रातःकृत्यादि शैवोक्तपीठमवन्तं न्यासं विधाय ऋष्यादीन् न्यसेत्। वामदेव ऋषिः पंक्तिश्छन्दः ईशानो देवता। ततो मूर्त्तिन्यासः— तर्जन्योः नं तत्पुरुषाय नमः, मध्यमयोः मं अघोराय नमः, कनिष्ठयोः शिं सद्योजाताय नमः, अनामिकयोः वां वामदेवाय नमः, अङ्गुष्ठयोः यं ईशानाय नमः॥२१॥

उपर्युक्त दोनों मन्त्रों की पूजा-पद्धति इस प्रकार है—प्रातःकृत्य से लेकर शैवोक्त

पीठमन्त्र-पर्यन्त न्यास करके ऋष्यादि न्यास करना चाहिये। यथा—अस्य श्रीशिवमन्त्रस्य वामदेव ऋषिः पङ्क्तिश्छन्दः ईशो देवता ॐकारो बीजं उं शक्तिः ममाभीष्टसिद्ध्यर्थं पूजने विनियोगः। विनियोग के उपरान्त न्यास का क्रम इस प्रकार है—मस्तक पर ॐ वामदेवाय ऋषये नमः, मुख में ॐ पंक्तिछन्दसे नमः, हृदय में ॐ ईशाय देवतायै नमः, गुह्य में ॐ बीजाय नमः, पैरों पर ॐ उं शक्तये नमः।।२१।।

तत्पश्चात् मूर्त्तिन्यासः—तर्जनीद्वये ॐ नं तत्पुरुषाय नमः, मध्यमाद्वये ॐ मं अघोराय नमः, कनिष्ठाद्वये ॐ शिं सद्योजाताय नमः, अनामिकाद्वये ॐ वां वामदेवाय नमः, अङ्गुष्ठद्वये ॐ यं ईशानाय नमः।

निबन्धे—

मन्त्रवर्णादिका न्यसेत् पञ्चमूर्त्तिर्यथाक्रमम्।
तर्जनीमध्ययोरन्त्यानामिकाङ्गुष्ठके पुनः ॥२२॥

तत्पश्चात् दोनों तर्जनियों में ॐ नं तत्पुरुषाय नमः से, दोनों मध्यमाओं में ॐ मं अघोराय नमः से, दोनों कनिष्ठाओं में ॐ शिं सद्योजाताय नमः से, दोनों अनामिकाओं में ॐ वां वामदेवाय नमः से एवं दोनों अंगूठों में ॐ यं ईशानाय नमः से मूर्त्तिन्यास करना चाहिये; जैसा कि निबन्ध में कहा भी है कि देशिक व्यक्ति को क्रमशः तर्जनी, मध्यमा, अन्त्या (कनिष्ठा), अनामिका तथा अंगुष्ठ में यथाक्रमेण मन्त्रवर्णादि पञ्चमूर्त्ति न्यास करना चाहिये।।२२।।

एवं वक्त्रहृदयपादद्वयगुह्यमूर्द्धसु ताः न्यसेत्। एवं प्राग्याम्यवारुणोदीच्यमध्यवक्त्रेषु ताः न्यसेत्। ततः कराङ्गन्यासौ—ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। नं तर्जनीभ्यां स्वाहेत्यादि। एवं हृदयादिषु। यथा निबन्धे—

षड्भिर्वर्णैः षडङ्गानि कुर्यान् मन्त्रस्य देशिकः ॥२३॥

इसी प्रकार वक्त्र, हृदय, पादद्वय, गुह्य तथा मस्तक में पूर्वोक्त रूप से मन्त्र द्वारा पञ्चशक्तियों (मूर्त्तियों) का न्यास करना चाहिये। इस प्रकार पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर तथा मध्य मुख में (इसी प्रकार) पञ्चमूर्त्ति न्यास करना चाहिये। तत्पश्चात् करन्यास एवं अंगन्यास करना चाहिये; जैसे—ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, नं तर्जनीभ्यां स्वाहा, मं मध्यमाभ्यां वषट्, शिं अनामिकाभ्यां हुं, वां कनिष्ठाभ्यां वौषट्, यं करतलपृष्ठाभ्यां फट्। इसी प्रकार ॐ हृदयाय नमः इत्यादि प्रकार से हृदयादि में अंगन्यास करना चाहिये। जैसा कि निबन्ध मैं कहा भी है कि देशिक को मन्त्र के छः वर्णों से षड़ङ्ग न्यास करना चाहिये।।२३।।

ततो गोलकन्यासः—हृदि ॐ नमः, मुखे नं नमः, अंसयोः मों नमः

शिं नमः, ऊर्वोः वां नमः यं नमः। एवं कण्ठे नाभौ पार्श्वद्वये, पृष्ठे, हृदि। एवं मूर्ध्नि, वदने नेत्रयोर्नसि। एवं करगतसन्धिषु साग्रेषु। एवं शिरोवदनहृत्कुक्ष्यूरुपादद्वये। एवं हृदि वक्त्रे टङ्कमृगोभयवरेषु। एवं वक्त्रांशहृत्पादोरुजठरेषु। एवं मूर्धभालोदरांसहृदयेषु ताः पञ्चमूर्त्तिर्न्यसेत्॥२४॥

ततः—

ॐ नमोऽस्तु स्थाणुरूपाय ज्योतिर्लिङ्गामृतात्मने।
चतुर्मूर्त्तिवपुच्छायाभासिताङ्गाय शम्भवे॥

इत्यनेन व्यापकं कुर्यात्॥२५॥

तदनन्तर गोलक न्यास इस प्रकार करना चाहिये—हृदय में ॐ नमः, मुख में नं नमः, दोनों कन्धों पर मों नमः-शिं नमः, दक्षिण ऊरु में ॐ वां नमः, वाम ऊरु में ॐ यं नमः। यह प्रथम आवृत्ति होती है।

इसी प्रकार से कण्ठ, नाभि, पार्श्वद्वय, पृष्ठ एवं हृदस में न्यास करना चाहिये। यह द्वितीय आवृत्ति होती है।

इसी प्रकार मस्तक, मुख (चेहरा), दोनों नेत्र, दोनों नासिका में न्यास करना चाहिये। यह तृतीय आवृत्ति होती है।

इसी प्रकार दाहिने हाथ की अंगुलियों की मध्यवर्ती सन्धियों तथा उनके अग्रभाग में न्यास करना चाहिये। यह चतुर्थ आवृत्ति होती है।

इसी प्रकार वाम हस्त की अंगुलियों की मध्यवर्ती सन्धियों तथा उनके अग्रभाग में न्यास करना चाहिये। यह पञ्चम आवृत्ति होती है।

इसी प्रकार दक्षिण पैर के अंगुलियों की मध्यवर्ती सन्धियों तथा उनके अग्रभाग में न्यास करना चाहिये। यह षष्ठ आवृत्ति होती है।

इसी प्रकार वाम पाद के पैर की अंगुलियों की मध्यवर्ती सन्धियों एवं उनके अग्रभाग में न्यास करना चाहिये। यह सप्तम आवृत्ति होती है।

इसी प्रकार मस्तक, मुख, हृदय, कुक्षि, ऊरुसहित दक्षिण तथा वाम पार्श्व में न्यास करना चाहिये। यह अष्टम आवृत्ति होती है।

इसी प्रकार हृदय, मुखपद्म तथा अपने शरीर में चार हाथों की कल्पना करके न्यास करना चाहिये। यह नवम आवृत्ति होती है।

इसी प्रकार मुख, अंसद्वय, हृदय, पैरों के साथ ऊरु तथा पेट में न्यास करना चाहिये। यह दशम आवृत्ति होती है।

अंगुलियों के द्वारा मन्त्र के एक-एक वर्ण को उनके आदि में प्रणव लगाकर न्यास करना चाहिये।

इसके अनन्तर पूर्वोक्त पञ्चमूर्त्ति न्यास पुन: मस्तक, ललाट, उदर, अंसद्वय तथा हृदय में करना चाहिये। तत्पश्चात् 'ॐ नमोऽस्तु स्थाणुरूपाय ज्योतिर्लिङ्गामृतात्मने। चतुर्मूर्त्तिवपुच्छायाभासिताङ्गाय शम्भवे' इस मन्त्र से समस्त शरीर में व्यापक न्यास करना चाहिये।।२४-२५।।

ततो ध्यानम्—

ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसं
रत्नाकल्पाज्ज्वलाङ्गं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम्।
पद्मासीनं समन्तात् स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानं
विश्वाद्यं विश्वबीजं निखिलभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम्।।२६।।

तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करना चाहिये—रजत वर्ण पर्वत के समान शुभ्र वर्ण वाले, सुन्दर चन्द्र के किरीट को धारण करने वाले, परशु, मृगमुद्रा, वरमुद्रा तथा अभय मुद्रा धारण करने वाले, चारो ओर से देवताओं द्वारा वन्दित, व्याघ्रचर्म के परिधान से युक्त, विश्व के आदि कारण, विश्वरूप, समस्त भयहारी, पाँच मुखों वाले एवं तीन नेत्र वाले महेश का सर्वदा ध्यान करना चाहिये।।२६।।

एवं ध्यात्वा मानसोपचारै: सम्पूज्यार्घ्यस्थापनशैवोक्तपीठपूजादि विधाय पुनर्ध्यात्वावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं कर्म विधायावरणपूजामाचरेत्। यथा कर्णिकायां पूर्ववत् ईशानादिपञ्चमूर्त्तिं सम्पूज्य केशरेषु निवृत्त्यादिकला: पूर्ववत् पूजयेत्। तत अग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च ॐ हृदयाय नम:, नं शिरसे स्वाहा, मं शिखायै वषट् इत्यादिना सम्पूज्य पूर्ववदनन्तादीन् सम्पूज्य उत्तरादित उमादीन् तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्।।२७।।

इस प्रकार ध्यान करने के उपरान्त मानसोपचार पूजन, विशेषार्घ्य-स्थापन, शैवोक्त पीठपूजा-प्रभृति कर्मों को सम्पादित करके पुन: ध्यान तथा आवाहन से पञ्चपुष्पाञ्जलि निवेदन-पर्यन्त विधानोपरान्त आवरण पूजा करनी चाहिये; जैसे कर्णिका के ईशान कोण में ॐ ईशानाय नम: से एवं पूर्वादि चारो दिशाओं में क्रमश: ॐ तत्पुरुषाय नम:, ॐ अघोराय नम:, ॐ वामदेवाय नम: ॐ सद्योजाताय नम: से

पूजन करना चाहिये। तदनन्तर केशरसमूह में यथा क्रमेण अग्न्यादि कोणों में ॐ निवृत्त्यै नमः, ॐ प्रतिष्ठायै नमः, ॐ विद्यायै नमः, ॐ शान्त्यै नमः से तथा ईशान कोण में ॐ शान्त्यतीतायै नमः से इनका पूजन करना चाहिये। तदनन्तर अग्न्यादि कोण में, मध्य में तथा दिक्समूह में ॐ हृदयाय नमः, नं शिरसे स्वाहा, मं शिखायै वषट् इत्यादि मन्त्रों से षडंग पूजन करके पत्रमध्य में ॐ अनन्ताय: नमः, ॐ सूक्ष्माय नमः, ॐ शिवोत्तमाय नमः, ॐ एकनेत्राय नमः, ॐ एकरुद्राय नमः, ॐ त्रिनेत्राय नमः, ॐ श्रीकण्ठाय नमः तथा ॐ शिखण्डिने नमः मन्त्र से तत्तत् विघ्नेश्वरों का पूजन करना चाहिये। इसके पश्चात् पद्मासन के उत्तरादि दिक् से प्रारम्भ करके क्रमशः ॐ उमायै नमः, ॐ चण्डेश्वराय नमः, ॐ नन्दिने नमः, ॐ महाकालाय नमः, ॐ गणेशाय नमः, ॐ भृङ्गिरीटिने नमः, ॐ स्कन्दाय नमः मन्त्रों से उमा, चण्डेश्वर, नन्दी, महाकाल, गणेश, भृंगिरीट तथा स्कन्द की पूजा करके दल के बाहरी भाग में इन्द्रादि लोकपालों तथा उनके वज्रादि अस्त्रसमूह का पूजन करने के उपरान्त धूपदान से विसर्जन-पर्यन्त शेष कृत्य का सम्पादन करना चाहिये।।२७।।

अस्य पुरश्चरणं षट्त्रिंशल्लक्षजपः। यथा—

तत्त्वलक्षं जपेन्मन्त्रं दीक्षितः शिववर्त्मना।
तावत्सख्यं सहस्राणि जुहुयात् पायसैः शुभैः ॥२८॥
अत्र तत्त्वशब्देन षट्त्रिंशत्तत्त्वमुक्तम्, अन्तरङ्गत्वात्।

इस मन्त्र का पुरश्चरण छत्तीस लाख जप से सम्पन्न होता है। कहा भी है कि दीक्षित साधक को शैवोक्त प्रक्रिया से तत्त्व अर्थात् छत्तीस लाख जप तथा सुन्दर पायस से उतने ही सहस्र अर्थात् छत्तीस हजार होम करना चाहिये।।२८।।

यहाँ 'तत्त्व' शब्द से छत्तीस तत्त्वों का निर्देश किया गया है; क्योंकि शैवमत में तत्त्वों की संख्या छत्तीस ही होती है।

अथ मन्त्रान्तरं निबन्धे—

षडक्षरः शक्तिरुद्धः कथितोऽष्टाक्षरः परः ॥२९॥

शक्तिर्माया। तेन 'ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं' इति मन्त्रः।

निबन्ध में एक अन्य मन्त्र इस प्रकार कहा गया है—षडक्षर 'ॐ नमः शिवाय' मन्त्र ही शक्ति द्वारा पुटित होने पर अष्टाक्षर मन्त्र हो जाता है। शक्ति अर्थात् माया (ह्रीं); अतः मन्त्रोद्धार होता है—ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं।।२९।।

विशेष—इस मन्त्र के ऋषि वामदेव, छन्द पंक्ति, देवता उमापति, बीज प्रणव तथा शक्ति माया कही गयी है।

अस्य पूजा–प्रातःकृत्यादिशैवोक्तपीठमन्वन्तं पीठन्यासं विधाय ऋष्यादीन् न्यसेत्। वामदेव ऋषिः पक्तिश्छन्दः उमापतिर्देवता। ततः कराङ्गन्यासौ– ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, नं तर्जनीभ्यां स्वाहा, मं मध्यमाभ्यां वषट्, शिं अनामिकाभ्यां हुं, वां कनिष्ठाभ्यां वौषट्, यः करतलपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु।।३०।।

प्रातःकृत्य से लेकर शैवोक्त पीठमन्त्र-पर्यन्त पीठन्यास करके ऋष्यादि न्यास करना चाहिये; जैसे—अस्य श्रीशिवमन्त्रस्य वामदेव ऋषिः पङ्क्तिश्छन्दः उमापतिर्देवता प्रणवो बीजं माया शक्तिर्ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे पूजने विनियोगः। इस प्रकार विनियोग करने के उपरान्त मस्तक पर ॐ वामदेवाय ऋषये नमः, मुख में ॐ पंक्तिश्छन्दसे नमः, हृदय में ॐ उमापतिदेवतायै नमः, गुह्य में ॐ बीजाय नमः, पादद्वय में ॐ ह्रीं शक्तये नमः मन्त्रों से न्यास किया जाता है। तदनन्तर करन्यास तथा अंगन्यास भी आवश्यक है; यथा—ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ॐ नं तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ मं मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ शिं अनामिकाभ्यां हुं, ॐ वां कनिष्ठाभ्यां वौषट्, ॐ यः करतलपृष्ठाभ्यां फट्। इसी प्रकार हृदयादि में भी अंगन्यास किया जाता है।।३०।।

विशेष—राघवभट्ट ने पदार्थादर्श ग्रन्थ में मन्त्र भी कहा है—ॐ ह्रां, ॐ हृत्, नं शिरः इत्यादि; परन्तु तन्त्रसार में यह मान्य नहीं है।

ध्यानन्तु—

बन्धूकाभं त्रिनेत्रं शशिशकलधरं स्मेरवक्त्रं वहन्तं
हस्तैः शूलं कपालं वरदमभयदं चारुहासं नमामि।
वामोरुस्तम्भगायाः करतलविलसच्चारुरक्तोत्पलायाः
हस्तेनाश्लिष्टदेहं मणिमयविलसद्भूषणायाः प्रियायाः ।।३१।।

इनका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—बन्धूकपुष्प के समान रक्त वर्ण वाले, तीन नेत्र वाले, चन्द्रकला को धारण करने वाले, अपने वाम ऊरु पर आसीन मणिमय उज्ज्वल आभूषण से भूषित एवं वाम हस्त में विकसित रक्तवर्ण कमल धारण करने वाली प्रिया के दाहिने हाथ से आलिंगित शरीर वाले, मधुर हास्य से युक्त उमापति की मैं स्तुति करता हूँ।।३१।।

इति ध्यात्वा मानसपूजार्घ्यस्थापने कृत्वा शैवोक्तपीठमन्वन्तं पीठपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणानि पूजयेत्। तत्र प्रथममङ्गावरणं केशरेष्वग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च ॐ हृदयाय नमः इत्यादिना पूजयेत्। ततो मध्ये पूर्वादिदिक्षु च हृल्लेखां गगनां रक्तां

करालिकां महोच्छूष्माम्। पूर्वादिपत्रेषु वृषभं क्षेत्रपालं चण्डेशं दुर्गां कार्त्तिकेयं नन्दिनं विनायकं सेनापतिम्। पत्राग्रेषु पूर्ववदुमादीन्, तद्बाह्ये ब्राह्म्याद्या मातृस्तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं चतुर्द्दशलक्षजपः॥३२॥

इस प्रकार ध्यान, मानसोपचार पूजन, विशेषार्घ्य-स्थापन, शैवोक्त पीठमन्त्र-पूजन पर्यन्त कार्य सम्पन्न करने के बाद पुनः ध्यान, आवाहन से पुष्पाञ्जलि निवेदन-पर्यन्त विधानोपरान्त आवरण देवगण का पूजन करना चाहिये। उसमें प्रथम अंगावरण में केशर के अग्नि आदि कोण में, मध्य में तथा दिक्समूह में ॐ हृदयाय नमः इत्यादि मन्त्रों से षडंग देवगण का पूजन करना चाहिये। तदनन्तर कर्णिका के मध्य में तथा पूर्वादि दिशाओं में ॐ ह्रों हृल्लेखायै नमः, ॐ ह्रें गगनायै नमः, ॐ ह्रीं रक्तायै नमः, ॐ ह्रिं करालिकायै नमः, ॐ ह्रं महोच्छूष्मायै नमः द्वारा पूजन करना चाहिये। तदनन्तर पत्र के पूर्वादि दिक्क्रम में ॐ वृषभाय नमः, ॐ क्षेत्रपालाय नमः, ॐ चण्डेशाय नमः, ॐ दुर्गायै नमः, ॐ कार्त्तिकेयाय नमः, ॐ नन्दिने नमः, ॐ विनायकाय नमः, ॐ सेनापतये नमः से पूजन करना चाहिये। पत्र के आगे ॐ उमायै नमः, ॐ चण्डेश्वराय नमः, ॐ नन्दिने नमः, ॐ महाकालाय नमः, ॐ गणेशाय नमः, ॐ वृषभाय नमः, ॐ भृंगिरीटिने नमः तथा ॐ स्कन्दाय नमः द्वारा पूजन करना चाहिये। तत्पश्चात् पत्र के अग्रभाग में उनके-उनके बीजों को आगे रखकर ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, इन्द्राणी, चामुण्डा तथा महालक्ष्मी का पूजन करना चाहिये। अब दल के बहिर्भाग में इन्द्रादि लोकपाल तथा उनके वज्रादि अस्त्रों का पूजन करके धूपदान से लेकर विसर्जन-पर्यन्त समस्त विधान सम्पन्न करना चाहिये। इस मन्त्र का पुरश्चरण चौदह लाख जप से सम्पन्न होता है।।३२।।

तथा—

मनुलक्षं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं यथाविधि।
जुहुयान् मधुरासिक्तैरारग्वधसमिद्वरै॥

आरग्वधः सोनालूः॥३३॥

शारदातिलक में कहा भी है कि यथाविधि चौदह लाख (मनुलक्ष) जप एवं उस जप का दशांश हवन मधुराप्लुत आरग्वध (सोनालू) वृक्ष की उत्तम समिधा से करना चाहिये।।३३।।

निबन्धे—

तारो माया वियद्बिन्दुमनुस्वरसमन्वितः।
पञ्चाक्षरसमायुक्तो वसुवर्णो मनुर्मतः॥३४॥

तेन ॐ ह्रीं हौं नमः शिवाय इति हरगौरीमन्त्रः।

निबन्ध (शारदातिलक) में अन्य मन्त्र का निरूपण करते हुये कहा गया है कि तार (ॐ), माया (ह्रीं), विन्दु तथा चौदहवां स्वर (औ) युक्त वियत् (ह) को पञ्चाक्षर मन्त्र में युक्त करने से यह अष्टाक्षर मन्त्र होता है। इससे 'ॐ ह्रीं हौं नमः शिवाय' इस हरगौरी मन्त्र का उद्धार होता है।।३४।।

अस्य पूजा—पञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तमुक्ताष्टाक्षरवत् कृत्वा पूर्ववदङ्गानि सम्पूज्य शैवोक्तदिशापत्रेष्वनन्तादीन्, पत्राग्रे उमादीन्, तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कुर्यात्।।३५।।

अब इस मन्त्र की पूजापद्धति को स्पष्ट करते हुये कहते हैं कि पूर्वोक्त पञ्चाक्षर मन्त्र के समान ही पञ्च पुष्पाञ्जलिदान-पर्यन्त समस्त कृत्य सम्पन्न करने के पश्चात् पूर्ववत् अंगदेवता की पूजा करके शैवोक्त रीति से पत्रसमूह में अनन्त-प्रभृति की, पत्र के अग्रभाग में उमा-प्रभृति की, उसके बाहरी भाग में इन्द्रादि लोकपाल तथा वज्र आदि अस्त्रों की पूजा करके धूपदान से विसर्जन तक का कृत्य सम्पन्न करना चाहिये।।३५।।

ध्यानन्तु—

वन्दे सिन्दूरवर्णं मणिमुकुटलसच्चारुचन्द्रावतंसं
भालोद्यन्नेत्रमीशं स्मितमुखकमलं दिव्यभूषाङ्गरागम्।
वामोरुर्न्यस्तपाणेररुणकुवलयं सन्दधत्याः प्रियायाः
वृत्तोत्तुङ्गस्तनाग्रे निहितकरतलं वेदटङ्केषुहस्तम्।।३६।।

ध्यान इस प्रकार किया जाता है—सिन्दूर वर्ण वाले, मणिमय मुकुट की प्रभा से उज्ज्वल, चारु चन्द्रयुक्त शिरोभूषण-भूषित, ललाट से उद्गत नेत्र, ईषत् हास्ययुक्त मुखकमल, दिव्य भूषण-भूषित, अंगराग से रंजित, वाम ऊरु पर न्यस्त दक्षिण हस्त जो वाम हस्त में अरुण कुवलय धारण की हुई प्रिया के सुन्दर उच्च वाम स्तनाग्र पर छिपे हुये हैं, वर, वेद तथा टंकधारी ईश्वर की मैं वन्दना करता हूँ।।३६।।

निबन्धे—

अष्टलक्षं जपेन् मन्त्री मन्त्रं मन्त्रविदां वरः।
तत्सहस्रं प्रजुहुयात् पायसान्नैर्घृतप्लुतैः।।३७।।

शारदतिलक निबन्ध में कहा है कि मन्त्रवित् श्रेष्ठ साधक को इसका आठ लाख जप तथा घृत में पायस का मिश्रण करके आठ हजार होम करना चाहिये।।३७।।

अथ मृत्युञ्जयः

तारः स्थिरा सकर्णेन्दुभृगुःसर्गसमन्वितः ।
त्र्यक्षरात्मा निगदितो मन्त्रो मृत्युञ्जयात्मकः ॥३८॥

अब मृत्युञ्जय मन्त्र कहते हैं। तार (ॐ) स्थिरा (ज) कर्ण (वाम कर्ण—ऊ) इन्दु (अनुस्वार)-युक्त भृगु (स) विसर्गयुक्त होकर मृत्युञ्जय का 'ॐ जूं सः' यह तीन अक्षरों वाला मन्त्र कहा गया है।।३८।।

स्थिरा जकारः 'भोगदो विजया स्थिरा' इति वर्ग्यजकारानुशासनात्। कर्णः पञ्चमः स्वरः; सामान्यनिर्देशस्वरसात्। इन्दुर्विन्दुः। भृगुः सकारः। सर्गो विसर्गः। तथा च–ॐ जूं सः इति त्र्यक्षरो मन्त्रः॥३९॥

'भोगदा विजया स्थिरा' इस वर्ग्य जकार के अनुशासनानुसार स्थिरा का तात्पर्य जकार से है। सामान्यतः कर्ण शब्द का निर्देश रहने से यहाँ कर्ण है—पञ्चम स्वर उ। इन्दु = विन्दु। भृगुः = सकार। सर्गः = विसर्ग। अतः मन्त्रोद्धार होता है—ॐ जूं सः। यह त्र्यक्षर मन्त्र है।।३९।।

अस्य कहोलऋषिर्देवीगायत्रीछन्दः मृत्युञ्जयो देवता ॥४०॥

इस मन्त्र के कहोल ऋषि हैं। देवी गायत्री छन्द है तथा इस मन्त्र के देवता मृत्युञ्जय कहे गये हैं।।४०।।

ऋषिः कहोलो देव्यादिगायत्री छन्द ईरितम् ।
मृत्युञ्जयो महादेवो देवतास्य प्रकीर्त्तिता ॥४१॥

निबन्ध में कहा है कि इस मन्त्र के कहोल ऋषि हैं। देवी गायत्री छन्द है एवं मृत्युञ्जय महादेव इसके देवता कहे गये हैं।।४१।।

कराङ्गन्यासौ तु सां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, सीं तर्जनीभ्यां स्वाहेत्यादिना, सां हृदयाय नम इत्यादिना च। यथा निबन्धे—

भृगुना दीर्घयुक्तेन कुर्यादङ्गक्रियां मनोः ॥४२॥

सां अंगुष्ठाभ्यां नमः, सीं तर्जनीभ्यां स्वाहा इत्यादि मन्त्र से इसका करन्यास एवं सां हृदयाय नमः इत्यादि मन्त्र से अंगन्यास करना चाहिये; जैसा कि निबन्ध में कहा भी है—छः दीर्घयुक्त भृगु (स) द्वारा मन्त्र का षडङ्ग न्यास करना चाहिये।।४२।।

तथा च प्रातःकृत्यादिशैवोक्तपीठमन्वन्तपीठन्यासान्तं विधाय ऋष्यादि-न्यास-कराङ्गन्यासान् विधाय ध्यायेत्॥४३॥

अव प्रातःकृत्यादि से आरम्भ कर शैवोक्त पीठमन्त्र-पर्यन्त पीठन्यास करने के

उपरान्त ऋष्यादि न्यास, करांगन्यास आदि करके ध्यान करना चाहिये।।४३।।

चन्द्रार्काग्निविलोचनं स्मितमुखं पद्मद्वयान्तःस्थितं
मुद्रापाशमृगाक्षसूत्रविलसत्पाणिं हिमांशुप्रभम्।
कोटिरेन्दुगलत्सुधाप्लुततनुं हारादिभूषोज्ज्वलं
कान्त्या विश्वविमोहनं पशुपतिं मृत्युञ्जयं भावये।।४४।।

ध्यान इस प्रकार किया जाता है—चन्द्र, सूर्य तथा अग्निरूप त्रिनयन वाले, स्मितमुख, दो पद्मों के मध्य स्थित अर्थात् ऊर्ध्वमुख कमल पर बैठे तथा अधोमुख पद्म मस्तक के ऊपर, हाथों में ज्ञानमुद्रा, पाश, मृगमुद्रा तथा अक्षसूत्र से शोभित, चन्द्रमा के समान श्वेत वर्ण, मुकुट में स्थित चन्द्रमा से प्रवहमान सुधाधारा से आप्लुत शरीर वाले, हार आदि भूषणों से उज्ज्वल, अपनी कान्ति से विश्व को मोहित करने वाले पशुपति मृत्युञ्जय का मैं ध्यान (भावना) करता हूँ।।४४।।

एवं ध्यात्वा मानसपूजार्घ्यस्थापनादिपीठमन्वन्तां पूजां कृत्वा पुनर्ध्यात्वा-वाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय केशरेष्वग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च षडङ्गानि सम्पूज्य, तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च सम्पूज्य धूपादि-विसर्जनान्तं कर्म समापयेत्।।४५।।

इस प्रकार ध्यान करने के उपरान्त मानसोपचार पूजन, विशेषार्घ्य-स्थापन से लेकर पीठमन्त्र पूजा-पर्यन्त कार्य करके केशर के आग्नेयादि कोण, मध्य तथा दिक्समूह में षडङ्ग पूजनोपरान्त दल के बाहर लोकपालों तथा उनके वज्रादि अस्त्रों का पूजन करके धूपदान से लेकर विसर्जन-पर्यन्त कार्य सम्पन्न करना चाहिये।।४५।।

तथा—

गुणलक्षं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं विशालधीः।
जुहुयादमृताखण्डैः शुद्धदुग्धाज्यलोडितैः।।४६।।

गुणाः त्रयः। अमृता गुडूची।।४७।।

विशाल बुद्धि वाला व्यक्ति को इस मन्त्र का तीन लाख जप करने के उपरान्त शुद्ध वस्त्र द्वारा छाने गये दूध एवं घृत-लिप्त गुरुचखण्डों से तीन हजार होम करना चाहिये। गुण अर्थात् तीन। अमृता अर्थात् गुरुच।।४६-४७।।

अथ मृत्युञ्जयस्यापरो मन्त्रः—

मृत्युञ्जयं समुद्धृत्य पालयद्वितयं पुनः।
मृत्युञ्जयं समुच्चार्य पुनरेव विलोमतः।।४८।।

द्वादशाक्षरमन्त्रोऽयं मृत्युञ्जयाभिधोऽपरः ।
ध्यानपूजादिकं सर्वं पूर्ववच्च समाचरेत् ।।४९।।

तथा च ॐ जूं सः पालय पालय सः जूं ॐ।।५०।।

अब मृत्युञ्जय का दूसरा मन्त्र कहते हैं। मृत्युञ्जय मन्त्र का उच्चारण करके पालय-द्वितय अर्थात् 'पालय-पालय' कह कर पुनः विलोम मृत्युञ्जय मन्त्र का उच्चारण करने से मृत्युञ्जय का एक अन्य द्वादशाक्षर मन्त्र उद्धृत होता है। इसका समस्त पूजन प्रयोग, ध्यानादि पूर्वोक्त मृत्यञ्जय मन्त्र के समान ही होता है। मन्त्रोद्धार होता है—ॐ जूं सः पालय पालय सः जूं ॐ।।४८-५०।।

●

अथ दक्षिणामूर्त्तिः

प्रणवो हृदयं पश्चात्ततो भगवते पदम् ।
ङेन्ताञ्च दक्षिणामूर्त्तिं मह्यं मेधामुदीरयेत् ।
प्रयच्छ ठद्वयान्तोऽयं द्वाविंशत्यक्षरो मनूः ।।५१।।

तेन ॐ नमो भगवते दक्षिणामूर्त्तये मह्यं मेधां प्रयच्छ स्वाहा इति।

अब दक्षिणामूर्त्ति मन्त्र कहते हैं। पहले प्रणव (ॐ), हृदय (नमः), तदनन्तर भगवते तथा चतुर्थी विभक्तियुक्त दक्षिणामूर्त्ति अर्थात् दक्षिणामूर्त्तये पद, तत्पश्चात् मह्यं मेधां कहना चाहिये। तदनन्तर प्रयच्छ तथा अन्त में ठद्वय अर्थात् (स्वाहा)। मन्त्रोद्धार होता है—ॐ नमो भगवते दक्षिणामूर्त्तये मह्यं मेधां प्रयच्छ स्वाहा। यह मन्त्र बत्तीस अक्षरों वाला होता है।।५१।।

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादिशैवोक्तपीठमन्वन्तं विन्यस्य ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। चतुर्मुखऋषिर्देवीगायत्रीछन्दः दक्षिणामूर्त्तिर्देवता। कराङ्गन्यासौ तु—ॐ आं ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ ईं ॐ तर्जनीभ्यां स्वाहा इत्यादिक्रमेण।।५२।।

इसकी पूजा इस प्रकार की जाती है—प्रातःकृत्यादि से लेकर शैवोक्त पीठमन्त्र-पर्यन्त न्यास करके ऋष्यादि न्यास करना चाहिये। इसके चतुर्मुख ऋषि, देवी गायत्री छन्द, दक्षिणामूर्त्ति देवता, प्रणवान्त नाद बीज तथा स्वाहा शक्ति है। करन्यास है—ॐ आं ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ॐ ईं ॐ तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ ऊं ॐ मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ ऐं ॐ अनामिकाभ्यां हुं, ॐ औं ॐ कनिष्ठाभ्यां वौषट्, ॐ अः ॐ करतलपृष्ठाभ्यां फट्।।५२।।

यथा निबन्धे—

ताररुद्धैः स्वरैर्दीर्घैः षड्भिरङ्गानि कल्पयेत्।
अथवा मन्त्रसम्भूतैः पदैर्वा कल्पयेत् क्रमात्॥५३॥

निबन्ध में कहा है कि प्रणवपुटित छः दीर्घ स्वर—आ ई ऊ ऐ औ अः—से अंगन्यास करना चाहिये अथवा मन्त्र के पदसमूह से क्रमशः करांगन्यास करना चाहिये।

यथा ॐ नमो अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, भगवते तर्जनीभ्यां स्वाहा, दक्षिणामूर्त्तये मध्यमाभ्यां वषट्, मह्यं मेधां अनामिकाभ्यां हुं, ॐ प्रयच्छ कनिष्ठाभ्यां वौषट्, सर्वं समुच्चार्य करतलपृष्ठाभ्यां फट्। एवमेव हृदयादिषु॥५४॥

जैसे ॐ नमो अंगुष्ठाभ्यां नमः, ॐ भगवते तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ दक्षिणामूर्त्तये मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ मह्यं मेधां अनामिकाभ्यां हुं, ॐ प्रयच्छ कनिष्ठाभ्यां वौषट्, ॐ स्वाहा करतलपृष्ठाभ्यां फट्। इसी प्रकार हृदयादि में अंगन्यास करना चाहिये।।५४।।

तथा च मानसोल्लासे—

त्रिभिश्चतुर्भिः षड्भिश्च चतुर्भिस्त्रिभिरक्षरैः।
मन्त्रवर्णैर्विभक्तैर्वा कुर्यादङ्गक्रियां मनोः॥५५॥

मानसोल्लास में कहा भी है कि प्रथम विभक्त तीन मन्त्रवर्ण से, तत्पश्चात् चार, उसके पश्चात् छः, पश्चात् चार, उसके अनन्तर तीन, तत्पश्चात् दो विभक्त मन्त्रवर्ण द्वारा इस मन्त्र की अंगक्रिया करनी चाहिये।।५५।।

ततो ध्यानम्—

वटवृक्षं महोच्छ्रायं पद्मरागफलोज्ज्वलम्।
गारुत्मतमयैः पत्रैर्विचित्रैरुपशोभितम्॥५६॥
नवरत्नमहाकल्पैर्लम्बमानैरलङ्कृतम्।
विचिन्त्य वटमूलस्थं चिन्तयेल्लोकनायकम्॥५७॥

तत्पश्चात् हिमालयतट के अतिविशाल महादीर्घ पद्मरागफल द्वारा उज्ज्वल विचित्र (गारुत्मक) मरकत मणिमय पत्र द्वारा उपशोभित, नवरत्नमय लम्बमान (तना) द्वारा अलंकृत वटवृक्ष का चिन्तन करके इसके मूल में आसीन लोकनाथ की चिन्तना करनी चाहिये।।५६-५७।।

स्फटिकरजतवर्णं मौक्तिकीमक्षमाला-
ममृतकलसविद्याज्ञानमुद्राः कराब्जैः।
दधतमुरगकक्षं चन्द्रचूडं त्रिनेत्रं
विधृतविविधभूषं दक्षिणामूर्त्तिमीडे॥५८॥

स्फटिक एवं रजत के समान वर्ण वाले, हाथों में मुक्ता की अक्षमाला धारण करने वाले, अमृतकलश, पुस्तक तथा ज्ञानमुद्रा धारण करने वाले, सर्प से मण्डित बाहुमूल वाले, चूडा में चन्द्र को धारण करने वाले, तीन नेत्रों वाले, नाना भूषणों से भूषित दक्षिणामूर्त्ति की मैं स्तुति करता हूँ।।५८।।

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्यार्घ्यस्थापनशैवोक्तपीठपूजां पुनर्ध्यानावाहनादि-पञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय केशरेषु अग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च ॐ आं ॐ हृदयाय नमः इत्यादिना षडङ्गेनाभ्यर्च्य पूर्वादिपत्रेषु ॐ सरस्वत्यै नमः। एवं ब्रह्मणे, सनकाय, सनन्दनाय, सनातनाय, सनत्कु-माराय, शुकाय, व्यासाय, गणेश्वराय। तद्बहिः पूर्वादितः ॐ सिद्धाय नमः। एवं गन्धर्वाय, योगीन्द्राय, विद्याधराय। तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः। सघृतपद्मैर्दशांशहोमश्च।।५९।।

इस प्रकार से ध्यानोपरान्त मानसोपचार पूजा, विशेषार्घ्य-स्थापन, शैवोक्त पीठपूजा, पुनः ध्यान, आवाहन से लेकर पुष्पाञ्जलिदान-पर्यन्त समस्त कार्य करके केशर के अग्नि आदि कोणों में, मध्य में तथा दिक्समूह में ॐ आं हृदयाय नमः इत्यादि पूर्वोक्त मन्त्र से षड़ङ्ग पूजन करके पूर्वादि पत्रसमूह में ॐ सरस्वत्यै नमः, ॐ ब्रह्मणे नमः, ॐ सनकाय नमः, ॐ सनन्दनाय नमः, ॐ सनातनाय नमः, ॐ शुकाय नमः, ॐ व्यासाय नमः, ॐ गणेश्वराय नमः मन्त्र से तत्तत् देवताओं की पूजा करके चतुरस्र के मध्य में पूर्वादि दिक्क्रम से ॐ सिद्धाय नमः, ॐ गन्धर्वाय नमः, ॐ योगीन्द्राय नमः, ॐ विद्याधराय नमः मन्त्र से इन सबका पूजन करके पत्र के बाहरी भाग में इन्द्रादि लोकपालों तथा उनके वज्रादि अस्त्रों का पूजन करने के बाद धूपदान से लेकर विसर्जन-पर्यन्त कृत्य सम्पन्न करना चाहिये। इस मन्त्र का पुरश्चरण एक लाख जप एवं घृत से लिपटे कमलों द्वारा जप के दशमांश होम से सम्पन्न होता है।।५९।।

●

अथार्धनारीश्वरः

अग्निसंवर्त्तकादित्य रानिलौ षष्ठविन्दुवत्।
चिन्तामणिरिति ख्यातं बीजं सर्वसमृद्धिदम्।।६०।।

अब अर्धनारीश्वर मन्त्र कहते हैं। अग्नि (र्) संवर्त्तक (क्ष) आदित्य (म) र् अनिल (य) औ एवं षष्ठ स्वर (ऊ) तथा विन्दुयुक्त मन्त्र सर्वसिद्धिप्रद चिन्तामणि बीज कहा गया है।।६०।।

अग्नि रेफः। संवर्त्तकः क्षकारः। आदित्यो मकारः। र स्वरूपम्। अनिलो यकारः। औ स्वरूपम्। षष्ठः दीर्घोकारः। तेन र क्ष म व य औ ऊ। अस्य कश्यपऋषिरनुष्टुप् छन्दः। अर्द्धनारीश्वरो देवता। पूजा तु प्रातःकृत्यादिशैवोक्तपीठमन्वन्तं विन्यस्य ऋष्यादिन्यासं कृत्वा कराङ्गन्यासौ कुर्यात्। यथा—रं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। कं तर्जनीभ्यां स्वाहा। षं मध्यमाभ्यां वषट्। मं अनामिकाभ्यां हुं। रं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। यं करतलपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु॥६१॥

अग्नि रेफ (र)। संवर्त्तक क्ष। आदित्य म। र स्वरूप अर्थात् र। अनिल य। औ स्वरूप अर्थात् औ। षष्ठ दीर्घ ऊकार। इस प्रकार मन्त्रोद्धार है—र क्ष म र य औ ऊं। इस मन्त्र के पूजन में प्रातःकृत्यादि से शैवोक्तपीठ मन्त्र पर्यन्त न्यास करके ऋष्यादिन्यास करना चाहिये। इसका विनियोग इस प्रकार किया जाता है—अस्य श्री अर्द्धनारीश्वरमन्त्रस्य कश्यप ऋषिरनुष्टुप् छन्दः अर्द्धनारीश्वरो देवता रेफो बीजं ऊकारः शक्तिः सर्वसमृद्धिप्राप्तये पूजने विनियोगः। न्यास का प्रकार यह है—मस्तक पर ॐ कश्यपाय ऋषये नमः, मुख में ॐ अनुष्टुप् छन्दसे नमः, हृदय में ॐ अर्धनारीश्वराय देवतायै नमः, गुह्य में ॐ रकाराय बीजाय नमः, पादद्वय में ॐ ऊकाराय शक्तये नमः।

तदनन्तर करन्यास तथा अंगन्यास करना चाहिये। जैसे—ॐ रं अंगुष्ठाभ्यां नमः, ॐ कं तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ षं मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ मं अनामिकाभ्यां हुं, ॐ रं कनिष्ठाभ्यां वौषट्, ॐ यं करतलपृष्ठाभ्यां फट्। इसी प्रकार से तत्तत् मन्त्र से अंग-न्यास भी करना चाहिये।।६१।।

ततो ध्यानम्—

नीलप्रवालरुचिरं विलसत् त्रिनेत्रं
पाशारुणोत्पलकपालकशूलहस्तम् ।
अर्द्धाम्बिकेशमनिशं प्रविभक्तभूषं
बालेन्दुबद्धमुकुटं प्रणमामि रूपम् ॥६२॥

तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करना चाहिये—महेश्वर का आधा शरीर नील वर्ण एवं पार्वती का आधा शरीर प्रवालवर्ण, उज्ज्वल तीन नेत्र, देवी के हाथों में पाश तथा लाल कमल एवं महेश्वर के हाथ में कपाल तथा त्रिशूल, महेश्वर की ओर वाले शरीर में सर्प का अलंकर तथा पार्वती की ओर वाले शरीर में रत्न के ताटंक आदि, मस्तक (शिव की ओर) बालचन्द्र से भूषित—ऐसी अर्द्धाम्बिकेश मूर्त्ति को मैं सर्वदा प्रणाम करता हूँ।।६२।।

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्यार्घ्यस्थापनशैवोक्तपीठपूजा पुनर्ध्यानावाहनादि-पञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय केशरेष्वग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च षडङ्गानि सम्पूज्य पूर्वादिपत्रेषु वृषभादीन् पत्राग्रेषु पूर्वादितः ब्राह्मी-माहेश्वरी-कौमारी-वैष्णवी-वाराहीन्द्राणी-चामुण्डा-महालक्ष्मीस्तद्बहि-रिन्द्रादीन् वज्रादींश्च सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्।।६३।।

इस प्रकार से ध्यान करके मानसोपचार पूजन, विशेषार्घ्य-स्थापन, शैवोक्त पीठपूजन, पुनः ध्यान, आवाहन से लेकर पञ्चपुष्पाञ्जलि दान-पर्यन्त समस्त कर्म करके केशर के आग्नेय आदि कोणों में, मध्य में तथा दिक्समूह में ॐ रं हृदयाय नमः, ॐ कं शिरसे स्वाहा, ॐ यं शिखायै वषट्, ॐ मं कवचाय हुं, ॐ रं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ षं अस्त्राय फट् मन्त्र से षडङ्ग की पूजा करके पद्मदल में पूर्वादिक्रम से ॐ वृषभाय नमः, ॐ क्षेत्रपालाय नमः, ॐ चण्डेश्वराय नमः, ॐ दुर्गायै नमः, ॐ कार्त्तिकेयाय नमः, ॐ नन्दिने नमः, ॐ विघ्ननायकाय नमः, ॐ सेनापतये नमः मन्त्र से पूजा करके पत्र के आगे प्रणवादि (प्रणव आदि में लगाकर) एवं नमो अन्त (अन्त में नमः लगाकर) चतुर्थी विभक्तियुक्त ब्राह्मी, माहेश्वरी अर्थात् ॐ ब्राह्म्यै नमः, ॐ माहेश्वर्यै नमः—इस प्रकार से ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, इन्द्राणी, चामुण्डा तथा महालक्ष्मी का पूजन करके पद्मदल के बाहर इन्द्रादि लोकपालों तथा उनके वज्रादि अस्त्रों की पूजा करने के उपरान्त धूपदान से लेकर विसर्जन-पर्यन्त कर्म का समापन करना चाहिये।।६३।।

तथा—

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं मन्त्री मन्त्रार्थतत्त्ववित्।
अयुतं मधुरासिक्तैर्जुहुयात् तिलतण्डुलैः ।।६४।।

इसी प्रकार कहा गया है कि मन्त्रार्थ को जानने वाले साधक को इस मन्त्र के पुरश्चरण-हेतु एक लाख जप तथा त्रिमधुर से सने तिल-तण्डुल से दश हजार हवन करना चाहिये।।६४।।

●

अथ नीलकण्ठः

लोहिताग्न्यासनः सत्यो विन्दुमान् प्रथमं पुनः।
द्वितीयं वह्निबीजस्था दीर्घा शान्तीन्दुभूषिता ।।६५।।
तृतीयं लाङ्गली सर्गी मन्त्रो बीजत्रयात्मकः।
नीलकण्ठात्मकः प्रोक्तो विषद्वयहरः परः ।।६६।।

अब नीलकण्ठ मन्त्र कहते हैं। अग्न्यासन अर्थात् रकार-युक्त लोहित पकार सद्य तथा 'ओ' एवं विन्दुयुक्त होकर 'प्रों' बीज होता है। तदनन्तर वह्निबीजस्था (रकारस्था) दीर्घ नकार शान्ति 'ई' तथा विन्दुयुक्त होकर द्वितीय बीज 'त्रीं' होता है। तत्पश्चात् लांगली ठकार सर्गी विसर्गयुक्त होकर तृतीय बीज 'ठः' होता है। इस बीजत्रय से समन्वित स्थावर तथा जंगम विषनाशक श्रेष्ठ नीलकण्ठरूप मन्त्र कहा गया है।।६५-६६।।

अस्यार्थ—लोहिता पकारः, अग्नी रेफः तौ आसने यस्य तादृशः सत्य ओकारः, स च विन्दुमान इति प्रथमं बीजम्। दीर्घो नकारः। 'वामनो ज्वालिनी दीर्घा निरीहः सुगतिर्वियं'दिति शासनात्। शान्तिरीकारः इति द्वितीयम्। लाङ्गली ठकारः। सर्गो विसर्गः इति तृतीयं बीजम्। तथा च 'प्रों त्रीं ठः' इति मन्त्रः॥६७॥

उपर्युक्त दोनों श्लोकों का अर्थ इस प्रकार है—लोहित पकार। अग्नि रकार। इन दोनों वर्णों का आसन है जिस पर अर्थात् ओकार विन्दुमान है। यह प्रथम बीज है अर्थात् 'प्रों'। दीर्घ नकार; क्योंकि 'वामनो ज्वालिनी दीर्घा निरीहः सुगतिर्वियत्' यह तान्त्रिक कोष है। शान्ति ई। यह द्वितीय बीज है। लांगली ठकार। सर्ग विसर्ग। यह तृतीय बीज है। अतएव मन्त्रोद्धार होता है—प्रों त्रीं ठः।।६७।।

अस्य अरुण ऋषिरनुष्टुप् छन्दः नीलकण्ठो देवता। पूजा तु प्रातःकृत्यादि शैवोक्तपीठन्यासान्तं विधाय ऋष्यादिन्यासं कृत्वा कराङ्गन्यासौ कुर्यात्। यथा हर हर स्वाहा अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। कपर्दिने स्वाहा तर्जनीभ्यां स्वाहा। नीलकण्ठाय स्वाहा मध्यमाभ्यां वषट्। कालकूटविषभक्षणाय हुं फट् अनामिकाभ्यां हुं। नीलकण्ठिने स्वाहा कनिष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु॥६८॥

इस मन्त्र के अरुण ऋषि, अनुष्टुप् छन्द (किन्तु राघवभट्ट इसे त्रिष्टुप् छन्द मानते हैं) एवं नीलकण्ठ देवता हैं। प्रारम्भ में प्रों बीज एवं अन्त में ठः शक्ति है। इस मन्त्र की पूजा में प्रातःकृत्यादि से लेकर शैवोक्त पीठन्यास-पर्यन्त कार्यों को सम्पन्न करने के उपरान्त ऋष्यादि न्यास करना चाहिये। जैसे अस्य श्रीनीलकण्ठमन्त्रस्य अरुण ऋषिरनुष्टुप् छन्दः नीलकण्ठो देवता प्रों बीजं ठः शक्तिः विषद्वयहरणे पूजने विनियोग—कहकर विनियोग किया जाता है। तदनन्तर इस प्रकार ऋष्यादि न्यास किया जाता है—मस्तक पर ॐ अरुणाय ऋषये नमः, मुख में ॐ अनुष्टुप् छन्दसे नमः, हृदय में ॐ नीलकण्ठाय देवतायै नमः, गुह्य में ॐ प्रों बीजाय नमः, पादद्वय में ॐ ठः शक्तये नमः। इसके पश्चात् करन्यास तथा अंगन्यास करना चाहिये; जैसे—ॐ हर हर

स्वाहा अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ॐ कपर्दिने स्वाहा तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ नीलकण्ठाय स्वाहा मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ कालकूटविषभक्षणाय हुं फट् अनामिकाभ्यां हुं,। ॐ नीलकण्ठिने स्वाहा कनिष्ठाभ्यां फट्। इसी प्रकार ॐ हरहर स्वाहा हृदयाय नमः, ॐ कपर्दिने स्वाहा शिरसे स्वाहा, ॐ नीलकण्ठाय स्वाहा शिखायै वषट्, ॐ कालकूटविषभक्षणाय हुं फट् कवचाय हुं, ॐ नीलकण्ठिने स्वाहा अस्त्राय फट् मन्त्रों से हृदयादि अंगन्यास भी करना चाहिये।।६८।।

यथा निबन्धे—

हरद्वयं वह्निजाया हृदयं परिकीर्त्तितम्।
कपर्दिने ठयुगलं शिरो मन्त्र उदाहृतः ।।६९।।
नीलकण्ठाय ठद्वन्द्वं शिखामन्त्रोऽयमीरितः।
कालकूटपदस्यान्ते विषभक्षण ङेयुतम् ।।७०।।
हुं फट् कवचमादिष्टं विद्वद्भिर्नीलकण्ठिने।
स्वाहान्तमन्त्रमेतानि पञ्चाङ्गानि मनोर्विदुः ।।७१।।

हरद्वय वह्निजाया अर्थात् हर हर स्वाहा—यह हृदयमन्त्र है। कपर्दिने, ठद्वय (स्वाहा) अर्थात् कपर्दिने स्वाहा—यह शिरोमन्त्र है। नीलकण्ठाय ठद्वय (स्वाहा) अर्थात् 'नीलकण्ठाय स्वाहा' को शिखामन्त्र कहा गया है। कालकूट के अन्त में चतुर्थी विभक्तियुक्त विषभक्षण पद तथा हुं फट् से मन्त्रोद्धार होता है 'कालकूटविषमभक्षणाय हुं फट्' यह कवचमन्त्र है। नीलकण्ठ के पश्चात् स्वाहा लगाने से 'नीलकण्ठाय स्वाहा' यह अस्त्रमन्त्र कहा गया है। (यह मन्त्रों का पञ्चाङ्ग है)।।६९-७१।।

ततो मन्त्रन्यासः। मस्तके प्रों नमः, कण्ठे त्रीं नमः। हृदि ठौं नमः।।७२।।

तदनन्तर इस प्रकार मन्त्रन्यास करना चाहिये—मस्तक में ॐ प्रों नमः, कण्ठ में ॐ त्रीं नमः, हृदय में ॐ ठौं नमः।।७२।।

ततो ध्यानं—

बालार्कायुततेजसं धृतजटाजूटेन्दुखण्डोज्ज्वलं
नागेन्द्रैः कृतशेखरं जपवटीं शूलं कपालं करैः।
खट्वाङ्गं दधतं त्रिनेत्रविलसत् पञ्चाननं सुन्दरं
व्याघ्रत्वक्परिधानमब्जनिलयं श्रीनीलकण्ठं भजे ।।७३।।

तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करना चाहिये—हजारों बाल सूर्य के तेज के समान तेज वाले, शिर के जटाजूट के मध्य में उज्ज्वल इन्दुखण्ड को धारण करने वाले, नागेन्द्रसमूह (नागराजों) का आभूषण धारण किये हुये, हाथों में जपमाला, शूल,

कपाल तथा खट्वांग धारण करने वाले, तीन नेत्रों से देदीप्यमान, सुन्दर पाँच मुख वाले, व्याघ्रचर्म का परिधान धारण करने वाले, कमल पर निवास करने वाले श्री नीलकण्ठ का मैं भजन करता हूँ।।७३।।

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्यार्घ्यस्थापनशैवोक्तपीठपूजा पुनर्ध्यानावाहनादि-पञ्चपुष्पाञ्जलिदानान्ते केशरेष्वग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च पञ्चाङ्गानि सम्पूज्य तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्।।७४।।

इस प्रकार से ध्यान करने के उपरान्त मानस पूजा, विशेषार्घ्य-स्थापन, मृत्युञ्जय प्रकरण में कहे गये विधान के अनुसार पीठपूजन, पुनः ध्यान, आवाहन आदि से लेकर पञ्चपुष्पाञ्जलि दान-पर्यन्त समस्त कृत्य सम्पन्न करने के पश्चात् केशर के अग्न्यादि कोणों में, मध्य में तथा दिक्समूह में पञ्चाङ्ग-पूजन करके दल के बहिर्भाग में इन्द्रादि लोकपालों तथा उनके वज्रादि अस्त्रों का पूजन करने के अनन्तर धूपदान से लेकर विसर्जन-पर्यन्त कृत्य को सम्पन्न कर पूजा का समापन करना चाहिये।।७४।।

तथा—

लक्षत्रयं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं ससर्पिसा।
हविषा जुहुयात्सम्यक्संस्कृते हव्यवाहने ॥

हविषा परमान्नेन।।७५।।

पूजा-समाप्ति के पश्चात् इस मन्त्र के पुरश्चरण-हेतु तीन लाख मन्त्रजप करने के पश्चात् कुण्ड की संस्कृत अग्नि में घृत-मिश्रित परमान्न द्वारा जप का दशांश हवन करना चाहिये।।७५।।

कल्पे—

तारो हृन्नीलकण्ठाय मन्त्रश्चाष्टाक्षरः परः।

तथा च—ॐ नमो नीलकण्ठाय। अस्य पूजादिकं सर्वं पूर्ववत्। विशेषन्तु–ब्रह्मा ऋषिर्गायत्रीछन्दः नीलकण्ठो देवता।।७६।।

कल्प में कहा गया है कि तार (ॐ) हृत् (नमः) नीलकण्ठाय। यह नीलकण्ठ का श्रेष्ठ अष्टाक्षर मन्त्र है। मन्त्रोद्धार होता है—ॐ नमः नीलकण्ठाय। इस मन्त्र की पूजन-विधि पूर्ववत् ही है। इस मन्त्र के ऋषि ब्रह्मा, छन्द गायत्री एवं देवता नीलकण्ठ कहे गये हैं।।७६।।

●

अथ चण्डेश्वरः

अर्घीशो वह्निशिखरे लान्तस्थो दान्त ईरितः।
फड़न्तश्चण्डमन्त्रोऽयं त्रिवर्णात्मा समीरितः ॥७७॥

अब चण्डेश्वर मन्त्र को कहते हैं। अर्घीश (उ) लान्तस्थ (वकारस्थ) दान्त (ध) वह्निशिखर (रेफ मस्तक) तथा अन्त में फट् कहने से वर्णत्रयात्मक चण्ड-मन्त्र निष्पन्न होता है।।७७।।

अस्यार्थः—अर्घीशः षष्ठस्वरः इत्येको वर्णः। दान्तो धकारः, स च लान्तस्य वकारस्योपरि स्थितः। तथा च वह्निशिखरेऽग्रभागे यस्य तादृशः इति द्वितीयो वर्णस्तेन ऊर्ध्व फट् इति त्र्यक्षरो मन्त्रः॥७८॥

अर्घीश षष्ठ स्वर ऊ है। दान्त धकार। इस धकार को लान्त वकार के ऊपर स्थित किया है। अथ च वह वह्निशिखर के अग्रभाग में जो ध्व वर्ण है। यह द्वितीय वर्ण है। इससे ऊर्ध्वफट् यह त्र्यक्षर मन्त्र बनता है।।७८।।

अस्य त्रित ऋषिरनुष्टुप् छन्दश्चण्डेश्वरो देवताः। तथा च निबन्धे—

अस्य त्रितो मुनिः प्रोक्तश्छन्दोऽनुष्टुबुदाहृतम्।

एकतद्वितत्रितारस्त्रयो भ्रातरस्तु भारतादौ व्यक्ताः। पूजा—प्रातःकृत्यादि शैवोक्तपीठन्यासान्तं विधाय ऋष्यादिन्यासं कृत्वा कराङ्गन्यासौ कुर्यात्। दीप्त फट् अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ज्वल फट् तर्जनीभ्यां स्वाहा। ज्वालिनी फट् मध्यभ्यामां वषट्। ज्ञेय फट् अनामिकाभ्यां हुं। हन फट् कनिष्ठाभ्यां वौषट्। सर्वज्वालिनी फट् करतलपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु॥७९॥

इस मन्त्र के त्रित ऋषि, अनुष्टुप् छन्द एवं चण्डेश्वर देवता हैं; जैसा कि शारदातिलक में कहा भी है कि इसके त्रित ऋषि, अनुष्टुप् छन्द, ऊकार बीज तथा फट् शक्ति है। एकत, द्वित तथा त्रित—ये तीन भ्राता महाभारतादि में कहे गये हैं।

इसकी पूजा में प्रात:कृत्यादि से आरम्भ कर शैवोक्त पीठन्यास-पर्यन्त कर्म करके ऋष्यादि न्यास करना चाहिये; जैसे—मस्तक पर ॐ त्रिताय ऋषये नमः इत्यादि। अनन्तर ॐ दीप्त फट् अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ॐ ज्वल फट् तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ ज्वालिनी फट् मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ ज्ञेय फट् अनामिकाभ्यां हुं, हन् फट् कनिष्ठाभ्यां वौषट्, ॐ सर्वज्वालिनी फट् करतलपृष्ठाभ्यां फट् इस प्रकार से करन्यास करने के पश्चात् इसी प्रकार से हृदयादि न्यास भी करना चाहिये।।७९।।

यथा प्रपञ्चसारे—

दीप्त ज्वल ज्वालिनीति ज्ञेयेन तु हनेन च।
सर्वज्वालिनीसंयुक्तैः फड़न्तैरङ्गमाचरेत् ॥८०॥

प्रपञ्चसार में कहा भी गया है कि दीप्त, ज्वल, ज्वालिनी, ज्ञेय तथा हन के साथ सर्वज्वालिनी को संयुक्त करके उसके अन्त में फट् कह कर अंगन्यास करना चाहिये।।८०।।

ततो ध्यानम्—

चण्डेश्वरं रक्ततनुं त्रिनेत्रं रक्तांशुकाढ्यं हृदि भावयामि।
टङ्कं त्रिशूलं स्फटिकाक्षमालां कमण्डलुं विभ्रतमिन्दुचूडम् ॥८१॥

तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करना चाहिये—रक्त शरीर वाले, तीन नेत्र वाले, रक्त वस्त्र धारण करने वाले, वाम तथा दक्षिण हाथ में टंक, त्रिशूल, स्फटिक के मणियों की माला एवं कमण्डलु धारण करने वाले चण्डेश्वर की मैं अपने हृदय में भावना करता हूँ।।८१।।

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्यार्घ्यस्थापनं कृत्वा शैवोक्तपीठपूजां विधाय ठमिति बीजेन मूर्त्तिं सङ्कल्प्य पुनर्ध्यात्वावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणपूजामाचरेत्। यथा षडङ्गैः प्रथमावरणम्, मातृभिः द्वितीयम्, इन्द्रादिभिस्तृतीयम्, वज्रादिश्चतुर्थम्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं त्रिलक्षजपः॥८२॥

इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचार द्वारा पूजा करके विशेषार्घ्य-स्थापन करने के उपरान्त शैवोक्त पीठपूजन करके 'ठं' बीज द्वारा मूर्त्ति की कल्पना करके पुन: ध्यान, आवाहनादि पञ्चपुष्पाञ्जलि निवेदन-पर्यन्त कृत्य सम्पन्न करके आवरणदेवताओं का पूजन करना चाहिये; जैसे—एते गन्धपुष्पे ॐ दीप्त फट् हृदयाय नम: इत्यादि। इसके पश्चात् अष्टमातृकाओं द्वारा द्वितीय आवरण का पूजन करना चाहिये; जैसे—एते गन्धपुष्पे ॐ ह्रीं ब्राह्म्यै नम:। इसी प्रकार 'एते गन्धपुष्पे' लगाकर माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, इन्द्राणी, चामुण्डा तथा महालक्ष्मी का भी पूजन उनके-उनके बीजों द्वारा करना चाहिये। इसके पश्चात् तृतीय आवरण में इन्द्रादि लोकपालों का पूर्वोक्त विधान के अनुसार पूजन उनके वाहनादि के साथ उनके बीजमन्त्रों के साथ करना चाहिये। वज्रादि अस्त्रसमूह का पूजन चतुर्थ आवरण में किया जाता है। तत्पश्चात् धूपदान से लेकर विसर्जन-पर्यन्त समस्त कर्म करना चाहिये। इस मन्त्र का पुरश्चरण तीन लाख जप से सम्पन्न होता है।।८२।।

विशेष—इस ग्रन्थ में तथा तन्त्रसार में चण्डेश्वर का पूजामन्त्र नहीं कहा गया है। शारदातिलक (२०.१३३) में कहा है कि 'ऊर्ध्वफट् चं चण्डेश्वराय नमः' इनका पूजामन्त्र है।

यथा—

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं होमं कुर्याद्दशांशतः।
मधुरत्रयसंयुक्तैः शुद्धैश्च तिलतण्डुलैः ॥८३॥

कहा भी है कि पुरश्चरण में मन्त्र का तीन लाख जप तथा त्रिमधुर से समन्वित शुद्ध व धुली तिल से जप का दशांश होम करना चाहिये।।८३।।

●

अथ चण्डोग्रशूलपाणिः

यथा कुब्जिकातन्त्रे—

प्रणवञ्च ततो मायां कूर्चबीजं समुच्चरेत्।
शिवायेति फडन्तञ्च चण्डोग्रोऽयं महामनुः ॥८४॥

अब चण्डोग्रशूलपाणि का मन्त्र कहा जाता है। कुब्जिकातन्त्र में केहा गया है कि प्रथमतः प्रणव (ॐ), तदनन्तर मायाबीज (ह्रीं), तदनन्तर कूर्चबीज (हुं) का उच्चारण करके फड़न्त शिवाय अर्थात् 'शिवाय फट्' कहने से चण्डोग्रशूलपाणि का महामन्त्र बनता है। मन्त्रोद्धार है—ॐ ह्रीं हुं शिवाय फट्।।८४।।

अस्य ब्रह्मात्रृषिर्गायत्री छन्दः मायाबीजं चण्डोग्रो देवता। षड्दीर्घभाजा बीजेन ताराद्येन षडङ्गकम्। बीजेन मायाबीजेन॥८५॥

इस मन्त्र के ब्रह्मा ऋषि, गायत्री छन्द, माया बीज तथा चण्डोग्र देवता हैं। प्रणवादि (जिसके आदि में प्रणव लगा हो) छः दीर्घ स्वर से युक्त मायाबीज (ह्रीं) द्वारा इसका षडंग न्यास किया जाता है।।८५।।

ध्यानम्—

शुद्धस्फटिकसङ्काशं चतुर्बाहुं किरीटिनम्।
शूलं कपालं दक्षे तु वामे तु पाशमङ्कुशम्।
सुरापानरसाविष्टं साधकाभीष्टदायकम् ॥८६॥
ध्यात्वा सम्पूज्य देवेशं पञ्चसहस्रं मनुं जपेत्।
दशांशं संस्कृते वह्नौ हुनेद्रक्तोत्पलेन च ॥८७॥

तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करना चाहिये—शुद्ध निर्मल स्फटिक के समान शुभ्र

वर्ण वाले, चार भुजाओं वाले, किरीट धारण करने वाले, हाथों में शूल-कपाल-पाश तथा अंकुश धारण करने वाले, सुरापान से विह्वल, साधकों की मनोवांछित फल देने वाले चण्डोग्रशूलपाणि का मैं ध्यान करता हूँ।

इन देवता का ध्यान-पूजन करने के उपरान्त पुरश्चरण-हेतु इनके मन्त्र का पाँच हजार जप एवं जप का दशांश हवन संस्कृत अग्नि में लाल कमलों द्वारा करना चाहिये।।८६-८७।।

अथास्य पुरश्चरणान्ते प्रयोगः—

त्रिमध्वक्तेन लभते कवितां धनभाग्भवेत्।
रक्तपद्मस्य होमेन महतीं प्रियमाप्नुयात्॥८८॥

इस मन्त्र का पुरश्चरण सम्पन्न करने के पश्चात् प्रयोगक्रम में त्रिमधुर से लिप्त रक्त कमल से होम करने पर कवित्वलाभ तथा धनलाभ होता है। रक्तपद्म द्वारा होम से महान् ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है।।८८।।

पायसेन तु होमेन शत्रून् नाशयतेऽचिरात्।
कुसुम्भतैलहोमेन रिपून् हन्यान्न संशयः॥८९॥
करवीरस्य होमेन वाक्स्तम्भो जायते ध्रुवम्।
शुक्लपद्मस्य होमेन मोहयेदखिलं जगत्॥९०॥

जप के दशांश पायस के होम से तत्काल ही शत्रु का विनाश होता है। कुसुम्भ-बीज के तेल से होम करने पर निश्चित रूप से शत्रु का वध होता है। कनेरपुष्प से होम करने पर निःसन्देह रूप से वाणी का स्तम्भन होता है। श्वेत कमल से होम करने पर समस्त संसार को मोहित करने की शक्ति प्राप्त होती है।।८९-९०।।

अस्य यन्त्रं षट्कोणाष्टदलपद्मघटितम्; यथा—

षट्कोणाष्टदलं पद्मं मध्ये मूलं प्रपूजयेत्।
केवलं शुद्धभावेन हविष्याशी दिवा जपेत्॥९१॥

तन्त्रानुसार इसका यन्त्र इस प्रकार बनता हे—षट्कोण बनाकर उसके अन्दर अष्टदल कमल का निर्माण करके उसके मध्य स्थल में मूल मन्त्र लिखने के बाद शुद्ध हविष्यान्न भोजन करके शुद्ध भाव से दिन में इस मन्त्र का पूजन (यन्त्र में) करके मन्त्रजप करना चाहिये।।९१।।

●

अथ मञ्जुघोषः

आगमोत्तरे—

मातृकादिं समुद्धृत्य वह्निबीजं समुद्धरेत्।
वामांसं कूर्मसंज्ञञ्च ततो मेषोणमुद्धरेत् ॥१॥
मीनेशञ्च ततः कुर्याद् वामनेत्रेन्दुसंयुतम्।
षडक्षरो मनुः प्रोक्तो मञ्जुघोषस्य शम्भुना ॥२॥

अब आगमोत्तर ग्रन्थानुसार मञ्जुघोष-मन्त्र कहा जाता है। प्रथमत: मातृकावर्ण के प्रथम वर्ण (अ) का उच्चारण करके वह्निबीज (र) का उच्चारण करने के बाद वामांस (व) कूर्मनामक वर्ण (च), तदनन्तर मेषोण (न) के पश्चात् मीनेश (ध) वामनेत्र (ई) तथा विन्दु (अनुस्वार) लगाने से मञ्जुघोष का षडक्षर मन्त्र होता है।।१-२।।

अस्यार्थः—मातृकादिरकारः, वह्निबीजं रेफः। वामांसं वकारः। कूर्मश्चकारः। मेषोणो दन्त्यनकारः। मीनेशो धकारः। स च वामनेत्रेन्दुसंयुक्तः। एषा षड़क्षरी दीपनी। सा च मन्त्रादौ अनुलोमतः मन्त्रान्ते प्रतिलोमतः प्रयोज्या॥३॥

अङ्कुशः क्रों। शक्तिबीजं माया। रमाबीजं श्रीबीजम्। तेन 'अ र व च न धीं क्रों ह्रीं श्रीं धीं न च व र अ' इति सिद्धम्। अकाररेफवकाराश्चात्र न सानुस्वाराः, कूर्मादिसाहचर्यात्॥४॥

तात्पर्य यह है कि मातृकादि—अ। वह्निबीज—र। वामांस—व। कूर्म—च। मेषोण—न। मीनेश—ध। यह धकार वामनेत्र (ई) तथा इन्दु (अनुस्वार) से युक्त है। यह छः अक्षर की दीपनी विद्या है। यह मन्त्र के आदि में अनुलोम रूप से और मन्त्र के अन्त में प्रतिलोम रूप से प्रयोज्य है। अंकुश—क्रों। शक्तिबीज—ह्रीं। रमाबीज—श्रीं। इससे 'अ र व च न धीं क्रों ह्रीं धीं न च व र अ'—यह मन्त्रोद्धार होता है। कूर्मादि बीज (च आदि) के साथ होने के कारण अ, र तथा व के ऊपर विन्दु नहीं लगता।

अथ मन्त्रान्तरम्—

शक्तिबीजं रमाबीजं कामबीजं ततः प्रिये!।
विद्या श्रुतिधरी प्रोक्ता एषा वर्णत्रयात्मिका ॥५॥

मञ्जुघोष के अन्य मन्त्र को स्पष्ट करते हुये भगवान् कहते हैं—हे प्रिये! शक्तिबीज (ह्रीं), रमाबीज (श्रीं) तथा उसके अनन्तर कामबीज (क्लीं)—इन वर्णत्रय से युक्त विद्या को श्रुतिधरी कहा गया है। मन्त्रोद्धार है—ह्रीं श्रीं क्लीं।।५।।

विशेष—इसमें दीपनी का योग करना चाहिये; दीपनी है—अ र व च न धीं; क्योंकि कहा भी है—अत्रापि दीपनी योज्या।

मन्त्रान्तरम्—

हकारो वह्निमारूढो वामनेत्रेन्दुभूषितः ।
प्रोक्ता सर्वज्ञविद्येयं एकवर्णात्मिका प्रिये! ॥६॥

तथा च—केवलं मायाबीजम्। दीपन्यत्रापि।

ईश्वर कहते हैं—हे प्रिये! वह्नि पर (र) आरूढ ह, वामनेत्र (ई) तथा इन्दु (विन्दु) से भूषित होकर एक वर्ण वाली सर्वविद्या कही गयी है अर्थात् 'ह्रीं'।।६।।

ऐसी स्थिति में यह केवल मायाबीज है। यहाँ भी दीपनी का योग करना चाहिये।

सिद्ध साध्यः सुसिद्धो वा साधकस्य तथा रिपुः ।
तदा मन्त्रो भवेद्भक्त्या शुभदो वृद्धिदो भवेत् ॥७॥
मध्याह्ने सलिले चैव भोजने भाजने तथा ।
गोमये तु बहिर्देशे मैथुने रमणीकुचे ।
गोष्ठे च निशि गोमुण्डे यन्त्रं डमरुसन्निभम् ॥८॥
विलिख्य मन्त्रवर्णांश्च त्रिश ऊर्ध्वे अधस्तथा ।
लिखेच्चन्दनलेखन्यां प्रयत्नात् साधकोत्तमः ॥९॥

मन्त्र-विचार में यदि साधक को यह मन्त्र सिद्ध, साध्य, सुसिद्ध तथा अरि भी हो तब भी इस मन्त्र की भक्ति से उपासना करने पर यह शुभ तथा वृद्धिदायक होता है।

मध्याह्न काल में जल में, आहारकाल में पात्र में, बाहर गोमय में, रमणकाल में रमणी के स्तन पर, रात्रि में गौशाला में और गोमुण्ड पर डमरु के समान एक यन्त्र बनाकर (चन्दन की लकड़ी से लिख कर) उसमें यन्त्र के ऊर्ध्व तथा अधः में तीन बार मन्त्रवर्णों (क्रों ह्रीं श्रीं) को लिखना चाहिये।।७-९।।

उच्चाटने लिखेन्मन्त्रं गोचर्मणि विशेषतः ।
सलिले विजयी नित्यं भोजने च महेश्वरः ॥१०॥

विशेष कर उच्चाटनकर्म में साधक को इस यन्त्र का लेखन गोचर्म पर करना चाहिये। जल पर लिखने से सदा विजयी होता है एवं भोजनकाल में भोजनपात्र पर लिखने से साधक महेश्वरतुल्य हो जाता है।।१०।।

गोमये वावदूकः स्याद्गोष्ठे सर्वज्ञतां व्रजेत् ।
कुचे श्रुतिधरो नित्यं गोमुण्डे च महाकविः ॥११॥

साधक गोबर पर लिखने से बहुवक्ता, गोशाला में लिखने से सर्वज्ञ, रमणी के स्तन पर लिखने से श्रुतिधर तथा गोमुण्ड पर लिखने से महाकवि होता है।।११।।

गोमूत्रं बदरीमूलं चन्दनं पांशुमेव च।
एकीकृत्याऽष्टधा जप्त्वा तिलकै कारयेत्सदा ॥१२॥

गोमूत्र, बेर की जड़, चन्दन तथा पवित्र धूल को एक साथ पीस कर उसे आठ बार मन्त्रजप से अभिमन्त्रित कर सर्वदा तिलक लगाना चाहिये।।१२।।

नान्यदेवार्चनं स्नानं प्रणवोच्चारणं न तु।
वस्त्राञ्चलेन दन्तानां शोधनं लवणेन वा।
रात्रिवासो न मुञ्चेत न शुचिः स्यात्कदाचन ॥१३॥

इसमें अन्य देवता की अर्चना, स्नान तथा प्रणवोच्चारण का कोई प्रयोजन नहीं है। वस्त्र के आंचल से अथवा नमक से दाँतों को साफ करना चाहिये। रात्रिवास का त्याग करना चाहिये एवं सदा अपवित्र रहना चाहिये।।१३।।

एवं कृत्वा प्रयत्नेन ज्ञात्वा गुरुमुखात्सुधीः।
मासैकेन कवीन्द्रः स्याद् द्विमासेनैव ईश्वरः ॥१४॥

इस प्रकार सुधी साधक यत्नपूर्वक गुरु से मन्त्रग्रहण कर आराधना द्वारा एक माह में कवीन्द्र बन जाता है एवं दो मास की अराधना से ईश्वर हो जाता है।।१४।।

त्रिमासैर्भवेन्मर्त्यः सर्वशास्त्रविशारदः।
पुत्रार्थी लभते पुत्रं धनार्थी विपुलं धनम् ॥१५॥

तीन मास की आराधना करके साधक सर्वशास्त्र-विशारद हो जाता है। इसकी आराधना से पुत्रार्थी को पुत्र तथा धनार्थी को विपुल धनलाभ होता है।।१५।।

अस्य कराङ्गन्यासौ क्षां शां अंगुष्ठाभ्यां नमः, क्षीं शीं तर्जनीभ्यां स्वाहा इत्यादि क्रमेण॥१६॥

इसका कराङ्गन्यास क्षां शां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, क्षीं शीं तर्जनीभ्यां स्वाहा इत्यादि क्रम से किया जाता है।।१६।।

ध्यानं यथा—

शशधरमिव शुभ्रं खड्गपुस्ताङ्कपाणिं,
सुरुचिरमभिशान्तं पञ्चचूड़ं कुमारम्।
पृथुतरवरमुख्यं पद्मपत्रायताक्षं
कुमतिदहनदक्षं मञ्जुघोषं नमामि ॥१७॥

इसका ध्यान इस प्रकार करना चाहिये—शशधर (चन्द्र) के समान अत्यधिक शुभ्र, खड्ग एवं पुस्तक धारण करने वाले, अति सुन्दर, अति शान्त, पञ्चमुकुटधारी,

कुमारमूर्त्ति, अतिस्थूल, कमलपत्र के समान विशाल नेत्र वाले, कुमति को दग्ध करने में दक्ष मञ्जुघोष को मैं प्रणाम करता हूँ।।१७।।

पीठपूजां ततः कुर्यादाधाराद्यादि शक्तितः।
भूतप्रेतादिभिः कुर्यात् पीठासनमनन्तरम् ॥१८॥
ज्ञानमात्रे नमः पाद्यं बुद्धिकर्त्रे तथाचमम्।
जाड्यनाशाय गन्धः स्यामर्घ्यं यक्षाधिपाय वै।
सर्वसिद्धिप्रदायेति पुष्पं दद्याद् विचक्षणः ॥१९॥

इस ध्यान के पश्चात् आधारादि शक्ति के साथ पीठपूजा करनी चाहिये। तदनन्तर भूत-प्रेतादि से पीठासन का पूजन करना चाहिये।

विचक्षण साधक को 'ज्ञानदात्रे नमः' मन्त्र से पाद्य, 'बुद्धिकर्त्रे नमः' मन्त्र से आचमन, 'जाड्यनाशाय नमः' से गन्ध, 'यक्षाधिपाय नमः' मन्त्र से अर्घ्य एवं 'सर्वसिद्धिप्रदाय नमः' से पुष्प प्रदान करना चाहिये।।१८-१९।।

कुशपुष्पं समादाय भैरवान् पूजयेत्ततः।
असिताङ्गो रुरुश्चण्डः क्रोध उन्मत्तसंज्ञकः।
कपाली भीषणश्चैव संहारश्चाष्टमः स्मृतः ॥२०॥

तदनन्तर कुशा के पुष्पों से असितांग, रुरु, चण्ड, क्रोध, उन्मत्त, कपाली, भीषण तथा संहारभैरव का पूजन करना चाहिये।।२०।।

ततो धूपादिकं दत्त्वा प्रसूनानि विसर्जयेत्।
तैः पुष्पैः पूजयेदष्टौ यक्षिणी च विशेषतः ॥२१॥

तदनन्तर धूपादि देकर पुष्पों को अलग रखना चाहिये (जो पुष्प (कुशा) चढ़ाया गया था, उनको अलग रखना चाहिये)। इस पुष्पसमूह से ही अष्टयक्षिणी का पूजन करना चाहिये।।२१।।

सुरादिसुन्दरी चैव मनोहारिण्यनन्तरम्।
कनकावती तथा कामेश्वरी च रतिकर्ष्यथ ॥२२॥
पद्मिनी च नटी चैव अनुरागिण्यनन्तरम्।
पूज्या एतास्तु योगिन्यो हल्लेखा बीजपूर्विकाः ॥२३॥

उन अष्ट योगिनियों के नाम इस प्रकार हैं—सुरसुन्दरी, मनोहारिणी, कनकावती, कामेश्वरी, रतिकर्षिणी, पद्मिनी, नटी तथा अनुरागिनी। इन योगिनियों (यक्षिणियों) का पूजन हल्लेखा (ह्रीं बीज) से करना चाहिये।।२२-२३।।

कुक्कुटेश्वरतन्त्रे—

बृहदारण्यको नामर्षिर्विराट् छन्द एव च।
स एव मञ्जुघोषाख्यो भक्तिभावेन मुक्तिदः ॥२४॥

कुक्कुटेश्वरतन्त्र में कहा है कि इस मन्त्र के बृहदारण्यक ऋषि, विराट् छन्द तथा मञ्जुघोष देवता हैं। इनकी भक्तिभाव से की गई पूजा मुक्तिप्रदा होती है।।२४।।

ध्यात्वा भैरवरूपेण जपेन्मन्त्रमनन्यधीः।
मन्त्रोद्धारं प्रवक्ष्यामि गुह्याद्गुह्यतरं प्रिये! ॥२५॥

भगवान् कहते हैं—अनन्य चित्त से इन भैरवरूप का ध्यान करके मन्त्रजप करना चाहिये। हे प्रिये! गुप्त से भी गुप्ततर इनके मन्त्रोद्धार को अब मैं कहता हूँ।।२५।।

विष्वग्निपाशिशशियुक्चलधीस्वरूपं
षड्वर्णमन्त्र उदितो जगतां सुखाय।
सर्वज्ञतां सदसि वाक्पटुतां प्रसूते
वेदान्तवेदनिरतस्य वसुप्रदः स्यात् ॥२६॥

विष्णु (अ) अग्नि (र) पाशी (व) शशियुक् (नाद-विन्दुयुक्त) चलधी स्वरूप इस षडक्षर मन्त्र को जगत् के सुखार्थ प्रकाशित किया गया है। इस मन्त्र के प्रभाव से साधक को सर्वज्ञता तथा सभा में वाक्पटुता प्राप्त होती है। वेदान्त तथा वेदनिरत व्यक्ति के लिये यह मन्त्र धनप्रद होता है।।२६।।

विष्णुरकारः। अग्नी रेफः। पाशी वकारः। शशियुक् नादविन्दुयुक्तम्। चलधी स्वरूपमिति। तेन एतत्त्रयं केवलमेव। तथा च 'अं रं वं चलधी' इति मन्त्रान्तरं तत्रैव॥२७॥

विष्णु—अ। अग्नि—रेफ। पाशी—व। ये तीनों शशियुक् अर्थात् नाद-विन्दु से युक्त। 'चलधी' यह अपने स्वरूप में ही रहेगा अर्थात् केवल 'चलधी' विन्दुयुक्त नहीं होगा। अतएव मन्त्रोद्धार होता है—अं रं वं चलधी।।२७।।

आद्यमन्त्रं जपेन्मन्त्री अयुतं यदि साधकः।
बलिं नैवेद्यभुक् साक्षाद् बृहस्पतिरिवापरः।
माससमात्रेण सततं कविरेव न संशयः ॥२८॥

यदि मन्त्रज्ञ साधक बलि तथा नैवेद्यभोजी होकर दश हजार की संख्या में (पहले कहे गये) प्रथम मन्त्र का जप करता है तब वह साक्षात् बृहस्पति के समान हो जाता है। एक मास तक इस मन्त्र के जप से कवित्व की प्राप्ति होती है।।२८।।

गोमुण्डे गवि पृष्ठे च चक्रे वापि च गोमये।
मन्त्रमस्य लिखेदादौ पश्चान्मन्त्रं जपेत् पुनः ॥२९॥

गाय के मुण्ड पर, गाय के पीठ पर, चक्र पर अथवा गोबर पर मन्त्र लिखकर उसका जप करना चाहिये।।२९।।

ध्यानमात्रं विधायादौ भावयित्वा चिरं सुधीः।
निर्जनं स्थानमागत्य जपेन्मन्त्रमधोमुखः ॥३०॥

सुधी साधक को प्रथमतः ध्यान करने के उपरान्त दीर्घकाल तक देवता की भावना करने के बाद निर्जन स्थान में जाकर नीचे की ओर मुख करके मन्त्र का जप करना चाहिये।।३०।।

पौर्णमासीं समासाद्य कुन्दस्य कुसुमैः शतैः।
अष्टाधिकैश्च सम्पूज्य जपेन्मन्त्रं चतुष्पथे ॥३१॥

पौर्णमासी तिथि को चौराहे पर अष्टाधिक शत (१०८) कुन्दपुष्प द्वारा पूजा करके मन्त्रजप करना चाहिये।।३१।।

त्रिमुण्डारोहणं कृत्वा निशीथे मुक्तकुन्तलः।
षण्मासमात्रं हि जपेद्यदि कृत्वा विधानवित्।
बृहस्पतिसमो वक्ता नात्र कार्या विचारणा ॥३२॥

रात्रि में बालों को खोलकर त्रिमुण्ड पर आरोहण करके विधानवित् साधक यदि यथाविधि छः मास तक इस मन्त्र का जप करता है तो निस्सन्दिग्ध रूप से वह बृहस्पति के समान हो जाता है।।३२।।

कुक्कुरस्य च मुण्डैकं मुण्डं क्रोष्टोः वृषस्य च।
त्रिमुण्डमेतद् विख्यातं साधकानां सुखावहम् ॥३३॥

कुत्ते के, शृगाल के तथा वृषभ के मुण्ड को 'त्रिमुण्ड' कहा जाता है; जो साधक को सुख देने वाला होता है।।३३।।

आसनञ्चैव—

गोमुण्डोपरि आरूह्य वामे कुक्कुरमुण्डकम्।
दक्षिणे च शिवामुण्डं कृत्वा पूजां समाचरेत् ॥३४॥

गोमुण्ड के ऊपर बैठकर वाम भाग में कुत्ते का मुण्ड तथा दाहिने भाग में शृगाल का मुण्ड स्थापित करके पूजा करनी चाहिये।।३४।।

अर्द्धचन्द्राकृतिं साक्षाद् बालचन्द्रोपमं स्फुटम्।
यन्त्रं लिखेत्तत्र पूजा कुन्दस्य कुसुमेन च ॥३५॥

अर्धचन्द्राकृति साक्षात् बाल चन्द्र के समान स्पष्ट यन्त्र बनाकर कुन्दपुष्प से उस यन्त्र की पूजा करनी चाहिये।।३५।।

सव्येन पाणिकमलेन जपादिपूजां
शृङ्गारशीलनविधौ खलु दक्षिणेन।
राकासुधाकरमरीचितुषारगौरं
ध्यात्वा चतुष्पथतटे वृषमस्तकस्थः ॥३६॥

चतुष्पथ के किनारे वृषमुण्ड पर अवस्थित होकर पूर्णिमा के चन्द्रकिरण तथा तुषार के समान गौर (शुभ्र) मञ्जुघोष का ध्यान करके वाम हस्त द्वारा पूजा-जप आदि करना चाहिये; किन्तु शृंगार की अर्चना में दक्षिण हाथ का प्रयोग करना चाहिये।।३६।।

सञ्चित्य कुक्कुरशिवाशिरसाधिरूढः
कुन्देन साधकतमो जपति प्रकामम्।
गोचर्मणा विरचितं रसकोणमात्रं
चक्रं ततोऽपि नवकुङ्कुमरोचनाभिः।
निर्माय सव्यविधिना विजने श्मशानं
सम्पूजयेद् वनभवैश्च नरैः पलाशैः ॥३७॥

निर्जन श्मशान में कुत्ते तथा शृगाल के मुण्ड पर आरूढ़ होकर साधक को गाय के चर्म पर नये कुंकुम तथा गोरोचन से षट्कोण चक्र का निर्माण करके अपने बाँयें हाथ से कुन्दपुष्प तथा वन में उत्पन्न उत्तम पलाशपुष्पों से उस चक्र की पूजा करने के उपरान्त इच्छित जप करना चाहिये।।३७।।

सम्पूर्णमण्डलतुषारमरीचिमध्ये
बालं विचिन्त्य धवलं वरखड्गहस्तम्।
उद्दामकेशनिवहं वरपुस्तकाढ्यं
नग्नं यजेत् क्षतजपद्मदलायताक्षम् ॥३८॥

सम्पूर्ण चन्द्रमण्डल की तुषारतुल्य किरणों के मध्य में स्थित बालक अपने दो हाथों में वर एवं खड्ग तथा दो हाथों में वर एवं पुस्तक धारण किये हुये है, उसके केश लहरा रहे हैं, उसकी आँखें रक्त कमल के समान पूर्ण लाल हैं एवं जो नग्न है, ऐसे मञ्जुघोष का ध्यान करके उसका यजन करना चाहिये।।३८।।

माञ्जिष्ठतोयदवचासितभानुमूलैः
स्वीयाङ्गशोणितयुतैः सह कुष्ठकैश्च।
कृत्वा ललाटफलके तिलकं जपस्थो
विद्याप्रबोधविषये स च गीष्पतिः स्यात्॥३९॥

अपने देह के रक्त के साथ युक्त मजीठ, मोथा, वचा, श्वेत मदार की जड़ तथा कूठ के द्वारा (सबको पीस कर) ललाट पर तिलक लगाकर जप करने से विद्या के विकास के लिये साधक बृहस्पति के समान हो जाता है।।३९।।

भैरवतन्त्रे ईश्वर उवाच--

श्रूयतां देवि! मे वाक्यं नात्र कार्या विचारणा।
मञ्जुघोषस्तु यो देवः सोऽहं देवि न संशयः॥४०॥

भैरवतन्त्र में ईश्वर कहते हैं कि हे देवि! सुनो, इसमें कोई सन्देह नहीं होना चाहिये कि मञ्जुघोष नामक जो देवता है, वह मैं ही हूँ।।४०।।

एकोऽहं शङ्करो देवि! नानामूर्त्तिधरः स्वयम्।
तस्याधिष्ठानमधुना श्रूयतां मम तत्त्वतः॥४१॥

हे देवि! मैं एक शंकर ही स्वयं विविध मूर्त्तियों को धारण करता हूँ। अब मुझसे यथार्थतः उन अनेक मूर्त्तियों के अधिष्ठान का श्रवण करो।।४१।।

मन्त्रः षडक्षरः सारः सद्यः कुमतिनाशकः।
रसलक्षावधिस्तस्य जाप्य एव सरेप्सितः॥४२॥

मञ्जुघोष का छः अक्षर का मन्त्र ही सर्वश्रेष्ठ है। वह कुमति का सद्यः नाश करने वाला है। इस मन्त्र का छः लाख का जप देवता को अभिप्रेत है।।४२।।

त्रिपक्षजपनाद् देवि! वाग्मी भवति मानवः।
सुकवित्वं भवेत्तस्य प्रतिभा विश्वजित्वरी॥४३॥

हे देवि! तीन पक्ष तक अर्थात् डेढ़ मास तक इसका जप करने से मनुष्य वाग्मी तथा सुकवित्व से युक्त हो जाता है एवं उसकी प्रतिभा विश्व को विजित करने वाली हो जाती है।।४३।।

मासमात्रं जपेद्यस्तु पण्डितोऽपण्डितो यदि।
षण्मासं यस्तु जपति स सर्वज्ञः कुशाग्रधीः॥४४॥
अब्देन सिद्धयः सर्वा भवन्ति सत्यमीश्वरि!।

एक मास तक जो इसका जप करता है, वह यदि अपण्डित अर्थात् मूर्ख भी हो

तो पण्डित हो जाता है। कोई व्यक्ति यदि छः मास तक इसका जप करता है तो वह तीक्ष्ण मेधा से युक्त होकर सर्वज्ञ हो जाता है। हे ईश्वरि! एक वर्ष-पर्यन्त जप करने से मनुष्य को सभी सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं, यह सत्य है।।४४।।

अहोरात्रस्य नृणां वर्चो नैवेद्यं चक्षुषोर्मलम् ।।४५।।
मूत्रैः पाद्यं ददेत्तस्य गन्धो विट्खदिरोद्भवः ।
आरण्यस्य च पत्राणि पुष्पाण्येव सुनिश्चितम् ।।४६।।
ऐरण्डतैलैः कार्पासबीजमर्घ्यं प्रचक्षते ।
तुण्डकीलालदानेन भवेदाचमनीयकम् ।।४७।।

मनुष्य का मल ही उस देवता का तेज एवं नेत्र का कीचड़ नैवेद्य होता है। इन देवता को अपने मूत्र द्वारा (पादप्रक्षलानार्थ) पाद्य अर्पित करना चाहिये। विट्-खदिर से उत्पन्न गन्ध अर्पित करना चाहिये। जंगली पत्ते ही उसके लिये पुष्प होते हैं। एरण्ड के तेल के साथ कपास का बीज इनका अर्घ्य होता है एवं अपने मुख के कुल्ले के जल से इनका आचमन होता है।।४६-४७।।

अथाचारः

अरिष्टगेहे निशि तैलमेवमादाय यत्नात् करपल्लवेन ।
तेनाञ्चितं काञ्चनपुष्पमेव निवेद्य तस्मै जपति प्रकामम् ।।४८।।

अब आचार (अनुष्ठान) कहते हैं। रात्रि में सूतिकाकक्ष का तेल यत्नपूर्वक हाथों पर लाकर उसमें कांचनपुष्प लगाकर देवता को निवेदित करना चाहिये। इसके बाद अपनी इच्छा के अनुसार संख्या में जप करना चाहिये (कांचनपुष्प = धतूरापुष्प)।।४८।।

आकिंशुकाक्षोडतरोश्च मूले विलिख्य पादौ वदनामृतेन ।
त्रिमुण्डमात्राश्रित एव रात्रौ जपेद्यथाशक्ति तु पौर्णमास्याम् ।।४९।।

पलाश अथवा अशोक के नीचे बैठकर मुख के कुल्ला के जल को दोनों पैरों में लेपन करके त्रिमुण्डमात्र पर आश्रित होकर पूर्णिमा की रात्रि में यथाशक्ति मन्त्रजप करना चाहिये।।४९।।

वकुलतरुतलस्थो मुण्डमात्रैकरूढ़ो
हिमकरकरगौरं चिन्तयित्वा निशीथे ।
यदि जपति जड़ात्मा मन्त्रमेनं त्रिपक्षं
भवति जगति साक्षाद्गीष्पतिर्नात्र चित्रम् ।।५०।।

वकुलपुष्प के वृक्ष के नीचे उक्त त्रिमुण्ड में से किसी एक मुण्ड पर आरूढ़ होकर

चन्द्रमा के समान गौरवर्ण मञ्जुघोष देवता का ध्यान करके यदि कोई भी जड़ बुद्धि व्यक्ति इस मन्त्र का तीन पक्ष तक जप करता है, तो वह व्यक्ति इस जगत् में साक्षात् बृहस्पति हो जाता है; इसमें कोई आश्चर्य नहीं करना चाहिये।।५०।।

भुक्तान्नशेषकदलीतरुमूलसंस्थं
आस्तीर्णपुष्परचितासनसन्निविष्टः ।
राकाविधूदगमुपेत्य करोति पूजां
यः सोऽप्यजेय इह वाक्पतिरीश्वरः स्यात् ।।५१।।

भोजन करने के बाद बचे हुये अन्न का भक्षण करके केले के वृक्ष के मूल में आस्तीर्ण पुष्प के द्वारा रचित आसन पर बैठ कर पूर्णिमा के दिन जो मञ्जुघोष देव का पूजन करता है, वह इस लोक में अजेय बृहस्पति तथा ईश्वर हो जाता है।।५१।।

जिह्वां विसृज्य निजपाणिसरोरुहाभ्यां
रास्नाप्रसूनशतकैः परिपूज्य गोष्ठे ।
यो वै जपेदनुदिनं रसलक्षमात्रं
ईशं जयेत् किमुत वाक्पतिमेव चित्रम् ।।५२।।

अपने हाथों से जिह्वा का मार्जन करके गौशाला में जाकर एक सौ रास्ना के फूलों से जो मञ्जुघोष देव की पूजा करता है, वह व्यक्ति यदि प्रतिदिन छः लाख मन्त्र जप करता है तो वह ईश्वर पर भी विजय प्राप्त कर सकता है। वह बृहस्पति को भी जीत सकता है, इसमें कोई सन्देह नहीं है।।५२।।

यो दन्तधावनकरश्च करञ्जकाष्ठै-
स्तस्यापि गीष्पतिवचो नियतं सुलभ्यम् ।
तैलेन यस्तिलभुवा मतिमान् जुहोति
कुन्देन कैरवदलेन च सोऽर्चितः स्यात् ।।५३।।
स्थित्वा निशीथसमये रजकस्य काष्ठे
खड्गान्वितो जपति यद्यपि पौर्णमास्याम् ।
सम्पूर्णमासमथवा तरसापि तस्य
वक्त्राद् विनिःसरति गीरमृतायमाना ।।५४।।

जो व्यक्ति करञ्ज की लकड़ी से दातून करता है और कुन्द अथवा कुमुदपुष्प से मञ्जुघोष की अर्चना करके तिल के तैल से होम करता है, उसके मुख से बृहस्पति के समान सुमधुर वाक्य निकलते हैं।

रात्रि में पूर्णिमा में धोबी जिस काठ पर कपड़े धोता है, उस पर बैठकर खड्गयुक्त होकर जो व्यक्ति मञ्जुघोष के मन्त्र का जप एक मास तक करता है, उसके मुख से शीघ्र ही अमृततुल्य मधुर वाक्य निकलने लगते हैं।।५३-५४।।

पिता गुरुर्न कार्यो वै दीक्षाकर्मणि पार्वति!।
तावत्कालं सुतो दुःखी पिता तु नरकं व्रजेत्।।५५।। इति।

हे पार्वति! दीक्षा में पिता को कभी भी गुरु नहीं बनाना चाहिये। पिता को गुरु बनाने से सदा-सर्वदा पुत्र दुःखी रहता है और पिता को भी नरक प्राप्त होता है।।५५।।

इदञ्चान्यापेक्षायादिकदोषसूचकं प्रतिप्रसृतमहातीर्थाद्यधिकरणकपितृदीक्षा-निषेधञ्च। अस्य पुरश्चरणं षड्लक्षजपः।।५६।।

यह वचन पहले (प्रथम खण्ड में) कहे गये वचन से अधिक दोषसूचक है तथा प्रतिप्रसव-प्राप्त महातीर्थादि में पितृदीक्षा का भी विरोधसूचक है अर्थात् जहाँ पहले महातीर्थादि में पिता से दीक्षा लेने का विधान कहा गया है, यह वचन उसके भी विपरीत है। इस मन्त्र के पुरश्चरण-हेतु छः लाख जप कहा गया है।।५६।।

एवं सम्पूज्य देवेशं लक्षषट्कं जपेन्मनूम्।
घृताक्तकुन्दपुष्पैश्च एकादशशतानि च।
जुहुयादेधिते वह्नौ कान्तारे पितृवेश्मनि।।५७।।

इस मञ्जुघोष मन्त्र का पुरश्चरण छः लाख जप है। तन्त्र मे कहा गया है कि इस प्रकार पितृगृह (कान्तारस्थ = वनस्थ श्मशान) में जाकर घृत लिपटे कुन्दपुष्प द्वारा प्रदीप्त अग्नि में ग्यारह सौ होम करना चाहिये।।५७।।

अथास्य स्तवः—

अमलं निर्गुणं सारं गुणिनं सर्वकामदम्।
तं नमामि हितं नाथं मञ्जुघोषं नमाम्यहम्।।५८।।
रवीशं परमं सारं स्तुतं ब्रह्मादिभिः सुरैः।
रक्तं रजोगुणैर्युक्तं मञ्जुघोषं नमाम्यहम्।।५९।।
वचनेन न जानन्ति कामेन न च कोविदाः।
तं शान्तं तमसा युक्तं पीतवस्त्रं नमाम्यहम्।।६०।।

अब इनकी स्तुति बताते हैं—जो निर्मल, निर्गुण, सारस्वरूप तथा सर्वकामप्रद, साधकों का हित करने वाले प्रभु हैं, उन मञ्जुघोष को मैं प्रणाम करता हूँ।

जो सूर्य के भी नियन्ता, परम श्रेष्ठ ब्रह्मादि देवों द्वारा वन्दित हैं, रक्तयुक्त हैं अर्थात् रजोगुण से युक्त हैं, उन मञ्जुघोष को मैं प्रणाम करता हूँ।

पण्डितगण जिन्हें वाक्य तथा मन द्वारा नहीं जान पाते, उन शान्त तमोगुणयुक्त, पीत वस्त्रधारी मञ्जुघोष को मैं प्रणाम करता हूँ।।५८-६०।।

विशेष—ऊपर श्लोक ५८ में उनको गुणातीत अथवा सत्त्व गुणयुक्त, श्लोक ५९ में रजोगुणयुक्त तथा श्लोक ६० में तमोगुण-युक्त बताया गया है।

चरणे पतिता यस्य दैत्यानां जयहेतवे।
चरणे पतितो जीवो बुद्धये तं नमाम्यहम्।।६१।।
न जानन्ति सुरा यस्य तत्त्वं सत्त्वगुणेन वै।
दृष्टं समस्तसारञ्च मञ्जुघोषं नमाम्यहम्।।६२।।
धीशं विश्वेश्वरञ्चैव प्रतिपत्त्यादिहेतुकम्।
सकलं निष्कलञ्चैव तं नमामि हितप्रदम्।।६३।।

देवगण से युद्ध में जीतने के लिये दैत्यगण जिनके चरण पर गिरते हैं, बृहस्पति ज्ञानप्राप्त्यर्थ जिनके चरणों में शरणागत होते हैं, उन मञ्जुघोष को मैं प्रणाम करता हूँ।

देवगण सत्त्वगुण द्वारा भी जिनका तत्त्व नहीं जान पाते, जो प्रसन्न तथा सर्वसार हैं, उन मञ्जुघोष को मैं प्रणाम करता हूँ।

जो बुद्धि के ईश्वर हैं, जो विश्व के ईश्वर हैं, जो प्रतिपत्ति-प्रभृति के हेतु हैं, जो सकल (सगुण) होकर भी निष्कल (निर्गुण) हैं, उन मञ्जुघोष को मैं प्रणाम करता हूँ।।६१-६३।।

अत्र दीपनीषडक्षराणामेकैकाक्षरेण षट्पद्यानामेकैकपद्ये प्रथमाक्षरनिबन्ध इत्यवधेयमिति।।६४।।

इस स्तव में दीपनी के पूर्वकथित छः अक्षरों मे से एक-एक अक्षर को एक-एक पद्य के प्रथमाक्षर में लगाना चाहिये अर्थात् जैसे दीपनी के छः अक्षर हैं—अ र व च न धीं। प्रथम स्तुति श्लोक नं. ५८ अर्थात् 'अमल' से प्रारम्भ है, इसके आगे दीपनी का प्रथम अक्षर अ लगाना चाहिये। अब स्तुति का प्रथम श्लोक होगा—अ अमलं। स्तुति का द्वितीय श्लोक ५९ होगा, 'र' दीपनी का द्वितीय अक्षर है, इसे श्लोक के प्रथमाक्षर में लगाने पर रवीशं के स्थान पर 'र रवीशं' होगा। इसी प्रकार छः श्लोकों में दीपनी के एक-एक अक्षर का योग करना चाहिये।।६४।।

●

अथ त्र्यम्बकः

त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात्।।१।।

अब त्र्यम्बक मन्त्र कहा जाता है। 'त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्द्धनं उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात्—यह भगवान् त्र्यम्बक का मन्त्र है। मन्त्रार्थ है कि हम सुगन्धि-पुष्टिवर्धक त्र्यम्बक शिव की पूजा करते हैं। वे हमें पक्व उर्वारुक के समान मृत्युरूपी बन्धन से मुक्त करें; किन्तु अमृत से मुक्त न करें।।१।।

अस्य वशिष्ठऋषिरनुष्टुप्छन्दस्त्र्यम्बको देवता। तत्र प्रयोगः—भूतशुद्ध्यादिपीठन्यासान्तं कर्म समाप्य ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। शिरसि—वशिष्ठाय ऋषये नमः। मुखे—अनुष्टुप्छन्दसे नमः। हृदि—त्र्यम्बकाय देवतायै नमः। अमुकस्यामुकशान्तये विनियोगः॥२॥

इस मन्त्र के ऋषि वशिष्ठ, छन्द अनुष्टुप्, देवता त्र्यम्बक, बीज श्रीं एवं शक्ति माया (ह्रीं) है। अमुक के अमुक दोष की शान्ति के लिये इसका विनियोग किया जाता है। विनियोग के पश्चात् भूतशुद्धि से पीठन्यास-पर्यन्त कर्म करके ऋष्यादि न्यास किया जाता है; जैसे शिर पर ॐ वशिष्ठाय ऋषये नमः, मुख में ॐ अनुष्टुप् छन्दसे नमः, हृदय में ॐ त्र्यम्बकाय देवतायै नमः, गुह्य में ॐ श्रीं बीजाय नमः, पादद्वय में ॐ ह्रीं शक्तये नमः।।२।।

ततः कराङ्गन्यासौ—त्र्यम्बकं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, यजामहे तर्जनीभ्यां स्वाहा, सुगन्धि पुष्टिवर्द्धनं मध्यमाभ्यां वषट्, उर्वारुकमिव बन्धनात् अनामिकाभ्यां हुं, ॐ मृत्योर्मुक्षीय कनिष्ठाभ्यां वौषट्, ॐ मामृतात् करतलपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। ततः शिरोभ्रूयुगलाक्षिवक्त्र-गण्डयुगलहृदयोदरगुह्योरुजानुपादेषु एकादशपदानि न्यस्य ध्यायेत्॥३॥

इसके पश्चात् इस प्रकार करांग न्यास करना चाहिये—ॐ त्र्यम्बकं अंगुष्ठाभ्यां नमः, ॐ यजामहे तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ सुगन्धिं पुष्टिवर्द्धनं मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ उर्वारुकमिव बन्धनात् अनामिकाभ्यां हुं, ॐ मृत्योर्मुक्षीय कनिष्ठाभ्यां वौषट्, ॐ माऽमृतात् करतलपृष्ठाभ्यां फट्। इसी प्रकार हृदयादि में भी अंगन्यास करना चाहिये। उसके पश्चात् वर्णन्यास करके पदन्यास करना चाहिये; यथा—पू: मस्तके त्र्यं नमः। प: मस्तके श्वं जमः। द: मस्तके—कं नमः। ऊं मस्तके यं नमः। हृदय के ऊर्ध्व भाग में जां नमः। गले में मं नमः। मुख में हें नमः। नाभि में सुं नमः। हृदय में गं नमः। पृष्ठ पर न्धिं नमः। कुक्षि में पुं नमः। लिंग में ष्टिं नमः। पायु में वं नमः। दक्षिण ऊरुमूल में र्द्धं नमः। वाम ऊरुमूल में नं नमः। दक्षिण ऊरु के अन्त में ऊं नमः। वाम ऊरु के अन्त में र्वां नमः। दक्षिण जानु में रुं नमः। वाम जानु में कं नमः। दक्षिण जानु के उपरिस्थ वृत्त में मिं नमः। वाम वृत्त में वं नमः। दक्षिण स्तन पर बं नमः। वाम

स्तन पर न्धं नमः। दक्षिण पार्श्व में नां नमः। वाम पार्श्व में न्मृं नमः। दक्षिण पैर में त्यों नमः। वाम पैर में मुं नमः। दाहिने हाथ में क्षीं नमः। बाँयें हाथ में यं नमः। दाहिनी नासिका पर मां नमः। वाम नासिका पर ऽमृं नमः। मस्तक में तां नमः (यह वर्णन्यास त्र्यम्बक मन्त्र के एक-एक वर्ण से किया गया है)।

इस प्रकार वर्णन्यास करने के उपरान्त मस्तकादि में पदन्यास किया जाता है; जैसे—मस्तक में ॐ त्र्यम्बकाय नमः। भ्रूद्वय में ॐ यजामहे नमः। चक्षु में ॐ सुगन्धिं नमः। वक्त्र में ॐ पुष्टिवर्धनं नमः। गण्डद्वय में ॐ उर्वारुकं नमः। हृदय में ॐ इव नमः। जठर में ॐ बन्धनान् नमः। गुह्य में ॐ मृत्योः नमः। ऊरु में ॐ मुक्षीय नमः। जानु में ॐ मा नमः। पैरों में ॐ अमृतात् नमःपदन्यास करने के पश्चात् ध्यान करना चाहिये।।३।।

विशेष—तन्त्रसार में इस वैदिक त्र्यम्बक मन्त्र के पूजा-प्रयोग में मन्त्रवर्णों का न्यास अंकित है; परन्तु प्रकृत आगमतत्त्वविलास ग्रन्थ में इस न्यास का उल्लेख नहीं है। शारदातिलक में करांगन्यास के पश्चात् वर्णन्यास तथा पदन्यास कर्त्तव्यरूपेण कहा गया है। इसीलिये यहाँ इन दोनों न्यासों का उल्लेख किया गया है।

हस्ताभ्यां कलशद्वयामृतरसैराप्लावयन्तं शिरो
द्वाभ्यां तौ दधतं मृगाङ्कवलये द्वाभ्यां वहन्तं परम्।
अङ्कन्यस्तकरद्वयामृतघटं कैलासकान्तं शिवं
स्वच्छाम्भोजगतं नवेन्दुमुकुटं देवं त्रिनेत्रं भजे ।।४।।

हस्तद्वय द्वारा पकड़े कलशद्वय से मध्य मस्तक पर अमृतरस की वर्षा करने वाले (अर्थात् दो हाथों से घट पकड़ कर शिर पर अमृत रस उलटते हुये), दो हाथों में क्रमशः मृगमुद्रा तथा अक्षवलयधारी; साथ ही अंक में रखे दो अमृतघट को पकड़े हुये स्वच्छ कमल पर आसीन कैलासकान्त नवचन्द्रमा को शिर पर धारण करने वाले, तीन नेत्र वाले परम देव शिव का मैं भजन करता हूँ।।४।।

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्यार्घ्यं संस्थाप्य शैवोक्तपीठपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणाणि पूजयेत्। केशरेषु अग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च षडङ्गैः पूजयित्वाऽष्टपत्रेषु अर्काय इन्दवे वसुधायै जलाय वह्नये वायवे वियते यजमानाय। तद्बहिः पूर्वादितः रामा-राका-प्रभा-ज्योत्स्ना-पूर्णा-उषा-पूरणी-सुधाः सम्पूज्य, तद्बहिः विश्वा-विद्या-सिता-प्रज्ञा-सारा-सन्ध्या-शिवा-निशास्तद्बाह्ये आर्या-प्रज्ञा-प्रभा-मेधा-शान्ति-कान्ति-धृति-मतीस्तद्बहिः धरामायावनीपद्माशान्ताऽ-मोघाजयाऽमलाः सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्।।५।।

इस प्रकार से ध्यान करके मानसोपचार पूजन, विशेषार्घ्य-स्थापन, शैवोक्त पीठ-पूजा, पुनः ध्यान, मुद्राप्रदर्शन, आवाहन से पञ्चपुष्पाञ्जलिदान-पर्यन्त समस्त विधान सम्पन्न करके आवरण-पूजन करना चाहिये। प्रथमतः केशर के अग्न्यादि कोण में, मध्य में तथा दिक्समूह में षड़ङ्ग-पूजन करना चाहिये। जैसे—

प्रथम आवरण में—एते गन्धपुष्पे ॐ त्र्यम्बकं हृदयाय नमः, ॐ यजामहे शिरसे स्वाहा, ॐ सुगन्धिं पुष्टिवर्द्धनं शिखायै वषट्, ॐ उर्वारुकमिव बन्धनात् कवचाय हुं, ॐ मृत्योर्मुक्षीय नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ मामृतात् करतलपृष्ठाभ्यां फट्।

अब द्वितीय आवरण में अष्टपत्र के मूल में पूर्व दिशा से प्रारम्भ करके ॐ अर्काय नमः, ॐ इन्दवे नमः, ॐ वसुधायै नमः, ॐ जलाय नमः, ॐ वह्नये नमः, ॐ वायवे नमः, ॐ वियते नमः, ॐ यजमानाय नमः से अष्टमूर्त्ति का पूजन करना चाहिये।

तृतीय आवरण में पत्र के मूल बहिर्भाग में पूर्वादि क्रम से (पूर्व दिशा से प्रारम्भ करके) ॐ वामायै नमः, ॐ राकायै नमः, ॐ प्रभायै नमः, ॐ ज्योत्स्नायै नमः, ॐ पूर्णायै नमः, ॐ उषायै नमः, ॐ पूरण्यै नमः, ॐ सुधायै नमः मन्त्र से अष्टमूर्त्ति का पूजन करना चाहिये।

चतुर्थ आवरण में उसके बहिर्भाग में पत्रमध्य में ॐ विश्वायै नमः, ॐ विद्यायै नमः, ॐ सितायै नमः, ॐ प्रज्ञायै नमः, ॐ सारायै नमः, ॐ सन्ध्यायै नमः, ॐ शिवायै नमः, ॐ निशायै नमः मन्त्र से इनका पूजन करना चाहिये।

पञ्चम आवरण में उसके बाहर दलमध्य में ॐ आर्यायै नमः, ॐ प्रज्ञायै नमः, ॐ प्रभायै नमः, ॐ मेधायै नमः, ॐ शान्त्यै नमः, ॐ कान्त्यै नमः, ॐ धृत्यै नमः, ॐ मत्यै नमः से अष्टशक्ति का पूजन करना चाहिये।

षष्ठ आवरण में उसके बाहरी भाग में दलमध्य में ॐ धरायै नमः, ॐ मायायै नमः, ॐ अरण्यै नमः, ॐ पद्मायै नमः, ॐ शान्तायै नमः, ॐ अमोघायै नमः, ॐ जयायै नमः, ॐ अमलायै नमः मन्त्र से धरादि का पूजन करना चाहिये।

सप्तम आवरण में दल के बहिर्भाग में इन्द्रादि लोकपालों का तथा अष्टम आवरण में सूर्यादि नवग्रहों का पूजन करना चाहिये। तदनन्तर धूपदान से लेकर विसर्जन तक की विधि सम्पन्न करनी चाहिये।।५।।

अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः। बिल्व-पलाश-खदिर-वट-तिल-सर्षप-नवनीत-दुग्ध-दधि-दूर्वाभिर्दशद्रव्यैर्घृताक्तैर्दशसहस्रहोमश्च। प्रयोगन्तु शनिवारे अश्वत्थमूलं स्पृष्ट्वा सहस्रं जपेत्। ततो मृत्युशङ्का नश्यति॥६॥

इस मन्त्र का पुरश्चरण एक लाख जप के पश्चात् बेल, पलाश, खदिर, वटवृक्ष की समिधा, तिल, सरसों, दूध से निकले मक्खन (पदार्थादर्श ग्रन्थ में मक्खन के स्थान पर पायस कहा गया है), दुग्ध, दधि तथा दूर्बा को घृत में लपेट कर (इन दश सामग्री को घृत से लपेट कर) दश हजार होम से सम्पन्न होता है। विभिन्न कामनाओं के लिये इस मन्त्र का प्रयोग किया जाता है। अकालमृत्यु-निवारणार्थ इसका प्रयोग इस प्रकार किया जाता है—शनिवार को पीपलवृक्ष के मूल का स्पर्श करके एक हजार मन्त्रजप करना चाहिये, इससे मृत्युशंका नष्ट हो जाती है।।६।।

तथा—

स्नात्वा सहस्त्रं प्रजेपदादित्याभिमुखो मनूम्।
आधिव्याधिविनिर्मुक्तो दीर्घमायुरवाप्नुयात् ।।७।।

निबन्ध (शारदातिलक) में भी कहा गया है कि स्नान करके सूर्य की ओर होकर एक हजार मन्त्र-जप करना चाहिये। इससे आधि, व्याधि से मुक्त होकर व्यक्ति दीर्घ आयु प्राप्त करता है।।७।।

•

अथ मृतसञ्जीवनी विद्या

आदौ प्रासादबीजं तदनु मृतिहरं तारकं व्याहृतीश्च।
प्रोच्चार्य त्र्यम्बकं यो जपति च सततं सम्पुटं चानुलोमम् ।।८।।

अब मृतसंजीवनी विद्या कहते हैं। पहले प्रासादबीज (हौं), उसके पश्चात् मृतिहर (मृत्युञ्जय मन्त्र), तारक (ॐ) तथा व्याहृति (भूर्भुवः स्वः) का उच्चारण करके त्र्यम्बक मन्त्र के अनुलोम में प्रासादबीज, मृत्यञ्जय मन्त्र तथा व्याहृति से पुटित करके जो व्यक्ति सर्वदा जप करता है, उसे सभी सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं।।८।।

स्मृतिहरं त्र्यक्षरमृत्युञ्जयमन्त्रम्। सम्पुटमिति अनुलोमक्रमेणैव सम्पुटितमित्यर्थः। तेन हौं ॐ जूं सः ॐ भूर्भुवःस्वः, ततो मध्ये त्र्यम्बकमन्त्रः, ततश्च हौं ॐ जूं सः ॐ भूर्भुवःस्वः। अस्य जपात् सर्वसिद्धिर्भवति।।९।।

मृतिहर = ॐ जूं सः (जो मृत्युञ्जय मन्त्र है)। सम्पुट का अर्थ है—अनुलोमक्रम से सम्पुटित अर्थात् 'ॐ जूं सः ॐ भूर्भुवः स्वः' मध्य में त्र्यम्बक मन्त्र 'त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनं उर्वारुकमिव बन्धनान् मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात्'। इसके पश्चात् हौं ॐ जूं सः ॐ भूर्भुवःस्वः। मन्त्रोद्धार होता है—हौं ॐ जूं सः ॐ भूर्भुवःस्वः त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्द्धनम् उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात्'। इसके जप से सर्वसिद्धि प्राप्त होती है।।९।।

अथ शुक्रोपासिता मृतसञ्जीवनी विद्या

गायत्र्या एकैकपादानन्तरं त्र्यम्बकमन्त्रस्य एकैकपाद इति। तथा च 'ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्द्धनं भर्गो देवस्य धीमहि उर्वारुकमिव बन्धनात् धियो यो नः प्रचोदयात् मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्॥१०॥

अब शुक्र ऋषि द्वारा उपासित मृतसंजीवनी विद्या कहते हैं। गायत्री के एक-एक पाद के अनन्तर त्र्यम्बक मन्त्र का एक पाद। उससे मन्त्रोद्धार वह होता है, जो ऊपर मूल में 'ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं' से लेकर 'मामृतात्' तक कहा गया है।।१०।।

अस्य ध्यानं—

स्वच्छं स्वच्छारविन्दस्थितमुभयकरे संस्थितौ पूर्णकुम्भौ
द्वाभ्यामेणाक्षमाले निजकरकमले द्वौ घटौ नित्यपूर्णौ।
द्वाभ्यां तौ च स्रवन्तौ शिरसि शशिकलां चामृतैः प्लावयन्तं
देहं देवो दधानः प्रदिशतु विशदाकल्पजालः श्रियं वः॥११॥

इनका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—स्वच्छ श्वेत कमल पर आसीन, दोनों हाथों में घृतपूर्ण घटधारी, अन्य दो हाथों में मृगमुद्रा तथा अक्षमालाधारी, अन्य दो हाथों में पुन: अमृतपूर्ण घटद्वयधारी, अन्य दो हाथों में अमृतस्रावी घटद्वयधारी, उस अमृतपूर्ण घट द्वारा अपने सिर पर स्थित शशिकला को नहलाते हुये, उस अमृत से आप्लावित शरीर वाले, उज्ज्वल भूषणादि से भूषित त्र्यम्बक देव तुम सबको ऐश्वर्य प्रदान करें।।११।।

एवं ध्यात्वावाह्य ॐ त्र्यम्बकाय महादेवाय नमः इत्यनेन पूजयेत्। अस्य जपात् सर्वसिद्धिः॥१२॥

इस प्रकार ध्यान तथा आवाहन करके 'ॐ त्र्यम्बकाय महादेवाय नम:' मन्त्र से पूजा करके इस मन्त्र के जप करने से सभी सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं।।१२।।

●

अथ क्षेत्रपालः

वर्णान्त्यमौविन्दुयुतं क्षेत्रपालाय हृन्मनुः।
ताराद्यो वसुवर्णोऽयं क्षेत्रपालस्य कीर्त्तितः॥१३॥

तेन ॐ क्षौं क्षेत्रपालाय नमः इति तारहितो वसुवर्णाढ्य इत्यर्थः।

अब क्षेत्रपाल मन्त्र कहते हैं। अन्तिम वर्ण क्षकार को औकार तथा विन्दु से युक्त

करने के पश्चात् क्षेत्रपालाय हृत् (नम:) और आदि में तार (ॐ) लगाने से क्षेत्रपाल का अष्टाक्षर मन्त्र स्पष्ट होता है। मन्त्रोद्धार होता है—ॐ क्षौं क्षेत्रपालाय नम:। प्रणवरहित रहने पर यह अष्टाक्षर मन्त्र होता है।।१३।।

अस्य ब्रह्मा ऋषिर्गायत्रीछन्द: क्षेत्रपालो देवता क्षौं बीजं आयेति शक्ति:। कराङ्गन्यासौ तु क्षां अङ्गुष्ठाभ्यां नम: इत्यादिना षड्दीर्घभाजा स्व-बीजेनैव॥१४॥

इसका विनियोग इस प्रकार किया जाता है—अस्य ब्रह्मा ऋषिर्गायत्रीछन्द: क्षेत्रपालो देवता क्षौं बीजं आयेति शक्ति: सर्वकामसिद्ध्यर्थं पूजने विनियोग:। ऋष्यादि न्यास का क्रम यह है—मस्तक पर ॐ ब्रह्मणे ऋषये नम:, मुख में ॐ गायत्रीछन्दसे नम:, हृदय में ॐ क्षेत्रपालाय देवतायै नम:, गुह्य में —ॐ क्षौं बीजाय नम:, पादद्वय में ॐ आयशक्तये नम:। तदनन्तर षड्दीर्घयुक्त बीज द्वारा करन्यास तथा अंगन्यास करना चाहिये। जैसे—ॐ क्षां अङ्गुष्ठाभ्यां नम:। ॐ क्षां तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ क्षीं मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ क्षैं अनामिकाभ्यां हुं। ॐ क्षौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ॐ क्ष: करतलपृष्ठाभ्यां फट्। इस प्रकार से करन्यास करके ॐ क्षां हृदयाय नम: आदि प्रकार से अंगन्यास करके व्यापक न्यास करने के उपरान्त ध्यान करना चाहिये।।१४।।

अस्य ध्यानं—

भ्राजच्चन्द्रजटाधरं त्रिनयनं नीलाञ्जनाद्रिप्रभं
दोर्दण्डात्तगदाकपालमरुणस्त्रग्वस्त्रगन्धोज्ज्वलम्।
घण्टामेखलखर्परध्वनिमिलज्झङ्कारभीमं विभुं
वन्दे संहितसर्पकुण्डलधरं श्रीक्षेत्रपालं सदा॥१५॥

इसका ध्यान इा प्रकार किया जाता है—मस्तकस्थ चन्द्र के द्वारा उज्ज्वल हो रही जटा को धारण करने वाले, तीन नेत्रों वाले, अंजन (काजल) के पर्वत के समान कान्ति वाले, बाहुदण्ड में गदा, कपालधारी, अरुण वर्ण की माला, वस्त्र तथा गन्ध से उज्ज्वल, मिलित घण्टा तथा मेखला (दोनों के मिलित स्वर से) घर्षण शब्द से भीम (भयानक) लगने वाले, सदा सर्प का कुण्डल धारण करने वाले विभु श्री क्षेत्रपाल की मैं वन्दना करता हूँ।।१५।।

एवं ध्यात्वा मानसपूजार्घ्यस्थापनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरण-पूजामाचरेत्। अङ्गैः प्रथमावरणम्। अनलाक्षाग्निकेशकरालघण्टार-वमहाक्रोधपिशिताशनपिङ्गलोक्षोदूर्ध्वकेशैरष्टभिर्द्वितीयम्। इन्द्रादि-भिस्तृतीयम्। वज्रादिभिश्चतुर्थम्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समा-पयेत्॥१६॥

इस प्रकार से ध्यान करने के बाद मानसोपचार पूजा, विशेषार्घ्य-स्थापन से लेकर पञ्चपुष्पाञ्जलि-दानपर्यन्त समस्त कार्य करके आवरण पूजा करनी चाहिये।

प्रथम आवरण में षडङ्ग पूजा होती है; जैसे—गन्धपुष्पे क्षां हृदयाय नमः इत्यादि।

अष्टमूर्त्ति की अर्चना द्वितीय आवरण में की जाती है; यह पूजा अग्निकेशाय, करालाय, घण्टारवाय, महाक्रोधाय, पिशिताशनाय, पिङ्गलाक्षाय तथा ऊर्ध्वकेशाय के प्रारम्भ में ॐ तथा अन्त में नमः लगाकर करनी चाहिये। इन्द्रादि लोकपाल का पूजन तृतीय आवरण में किया जाता है एवं उनके वज्रादि अस्त्रों का पूजन चतुर्थ आवरण में होता है। तदनन्तर धूपदानादि से लेकर विसर्जन-पर्यन्त समस्त शेष कर्म का सम्पादन करना चाहिये।।१६।।

अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः। साज्यचरुणा दशांशहोमः। मन्त्रदेवप्रकाशिकायान्तु प्रणवरहितोऽयं मन्त्रस्तथा चाष्टाक्षरः। अस्य पुरश्चरणमयुतजपः॥१७॥

इसका पुरश्चरण एक लाख मन्त्रजप है। साज्य चरु से जप का दशांश होम करना चाहिये एवं होम के अनन्तर पुनः क्षेत्रपाल का पूजन करना चाहिये; किन्तु मन्त्रदेवप्रकाशिका ग्रन्थ में कहा है कि पुरश्चरण में इसका प्रणवरहित जप करना चाहिये, इससे यह मन्त्र अष्टाक्षर हो जाता है। इसका पुरश्चरण दश हजार जप से होता है।।१७।।

अथास्य बलिविधिः—रात्रौ गृहाङ्गणे स्थण्डिलं कृत्वा तत्र सपरिवारं देवं सम्पूज्य देवहस्तस्थकपाले बलिमन्त्रेण त्रिवारं बलिं दत्वा सपरिवारेभ्यः स्वस्वनामभिर्बलिं सकृत् सकृत् दद्यात्। बलिमन्त्रस्तु एह्येहि विदुषि सुरु सुरु भञ्जय भञ्जय तर्जय तर्जय विघ्नपद विघ्नपद महाभैरव क्षेत्रपाल बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा। अथवा एह्येहि रुद्र तुरु तुरु सुरु सुरु जम्भ जम्भ हन हन विघ्नं विनाशय विनाशय महाबलिं क्षेत्रपाल गृह्ण गृह्ण स्वाहा इति। बलिश्च सव्यञ्जनबृहद्ग्रासेन देयः॥१८॥

अब क्षेत्रपाल को बलि देने की विधि कहते हैं। रात्रि में गृह के आंगन में स्थण्डिल का निर्माण करके उस स्थण्डिल पर क्षेत्रपाल के परिवारगण के साथ क्षेत्रपाल का पूजन करके क्षेत्रपाल देव के बाँयें हाथ में स्थित कपाल में बलिमन्त्र से तीन बार व्यञ्जनों के साथ बृहद् अन्नपिण्ड की बलि देकर उनके परिवारगण को ॐ अनलाय स्वाहा, ॐ अग्निकेशाय स्वाहा, ॐ करालाय स्वाहा, ॐ घण्टारवाय स्वाहा, ॐ महाक्रोधाय स्वाहा, ॐ पिशिताशनाय स्वाहा, ॐ पिङ्गलाक्षाय स्वाहा तथा ॐ ऊर्ध्वकेशाय स्वाहा कहकर (एक-एक का नाम लेकर) प्रत्येक को बलि प्रदान करनी चाहिये। बलि

मन्त्र है—ॐ एह्येहि विदुषि सुरु सुरु भञ्जय भञ्जय तर्जय तर्जय विघ्नपद विघ्नपद महाभैरव क्षेत्रपाल बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा। अथवा दूसरा मन्त्र है—ॐ एह्येहि रुद्र तुरु तुरु सुरु सुरु जम्भ जम्भ हन हन विघ्नं विनाशय विनाशय महाबलिं क्षेत्रपाल गृह्ण गृह्ण स्वाहा। व्यंजनों के साथ बृहद् ग्रास बनाकर बलि देनी चाहिये।।१८।।

तन्त्रे—

बलिनानेन सन्तुष्टः क्षेत्रपालः प्रयच्छति ।
कान्तिमेधाबलारोग्यतेजःपुष्टिर्यशःप्रियः ॥१९॥

तन्त्र में कहा है कि बलि से सन्तुष्ट होकर क्षेत्रपाल साधक को कान्ति, मेधा, बल, आरोग्य, तेज, पुष्टि, यश तथा ऐश्वर्य प्रदान करते हैं।।१९।।

●

अथ बटुकः

निबन्धे—

उद्धरेद् बटुकं भेन्तमापदुद्धरणं तथा।
कुरुद्वयं पुनर्ङेन्तं बटुकञ्च समुद्धरेत्।
एकविंशत्यक्षरात्मा शक्तिरुद्धो महामनुः ॥२०॥

तथेति ङेन्तमित्यर्थः। तेन 'ह्रीं बटुकाय आपदुद्धरणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं'।

अब बटुकमन्त्र कहा जाता है। शारदातिलक में कहा गया है कि ङे विभक्तियुक्त बटुक को (अर्थात् बटुकाय) तथा ङे विभक्तियुक्त आपदुद्धरण को (अर्थात् आपदुद्धरणाय) तथा कुरुद्वय (कुरु कुरु) तथा पुनः ङे विभक्तियुक्त बटुक को (अर्थात् बटुकाय) लगाकर उसे शक्ति (ह्रीं) द्वारा रुद्ध (पुटित) करने से इक्कीस अक्षरों वाले बटुकभैरव के महामन्त्र का उद्धार होता है। इससे मन्त्रोद्धार होता है—ह्रीं बटुकाय आपदुद्धरणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं।।२०।।

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादि प्राणायामान्तं कृत्वा ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। शिरसि बृहदारण्यकऋषये नमः, मुखे गायत्रीछन्दसे नमः, हृदि बटुकभैरवाय देवतायै नमः। ततः कराङ्गन्यासौ–ॐ ह्रां वां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ ह्रीं वीं तर्जनीभ्यां स्वाहा इत्यादिना॥२१॥

इस मन्त्र की पूजापद्धति इस प्रकार है—प्रातःकृत्य से लेकर प्राणायाम-पर्यन्त कार्य करके पीठशक्ति-सहित पीठन्यास करने के बाद इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करना

चाहिये—मस्तक पर ॐ बृहदारण्यकाय ऋषये नमः, मुख में ॐ गायत्रीछन्दसे नमः, हृदय में ॐ बटुकभैरवाय देवतायै नमः, गुह्य में ॐ वं बीजाय नमः, पादद्वय में ह्रीं शक्तये नमः।

तदनन्तर मूर्त्तिन्यास आवश्यक है। अंगुष्ठादि पाँच अंगुलियों में क्रमशः ॐ ह्रां वां ईशानाय नमः, ॐ ह्रें वें तत्पुरुषाय नमः, ॐ ह्रु वुं अघोराय नमः, ॐ ह्रिं विं वामदेवाय नमः, ॐ ह्रं वं सद्योजाताय नमः से न्यास करने के पश्चात् अंगुष्ठ से मस्तक में ॐ ह्रों वों ईशानाय नमः, अनामिका से मुख में (चेहरे पर) ॐ ह्रें वें तत्पुरुषाय नमः, मध्यमा से हृदय में ॐ ह्रुं वुं अघोराय नमः, तर्जनी से गुह्य में ॐ ह्रिं विं वामदेवाय नमः, अंगुष्ठ से पादद्वय में ॐ ह्रं वं सद्योजाताय नमः से न्यास करना चाहिये।

इसी प्रकार से पञ्चमुख शिव के ऊर्ध्व, पूर्व, दक्षिण, उत्तर तथा पश्चिम मुख में जिस क्रम से ऊपर अंगुलियों का निर्देश किया गया है, उसी प्रकार से उन-उन अंगुष्ठादि अंगुलियों द्वारा मूर्त्तिन्यास करके करांगन्यास करना चाहिये; जैसे—ॐ ह्रां वां अंगुष्ठाभ्यां नमः, ॐ ह्रीं वीं तर्जनीभ्यां स्वाहा इत्यादि। एवमेव ॐ ह्रां वां हृदयाय नमः, ॐ ह्रीं वीं शिरसे स्वाहा इत्यादि रूप से अंगन्यास भी करना चाहिये।।२१।।

यथा निबन्धे—

षड्दीर्घयुक्तया शक्त्या वकारेण च तद्वता।
अङ्गानि जातियुक्तानि प्रणवाद्यानि कल्पयेत् ॥२२॥

निबन्ध में कहा भी है कि षड्दीर्घयुक्त शक्ति तथा षड्दीर्घयुक्त वकारसहित प्रणव को आदि में तथा अन्त में क्रमशः नमः, स्वाहा, वषट्-प्रभृति जातियुक्त अंगसमूह की कल्पना करनी चाहिये।।२२।।

शक्त्या मायाबीजेन। तद्वता नादविन्दुयुक्तषड्दीर्घवता। जाति नमः। स्वाहा वषडादि। ततो ध्यानम्। तन्त्रे—

तस्य ध्यानं त्रिधा प्रोक्तं सात्त्विकादिप्रभेदतः ॥२३॥

मूलोक्त शक्त्या का अर्थ है (ह्रीं) मायाबीज द्वारा। तद्वता अर्थात् नाद-विन्दु से युक्त छः दीर्घ स्वर द्वारा। जाति अर्थात् नमः, स्वाहा, वषट्, हुं, वौषट् तथा फट्। तदनन्तर ध्यान करना चाहिये। तन्त्र में कहा है कि सात्त्विकादि भेद से इनका ध्यान तीन प्रकार का होता है।।२३।।

सात्त्विकं यथा—

वन्दे बालं स्फटिकसदृशं कुण्डलोद्भासिवक्त्रं
दिव्याकल्पैर्नवमणिमयैः किङ्किणीनूपुराद्यैः ।

दीप्ताकारं विशदवसनं सुप्रसन्नं त्रिनेत्रं
हस्ताब्जाभ्यां बटुकमनिशं शूलदण्डौ दधानम् ॥२४॥

सात्त्विक ध्यान इस प्रकार किया जाता है—स्फटिक के समान शुभ्र, कुण्डल से शोभित वदन, नवमणिमय दिव्य आभूषण से भूषित, किंकिणी तथा नूपुर द्वारा उज्ज्वल देह, शुभ्र वसनधारी, प्रसन्न, त्रिनेत्रधारी, त्रिशूल तथा दण्डधारी बालक बटुकभैरव की वन्दना करता हूँ।।२४।।

राजसं यथा—

उद्यद्भास्कारसन्निभं त्रिनयनं रक्ताङ्गरागस्त्रजं
स्मेराद्यं वरदं कपालमभयं शूलं दधानं करैः।
नीलग्रीवमुदारभूषणशतं शीतांशुचूड़ोज्ज्वलं
बन्धूकारुणवाससं भयहरं देवं सदा भावये ॥२५॥

राजस ध्यान इस प्रकार किया जाता है—उदीयमान सूर्य के समान रक्तवर्ण, तीन नेत्रधारी, रक्तांगराग से सुशोभित, रक्त मालाधारी, तनिक हंसते हुये, शूल, अभय मुद्रा, कपाल तथा वरद मुद्राधारी, नीलग्रीव उत्कृष्ट सैकड़ों आभूषणों से आभूषित, चन्द्रचूड होने से चन्द्रमा की दीप्ति से उज्ज्वल प्रतीत होने वाले, बन्धूकपुष्प (पलाशपुष्प) के समान रक्त वर्ण वस्त्र धारण करने वाले, भय का हरण करने वाले बटुकदेव की सर्वदा भावना कता हूँ।।२५।।

तामसं यथा—

ध्यायेन्नीलाद्रिकान्तं शशिधवलधरं मुण्डमालं महेशं
दिग्वस्त्रं पिङ्गलाक्षं डमरुमथ शृणिं खड्गशूलाभयानि।
नागं घण्टां कपालं करसरसिरुहैर्विभ्रतं भीमदंष्ट्रं
सर्वाकल्पं त्रिनेत्रं मणिमयविलसत्किङ्किणीनूपुराढ्यम् ॥२६॥

तामस ध्यान इस प्रकार किया जाता है—नीलपर्वत के सदृश कान्ति वाले, धवल चन्द्रमा को धारण करने वाले, मुण्डों की माला से विभूषित, दिगम्बर, पिंगलवर्ण केश वाले, हाथों में डमरु, सृणि, खड्ग तथा पाश, अभय मुद्रा, नागपाश, घण्टा तथा कपाल धारण करने वाले (इनके आठ हाथ हैं), भयानक दातों वाले, सर्प के आभूषणों से भूषित, मणिमय उज्ज्वल किंकिणी तथा नूपूर से अलंकृत, तीन नेत्र वाले महेश का ध्यान करना चाहिये।।२६।।

सात्त्विकं ध्यानमाख्यातमपमृत्युविनाशनम्।
आयुरारोग्यजननमपवर्गफलप्रदम् ॥२७॥

सात्त्विक ध्यान अपमृत्यु का विनाश करने वाला, आयु तथा आरोग्य प्रदान करने वाला तथा अपवर्गरूप फल प्रदान करने वाला होता है।।२७।।

राजसं ध्यानमाख्यातं सर्वकामार्थसिद्धिदम्।
तामसं शत्रुशमनं कृत्याभूतगदापहम्।।२८।।

राजस ध्यान समस्त कामनाओं एवं अर्थ की सिद्धि देने वाला कहा गया है। तामस ध्यान शत्रु का शमन करने वाला होने के साथ-साथ कृत्या, भूत तथा रोगों का नाशक कहा गया है।।२८।।

एवं ध्यात्वा मानसपूजार्घ्यस्थापनादि कुर्यात्। अस्य पूजायन्त्रं—

धर्माधर्मादिभिः क्लृप्ते पीठे पङ्कजशोभिते।
षट्कोणान्तस्त्रिकोणस्थे व्योमपङ्कजशोभिते।।२९।।

इस प्रकार से ध्यान करके मानस-पूजा, विशेषार्घ्य-स्थापन आदि करना चाहिये। इसका पूजायन्त्र इस प्रकार होता है—धर्म तथा अधर्म द्वारा रचित षट्कोण के मध्यवर्त्ती त्रिकोण के मध्य में स्थित व्योमपंकज से संयुक्त कमलों से शोभित पीठ पर इनका पूजन करना चाहिये।।२९।।

व्योमपङ्कजम् मातृकापद्मम्।

मातृकाकमलं देवि! व्योमपङ्कजमीरितम्।

इत्युक्तत्वात्। ततः पूर्ववद् ध्यात्वावाहनादिकं कुर्यात्।।३०।।

व्योमपंकज—मातृकाकमल। भगवान कहते हैं—हे देवि! मातृकाकमल ही व्योमपंकज के नाम से प्रसिद्ध है। इसके बाद पूर्ववत् ध्यान करके आवाहन आदि करना चाहिये।।३०।।

तत्र क्रमः—मूलादिसद्योजातमन्त्रेणावाहनम्। मूलादिवामदेवेन स्थापनम्। मूलेन सन्निधापनम्। अघोरेण सन्निरोधनम्। तत्पुरुषेण योनिमुद्राप्रदर्शनम्। ईशानेन वन्दनमिति।।३१।।

अब आवाहनादि का क्रम कहते हैं। ॐ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धरणाय कुरु कुरु ह्रीं ॐ सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमः। भवेऽभवेनातिभवे भजस्व मां भवोद्भवाय नमः बटुक इहागच्छ इहागच्छ—यह सद्योजात मन्त्र कहा गया है। इस सद्योजात मन्त्र को मूल मन्त्र के पहले लगाकर आवाहन करना चाहिये। इसी प्रकार मूल मन्त्र के पहले वामदेव मन्त्र लगाकर बटुक देव का स्थापन, मूल मन्त्र द्वारा देवता का सन्निधिकरण, उसके अनन्तर मूल मन्त्र के पहले अघोर मन्त्र लगाकर उनका सन्निरोधन, मूल मन्त्र

के पहले तत्पुरुष मन्त्र लगाकर योनिमुद्रा का प्रदर्शन, मूल मन्त्र के पहले ईशान मन्त्र द्वारा वन्दन (ललाट पर अंजलिबन्धन मुद्रा से) करना चाहिये।।३१।।

ततो बहिः पद्मस्य कर्णिकायां दिक्षु त्रिकोणे च ईशानतत्पुरुषाघोरवामदेव-सद्योजातान् सम्पूज्य व्योमपङ्कजदलेषु पूर्वादितो असिताङ्गरुरुचण्ड-क्रोधोन्मत्त-कपालिभीषणसंहारानष्टभैरवानभ्यर्च्य षट्कोणेषु षडङ्गानि तद्बहिः पूर्वादितो डाकिनीराकिनीकाकिनीसाकिनीहाकिनीः पूजयेत्। ततो देवीपुत्रान् उमापुत्रान् रुद्रपुत्रान् मातृपुत्रान् दक्षिणतो यजेत्। ऊर्ध्वे ऊर्ध्वमुखीपुत्रान् अधः अधोमुखीपुत्रान्। तद्बहिरष्टपत्रेषु इन्द्रादीनष्टलोक-पालान् बटुकरूपान् पूजयेत्। तद्बहिः पूर्वे ॐ ब्रह्माणीपुत्राय नमः। एवं ईशाने माहेश्वरीपुत्राय, उत्तरे वैष्णवीपुत्राय, अनिले कौमारीपुत्राय, पश्चिमे इन्द्राणीपुत्राय, नैर्ऋते महालक्ष्मीपुत्राय, याम्ये वाराहीपुत्राय, अनले चामुण्डापुत्राय, तद्बहिर्दशदिक्षु पूर्वादितो हेतुकं त्रिपुरान्तकं वेतालं वह्निजिह्वं कालान्तकं करालं एकपादं भीमरूपं अचलं हाटकेश्वरञ्च पूजयेत्। तत ईशानाग्निनिर्ऋतिषु ॐ योगिनीसहितदिव्ययोगीशाय नमः, ॐ योगिनीसहितान्तरीक्षयोगीशाय नमः, ॐ योगिनीसहितभूमिष्ठ-योगीशाय नमः इति सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्।।३२।।

तदनन्तर न्यासपद्धति की तरह बहिः पद्म की कर्णिका में, चारों ओर तथा त्रिकोण में—ॐ ह्रां वां ईशानाय नमः, ॐ ह्रें वें तत्पुरुषाय नमः, ॐ ह्रुं वुं अघोराय नमः, ॐ ह्रिं विं वामदेवाय नमः, ॐ ह्रं वं सद्योजाताय नमः मन्त्र से ईशान, तत्पुरुष, वामदेव तथा सद्योजात की पूजा करके व्योमपंकजदल में पूर्व दिशा से क्रमशः प्रारम्भ करके (एक-एक दिशा में) ॐ अं असितांगभैरवाय नमः, ॐ इं रुरुभैरवाय नमः, ॐ उं चण्डाभैरवाय नमः, ॐ ऋं क्रोधभैरवाय नमः, ॐ ऌं उन्मत्तभैरवाय नमः, ॐ एं कपालिभैरवाय नमः, ॐ ऐं भीषणभैरवाय नमः, ॐ अं संहारभैरवाय नमः मन्त्र से इन अष्टभैरवों का पूजन करके छः कोणों पर पूर्वादि क्रम से ॐ ह्रां वां हृदयाय नमः, ॐ ह्रीं वीं शिरसे स्वाहा नमः, ॐ ह्रुं वुं शिखायै वषट् नमः, ॐ ह्रै वैं कवचाय हुं नमः, ॐ ह्रौं वौं नेत्रत्रयाय वौषट् नमः, ॐ ह्रं वः अस्त्राय फट् नमः मन्त्र से षडङ्ग की पूजा करके बहिर्भाग में अष्टदल पद्म के आभ्यन्तर में पूर्वादि क्रम से ॐ डाकिनीपुत्रेभ्यो नमः, ॐ राकिनीपुत्रेभ्यो नमः, ॐ लाकिनीपुत्रेभ्यो नमः, ॐ काकिनीपुत्रेभ्यो नमः, ॐ साकिनीपुत्रेभ्यो नमः, ॐ हाकिनीपुत्रेभ्यो नमः से इन पुत्रों का पूजन करना चाहिये।

इसके पश्चात् दक्षिण दिक् में ॐ उमापुत्रेभ्यो नमः, ॐ रुद्रपुत्रेभ्यो नमः, ॐ मातृपुत्रेभ्यो नमः से ऊर्ध्वमुख तथा अधोमुख पुत्रगण की पूजा करनी चाहिये (इन सबके अधोमुखी तथा ऊर्ध्वमुखी पुत्रों का पूजन करना चाहिये)। इसके बाहर पद्म के अष्टपत्र पर पूर्वादिक्रमेण इन्द्रादि लोकपालों का पूजन इस ग्रन्थ के प्रथम परिच्छेद में अंकित विधि के अनुसार करना चाहिये। इसके पश्चात् इस पद्मपत्र के मध्य में पूर्व में ॐ ब्रह्माणीपुत्राय नमः, ईशान कोण में ॐ माहेश्वरीपुत्राय नमः, उत्तर में ॐ वैष्णवीपुत्राय नमः, वायुकोण में ॐ कौमारीपुत्राय नमः, पश्चिम में ॐ इन्द्राणीपुत्राय नमः, नैर्ऋत्य कोण में ॐ महालक्ष्मीपुत्राय नमः, दक्षिण में ॐ वाराहीपुत्राय नमः एवं अग्निकोण में ॐ चामुण्डापुत्राय नमः से पूजा करनी चाहिये।

अब उसके बाहर दशो दिशाओं में पूर्वादिक्रमेण हेतुक, त्रिपुरान्तक, बेताल, वह्निजिह्व, कालान्त, कराल, एकपाद, भीमदंष्ट्र, अचल तथा हाटकेश्वर—इन दस बटुकों का पूजन करना चाहिये। तदनन्तर ईशान कोण में, अग्निकोण में तथा नैर्ऋत्य कोण में योगिनी के सहित योगीश्वरों का पूजन करना चाहिये; जैसे—ईशान कोण में ॐ योगिनीसहितदिव्ययोगीशाय नमः अग्निकोण में ॐ योगिनीसहितान्तरीक्षयोगीशाय नमः, नैर्ऋत्य कोण में ॐ योगिनीसहितभूमिष्ठयोगीशाय नमः। इसके अनन्तर धूपदान से लेकर विसर्जन-पर्यन्त कर्म करके पूजन का समापन करना चाहिये।।३२।।

अस्य पुरश्चरणमेकविंशतिलक्षजपः ।
त्रिमधुरप्लुतैस्तिलैर्दशांशहोमः ॥३३॥

इसका पुरश्चरण मन्त्र के इक्कीस लाख जप एवं जप के दशांश त्रिमधुर से सिक्त तिल से होम करने से सम्पन्न होता है।।३३।।

तथा च—

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी जितेन्द्रियः ।
तद्दशांशं प्रजुहुयात् तिलैर्मधुरसंयुतैः ॥३४॥

कहा भी गया है कि साधक को जितेन्द्रिय रहकर हविष्यान्न-भक्षण करते हुये इसका वर्णलक्ष जप करना चाहिये तथा त्रिमधुराप्लुत तिल से कृत जप का दशांश होम करना चाहिये।।३४।।

अथास्य बलिविधिः—

शाल्यन्नं पायसं सर्पिर्लाजचूर्णानि शर्कराम् ।
गुड़मिक्षुरसापूपैर्मध्वक्तैः परिमिश्रितैः ॥३५॥

कृत्वा कवलमाराध्य देवं पूर्वोक्तवर्त्मना।
रक्तचन्दनपुष्पाद्यैर्निशि तस्मै बलिं हरेत् ॥३६॥

कवलं ग्रासम्।

शाल्यान्न (शालि धान), पायस, घृत, लाजचूर्ण, गुड़, ईख का रस तथा अपूप—इन सबको मिश्रित करके उसमें मधु छोड़ कर उसका कवल (ग्रास) बनाकर रात्रि में बटुक देव की रक्त चन्दन, रक्त पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य से पूजा करके पूर्वोक्त पद्धति द्वारा क्षेत्रपाल बलिमन्त्र में (जो पहले क्षेत्रपाल प्रकरण में कहा गया है) से 'क्षेत्रपाल' शब्द हटाकर उसके स्थान पर 'बटुक' शब्द लगाकर उस मन्त्र से बटुकभैरव देवता के हाथों में बलि प्रदान करनी चाहिये।।३५-३६।।

यद्वा—

अन्यूनाङ्गमजं हत्वा राजसं प्रागुदीरितम्।
बलिप्रदानसमये रिपूणां सर्वसैन्यकम् ॥३७॥
निवेदयेद्बलित्वेन बटुकाय विशिष्टधीः।
विदर्भयेच्छत्रुनाम्ना बलिमन्त्रमुदारधीः ॥३८॥

अथवा पूर्वकथित ऐसे बकरे की बलि प्रदान करनी चाहिये, जिसके कोई अंग कम न हो। यह राजस बलि होती है। विशिष्ट मेधासम्पन्न साधक को बलि प्रदान के समय शत्रु के समस्त सैन्य को (भावना द्वारा) बटुक को निवेदित करना चाहिये। सुधी साधक इसी प्रकार शत्रु के नाम द्वारा बलिमन्त्र को विदर्भित भी करना चाहिये।।३७-३८।।

शत्रुपक्षस्य स्वगणैः सार्द्धं सारमेयसमन्वितः।
बलिमन्त्रोऽयमाख्यातः सर्वेषां विजयप्रदः ॥३९॥

अब बलिमन्त्र कहते हैं। 'शत्रुपक्षस्य स्वगणैः सार्द्धं सारमेयसमन्वितः' अर्थात् कुत्ते के साथ तथा अपने गणों के साथ आप शत्रु के रक्त-मांस का प्रतिदिन भक्षण करें। यह सभी के लिये विजयप्रद बलिमन्त्र कहा गया है।।३९।।

अनेन विधिना दृष्टो बटुकः परसैन्यकम्।
सर्वं गणेभ्यो विभजेच्चामिषं क्रुद्धमानसः।
एवं कृते परबलं क्षीयते नात्र संशयः ॥४०॥

इस बलि द्वारा देव बटुकभैरव साधक के प्रति प्रसन्न एवं उसके शत्रु के प्रति क्रुद्धचित्त होकर समस्त शत्रुसैन्य को अपने गणों के मध्य आमिषभोजन के रूप में बाँट देते हैं; इसमें कोई सन्देह नही है।।४०।।

विदर्भलक्षणञ्च प्रागुक्तं यथा—

मन्त्रार्णद्वयमध्यस्थं साध्यनाम प्रकीर्त्तितम् ।

तथा च मन्त्रस्य द्वयोर्द्वयोर्वर्णयोर्मध्ये शत्रुनाम प्रयोज्यम् ।।४१।।

विदर्भ का लक्षण पूर्व में इस प्रकार कहा गया है—दो मन्त्रवर्ण के मध्य में साध्य का नाम कहने से विदर्भ होता है। इसलिये दो मन्त्रवर्णों के मध्य शत्रु का नाम लेना चाहिये।।४१।।

●

अथ लक्ष्मीप्रकरणम्

अथ वक्ष्ये महाविद्यां कमलां कमलप्रियाम्।
यस्याः प्रसादमासाद्य जीवन्मुक्तः प्रजायते ॥१॥
वान्तं वह्निसमारूढं वामनेत्रेन्दुसंयुतम्।
बीजमेतच्छ्रियः प्रोक्तं सर्वकामफलप्रदम् ॥२॥

वान्तं तालव्यशकारः। तेन श्रींबीजमात्रम्।

अब लक्ष्मी प्रकरण कहते हैं। जिनका अनुग्रह पाकर मानव जीवन्मुक्त हो जाता है, मैं उन कमलप्रिया महाविद्या कमला का मन्त्र तथा उपासना-विधान कहता हूँ।

वान्त (श) वह्नि (र) पर समारूढ़ होकर वामनेत्र (ई) तथा विन्दु से युक्त होकर 'श्रीं' बीज सर्वकामफलप्रद कहा गया है।।१-२।।

अस्य पूजाप्रयोगः—प्रातःकृत्यादि पीठन्यासान्तं विधाय केशरेषु मध्ये च पूर्वादितः ॐ विभूत्यै नमः। एवं उन्नत्यै, कान्त्यै, सृष्ट्यै, कीर्त्त्यै, सन्नत्यै, पुष्ट्यै, उत्कृष्ट्यै ऋद्ध्यै। पुनर्मध्ये श्रीं कमलासनाय नमः इति पीठशक्तिः पीठमनुक्षञ्च न्यसेत्॥३॥

इस मन्त्र का पूजा-प्रयोग इस प्रकार कहा गया है—प्रातःकृत्यादि से लेकर पीठन्यास-पर्यन्त कृत्य करके केशरसमूह में पूर्वादि क्रम से तथा मध्य में ॐ विभूत्यै नमः, ॐ उन्नत्यै नमः, ॐ कान्त्यै नमः, ॐ सृष्ट्यै नमः, ॐ कीर्त्यै नमः, ॐ सन्नत्यै नमः, ॐ पुष्ट्यै नमः, ॐ उत्कृष्ट्यै नमः, ॐ ऋद्ध्यै नमः मन्त्र से अष्टपीठ में शक्तिन्यास करके पुनः श्रीं कमलासनाय नमः मन्त्र द्वारा पीठ पर मन्त्र का न्यास करना चाहिये।।३।।

यथा निबन्धे—

विभूतिरुन्नतिः कान्तिः सृष्टिः कीर्त्तिश्च सन्नतिः।
पुष्टिरुत्कृष्टिर्ऋद्धिश्च सम्प्रोक्ता नव शक्तयः ॥४॥

निबन्ध में कहा भी है कि विभूति, उन्नति, कान्ति, सृष्टि, कीर्त्ति, सन्नति, पुष्टि, उत्कृष्टि तथा ऋद्धि—इन नव को लक्ष्मी की शक्ति कहा गया है।।४।।

तत ऋष्यादीन् न्यसेत्। भृगु ऋषिर्निवृच्छन्दः, श्रीर्देवता। ततः कराङ्गन्यासौ

श्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, श्रां हृदयाय नमः इत्यादिना षड्दीर्घभाजा निजबीजेन॥५॥

इसके अनन्तर ऋष्यादि न्यास करना चाहिये। जैसे—अस्य श्रीलक्ष्मीमन्त्रस्य भृगुर्ऋषिर्निवृच्छन्दः श्रीर्देवता शकारो बीजं ईकारः शक्तिः सर्वकामप्राप्तर्थे पूजने विनियोगः। इस प्रकार विनियोग करने के पश्चात् मस्तक पर ॐ भृगवे ऋषये नमः, मुख में ॐ निवृच्छन्दसे नमः, हृदय में ॐ श्रियै देवतायै नमः, गुह्य में ॐ शकाराय बीजाय नमः एवं पादद्वय में ॐ ईकाराय शक्तये नमः से न्यास करना चाहिये। तदनन्तर छः दीर्घ स्वरयुक्त निजबीज द्वारा ॐ श्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः इत्यादि मन्त्र से एवं ॐ श्रां हृदयाय नमः इत्यादि मन्त्र से करांगन्यास करना चाहिये।।५।।

ततो ध्यानम्—

कान्त्या कानञ्चनसन्निभां हिमगिरिप्रख्यैश्चतुर्भिर्गजै-
र्हस्तो हिरण्मयामृतघटैरासिच्यमानां श्रियम्।
विभ्राणां वरमब्जयुग्ममभयं हस्तैः किरीटोज्वलां
क्षौमाबद्धनितम्बबिम्बललितां वन्देऽरविन्दस्थिताम्॥६॥

तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करना चाहिये—स्वर्ण के समान कान्ति वाली, हिमालय के सदृश ऊँचे चार श्वेत हाथियों द्वारा अपने शुण्डों से ऊपर से अमृतपूर्ण घटों द्वारा मस्तक पर सिंचित की जाती हुई, हाथों में वरमुद्रा, दो कमल तथा अभय मुद्रा धारण करने वाली, मुकुट की प्रभा से उज्ज्वल तथा पट्टवस्त्रों द्वारा आबद्ध नितम्बविम्ब से शोभायमान, कमल पर आसीन श्वेतवसना श्री (लक्ष्मी) की मैं वन्दना करता हूँ।।६।।

एवं ध्यात्वा मानसैरभ्यर्च्यार्घ्यं संस्थाप्य पीठपूजां विधाय केशरेषु मध्ये च विभूत्यादिपीठमन्वन्तं सम्पूज्य पुनर्ध्यात्वावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायाग्न्यादिकेशरेषु मध्ये दिक्षु श्रां हृदयाय नमः इत्यादिना सम्पूज्य दिग्दलेषु पूर्वादितः ॐ वासुदेवाय नमः। एवं सङ्कर्षणाय देव्या दक्षिणे शङ्खनिधये वसुधायै। वामे पद्मनिधये वसुमत्यै। पत्राग्रेषु पूर्वादितो बलाक्यै, विमलायै, कमलायै, वनमालिकायै, विभीषिकायै, माणिक्यायै, शाङ्कर्यै, वसुमालिकायै, तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्॥७॥

इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचार-पूजन, विशेषार्घ्य-स्थापन, पीठपूजन करने के अनन्तर केशर तथा मध्य में विभूति-प्रभृति पीठशक्ति तथा पीठमन्त्र की पूजा करके

पुनः ध्यान, आवाहन, पञ्चपुष्पाञ्जलि निवेदन-पर्यन्त समस्त कृत्य करके आग्नेयादि दिशा के केशरसमूह में, मध्य में तथा दिक्समूह में ॐ आं हृदयाय नमः इत्यादि मन्त्रों से षडङ्ग-पूजा करके दिग्दल में पूर्वादिक्रमेण ॐ वासुदेवाय नमः, ॐ सङ्कर्षणाय नमः, ॐ प्रद्युम्नाय नमः, ॐ अनिरुद्धाय नमः मन्त्र से इनका पूजन करके विदिक् अर्थात् आग्नेयादि कोणों के दलसमूह में ॐ दमकाय नमः, ॐ सलिलाय नमः, ॐ गुग्गुलवे नमः, ॐ कुरुण्टकाय नमः मन्त्र से इनका पूजन करके देवी के दक्षिण में ॐ शङ्खनिधये नमः ॐ वसुधायै नमः से एवं वाम में ॐ पद्मनिधये नमः ॐ वसुमत्यै नमः से पूजन करना चाहिये। पत्र के आगे पूर्वादि दिशाक्रम से ॐ बलाक्यै नमः, ॐ विमलायै नमः, ॐ कमलायै नमः, ॐ वनमालिकायै नमः, ॐ विभीषिकायै नमः, ॐ मालिकायै नमः, ॐ शाङ्कर्यै नमः, ॐ वसुमालिकायै नमः, द्वारा पूजन करने के उपरान्त दल के बहिर्भाग में इन्द्रादि लोकपाल तथा उनके वज्रादि अस्त्र का पूजन करके धूपदान से विसर्जनान्त कर्म सम्पन्न करना चाहिये।।७।।

पुरश्चरणं द्वादशलक्षजपः। त्रिमधुराक्तैः पद्मैस्तिलैर्वा बिल्वफलैर्वा द्वादश-सहस्रहोमो वाचनिकः ॥८॥

इस मन्त्र का पुरश्चरण बारह लाख जप से सम्पन्न होता है। जपान्त में मधुर से (त्रिमधुर) लिपटे कमलों से, मधु से (शहद) से लिपटे तिल से अथवा त्रिमधुर से लिपटे बिल्वफल से बारह हजार होम करना चाहिये।।८।।

विशेष—उक्त तीनों में से किसी एक से भी होम किया जा सकता है। जो तीनों से होम करना चाहे, उसे प्रत्येक से चार-चार हजार होम करना चाहिये।

वाग्भवं रमाबीजं माया काम इति चतुरक्षरः ॥९॥

लक्ष्मीदेवी का अन्य मन्त्र कहते हैं। वागभव (ऐं), रमाबीज (श्रीं), माया (ह्रीं) तथा कामबीज (क्लीं)—इन चार अक्षर का एक अन्य बीजमन्त्र कहा गया है।।९।।

यथा निबन्धे—

वाग्भवं वनिता विष्णोर्माया मकरकेतनः ।
चतुर्बीजात्मको मन्त्रश्चतुर्वर्गफलप्रदः ॥१०॥

निबन्ध में कहा भी है—वाग्भव (ऐं), विष्णु का वनिताबीज (श्रीं), मायाबीज (ह्रीं) तथा मकरकेतनबीज (क्लीं)—इन चार बीज वाले लक्ष्मीमन्त्र का जप करने से धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्षरूप चतुर्वर्ग की प्राप्ति होती है।।१०।।

अस्य पूजादिकं सर्वं पूर्ववत् ॥११॥

इन मन्त्र का पूजन आदि सब पूर्ववत् है; किन्तु ध्यान पृथक् है।।११।।

ध्यानन्तु—

माणिक्यप्रतिमं प्रभां हिमनिभैस्तुङ्गैश्चतुर्भिर्गजै-
र्हस्तग्राहितरत्नकुम्भसलिलैरासिच्यमानां सदा।
हस्ताब्जैर्वरदानमम्बुजयुगाभीतिर्दधानां हरेः
कान्तां काङ्क्षितपारिजातलतिकां वन्दे सरोजासनाम् ।।१२।।

इनका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—माणिक्य के समान अप्रतिम कान्ति वाली, ऊँचे मुख (शुण्ड) किये चार श्वेत हाथियों द्वारा शुण्ड में उठाये रत्नजडित घट द्वारा सर्वदा सिञ्चित की जाती हुई, हाथों में वरद मुद्रा, दो कमल, वरमुद्रा तथा अभय मुद्रा धारण करने वाली, श्वेत कमल पर आसीन, पारिजात कल्पलतिका के समान मनोवाञ्छित फल देने वाली हरिप्रिया लक्ष्मी की मैं वन्दना करता हूँ।।१२।।

पुरश्चरणं द्वादशलक्षजपः। रक्तपद्मैर्द्वादशसहस्रहोमः।।१३।।

इसका पुरश्चरण बारह लाख मन्त्रजप एवं बारह हजार लाल कमलों के हवन से सम्पन्न होता है।।१३।।

दीर्घा यादिविसर्गान्तो ब्रह्मा भानुर्वसुन्धरा।
वाऽन्ते सिन्यै प्रियावह्नेर्मनुः प्रोक्तो दशाक्षरः ।।१४।।

दीर्घा नकारः। भानुर्मकारः। तथा च नमः कमलवासिन्यै स्वाहा।

अब लक्ष्मी का अन्य मन्त्र कहा जा रहा है। दीर्घा (न), विसर्गान्त यादि (मः), ब्रह्मा (क), भानु (म), वसुन्धरा (ल) तथा 'वा' के आगे 'सिन्यै', तदनन्तर वह्निप्रिया (स्वाहा)। इनके द्वारा लक्ष्मी का दशाक्षर मन्त्र बनता है। दीर्घा—नकार। भानु—मकार। मन्त्रोद्धार होता है—ॐ नमः कमलवासिन्यै स्वाहा।।१४।।

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादि पीठमन्वन्तं पूर्ववद्विन्यस्य ऋष्यादीन् न्यसेत्। दक्ष ऋषिर्विराट् छन्दः श्रीर्देवता। ततः कराङ्गन्यासौ—ॐ देव्यै नमोऽङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ॐ पद्मिन्यै नमस्तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ विष्णुपत्न्यै नमो मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ वरदायै नमोऽनामिकाभ्यां हुं, ॐ कमलरूपायै नमः कनिष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। न्यासावेतौ पञ्चाङ्गौ।।१५।।

अब पूजापद्धति कहते हैं—प्रातःकृत्य से लेकर पीठमन्त्र-पर्यन्त पूर्ववत् न्यास करने के उपरान्त ऋष्यादि न्यास ठीक उसी प्रकार करना चाहिये, जैसा कि पहले लक्ष्मीमन्त्रों में किया गया था। इस मन्त्र के दक्ष ऋषि, विराट् छन्द तथा श्री देवता

हैं। तदनन्तर इस प्रकार करांगन्यास करना चाहिये—ॐ देव्यै नमो अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ॐ पद्मिन्यै नमः तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ विष्णुपत्न्यै नमो मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ वरदायै नमोऽनामिकाभ्यां हुं, ॐ कमलरूपायै नमः कनिष्ठाभ्यां फट्।

करन्यास के पश्चात् इस प्रकार अंगन्यास करना चाहिये—ॐ देव्यै नमो हृदयाय नमः, ॐ पद्मिन्यै नमः शिरसे स्वाहा, ॐ विष्णुपत्न्यै नमः शिखायै वषट्, ॐ वरदायै नमः कवचाय हुं, ॐ कमलरूपायै नमः करतलपृष्ठाभ्यां फट्। यह दोनों न्यास पञ्चाग न्यास होता है। इसमें नेत्रों में न्यास नहीं किया जाता।।१५।।

यथा निबन्धे—

देव्यै हृदयमाख्यातं पद्मिन्यै शिव ईरितम्।
विष्णुपत्न्यै शिखा प्रोक्ता वरदायै तनुच्छदम्।
अस्त्रं कमलरूपायै नमोऽन्ताः प्रणवादिकाः ॥१६॥

निबन्ध में कहा भी गया है कि प्रणव आदि में एवं नमः मन्त्र के अन्त में न्यास करना चाहिये। अर्थात् ॐ देव्यै नमः से हृदय में, ॐ पद्मिन्यै नमः से शिर पर, ॐ विष्णुपत्न्यै नमः से शिखा पर, ॐ वरदायै नमः से कवच में एवं ॐ कमलरूपायै नमः मन्त्र से अस्त्रन्यास करना चाहिये।।१६।।

ततो ध्यानम्—

आसीना सरसीरुहे स्मितमुखी हस्ताम्बुजैर्विभ्रती
दानं पद्मयुगाभये च वपुषा सौदामिनीसन्निभा।
मुक्तादामविराजमानपृथुलोत्तुङ्गस्तनोद्भासिनी
पायान्नः कमला कटाक्षविभवैरानन्दयन्तीं हरिम् ॥१७॥

तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करना चाहिये—पद्म पर आसीन, स्मितमुखी, चारो हाथों में से एक हाथ में वरमुद्रा, दो हाथों में कमल एवं एक में अभय मुद्रा धारण करने वाली, विद्युत् के समान मुक्ताहार से सुशोभित पीन उत्तुंग स्तनों से उद्भासित होने वाली, अपने कटाक्ष से हरि को आनन्द प्रदान करने वाली कमला हम सबकी रक्षा करें।।१७।।

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्यार्घ्यं संस्थाप्य पूर्वोक्तपीठमन्वन्तां पीठपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणानि पूजयेत्। यथा अग्न्यादिकेशरेषु चतुर्दिक्षु मध्ये च ॐ देव्यै नमो हृदयाय नमः, ॐ पद्मिन्यै नमः शिरसे स्वाहा, ॐ विष्णुपत्न्यै नमः शिखायै वषट्, ॐ वरदायै नमः कवचाय हुं, ॐ कमलरूपायै नमोऽस्त्राय फट्। ततः

पूर्वादिदलेषु बलाक्यादींस्तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च सम्पूज्व धूपादि-विसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं दशलक्षजपः। मधुराक्त-पद्मैर्दशांशहोमः॥१८॥

इस प्रकार ध्यान, मानसोपचार पूजा, विशेषार्घ्य-स्थापन, पूर्वोक्त पीठमन्त्र-पर्यन्त पीठपूजा, पुनः ध्यान, आवाहन से लेकर पञ्चपुष्पाञ्जलिदान-पर्यन्त विधान सम्पन्न करके आवरण पूजा करनी चाहिये। जैसे अग्न्यादि कोण में (केशरसमूह में), चारो ओर (चारो दिशाओं में), मध्य में ॐ देव्यै नमः हृदयाय नमः, ॐ पद्मिन्यै नमः शिरसे स्वाहा, ॐ विष्णुपत्न्यै नमः शिखायै वषट्, ॐ वरदायै नमः कवचाय हुं, ॐ कमलरूपायै नमः अस्त्राय फट्। इस प्रकार षडंग पूजनोपरान्त पूर्वादि दिशा के दलों में पूर्ववत् ॐ बलाक्यै नमः, ॐ विमलाय नमः, ॐ वनमालिकायै नमः, ॐ विभीषिकायै नमः, ॐ मालिकायै नमः, ॐ शाङ्कर्यै नमः, ॐ वसुमालिकायै नमः से लक्ष्मी के दूतियों का पूजन करके दल के बहिर्भाग में इन्द्रादि लोकपाल तथा उनके वज्रादि अस्त्रसमूह की पूजा करनी चाहिये। तदनन्तर धूपदान से विसर्जन-पर्यन्त शेष कार्य का सम्पादन करना चाहिये। इसके पुरश्चरण के लिये दस लाख मन्त्रजप तथा त्रिमधुर से लिपटे कमलों द्वारा जप का दशमांश होम करना चाहिये।।१८।।

●

अथ महालक्ष्मीः

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं हसौः जगत्प्रसूत्यै नमः ॥१९॥

अब महालक्ष्मी का मन्त्र कहा जाता है। 'ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं हसौः जगत्प्रसूत्यै नमः' यह महालक्ष्मी का मन्त्र है।।१९।।

यथा निबन्धे—

वाग्भवं शम्भुवनिता रमा मकरकेतनः ।
तार्त्तीयश्च जगत्पार्श्वो वह्निबीजसमुज्ज्वलः ॥२०॥
अर्घीशाढ्यो भृगुस्त्यै हृन्मन्त्रोऽयं द्वादशाक्षरः ।
महालक्ष्म्या समुद्दिष्टस्ताराद्यः सर्वसिद्धिदः ॥२१॥

निबन्ध में कहा है कि वाग्भव (ऐं), शम्भुवनिता (ह्रीं), रमा (श्रीं), मकरकेतन (क्लीं), तार्त्तीय (हसौः), तत्पश्चात् जगत्, तदनन्तर पार्श्व (प), वह्निबीज रेफ (र) द्वारा समुज्ज्वल अर्थात् रेफयुक्त (प्र), उसके अनन्तर अर्घीश (ऊ)-युक्त भृगु (सू), तदनन्तर त्यै तथा हृत् (नमः)—इनके योग से महालक्ष्मी का द्वादशाक्षर मन्त्र निष्पन्न होता है। मन्त्रोद्धार होता है—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं हसौः जगत्प्रसूत्यै नमः।।२०-२१।।

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादि श्रीबीजोक्तपीठन्यासं कृत्वा ऋष्यादीन् न्यसेत्। ब्रह्मा ऋषिः गायत्री छन्दः महालक्ष्मी देवता। ततो मूलेन करौ संशोध्य अङ्गुष्ठादिषु अङ्गुलीषु ॐ ऐं नमः। ॐ ह्रीं नमः। ॐ श्रीं नमः। ॐ क्लीं नमः। ॐ ह्सौ नमः। करतले—ॐ जगत्प्रसूत्यै नमः। ततो मस्तकादिचरणान्तं मूलेन व्यापकं कृत्वा मूर्द्धास्यहृदयगुह्यपादेषु पञ्चबीजानि न्यस्य शेषाक्षराणि हृदये वसासृङ्मांसमेदोऽस्थिमज्जाशुक्रात्मकसप्तधातुषु न्यस्य कराङ्गन्यासौ कुर्यात्। ऐं ज्ञानाय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ह्रीं ऐश्वर्याय तर्जनीभ्यां स्वाहा, श्रीं शक्तये मध्यमाभ्यां वषट्, क्लीं बलाय अनामिकाभ्यां हुं, ह्सौः वीर्याय कनिष्ठाभ्यां वौषट्, जगत्प्रसूत्यै नमस्तेजसे करतल-पृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु॥२२॥

इनकी पूजापद्धति इस प्रकार है—प्रातःकृत्यादि से लेकर श्रीबीजोक्त पीठन्यासकरने के उपरान्त ऋष्यादि न्यास करना चाहिये। इस मन्त्र के ऋषि ब्रह्मा, छन्द गायत्री, देवता महालक्ष्मी, बीज प्रणव एवं शक्ति तार्तीय है। सर्वसिद्धि-लाभ के लिये इसका विनियोग किया जाता है।

तदनन्तर मूल मन्त्र का दोनों हाथों से व्यापक रूप से न्यास करके दोनों हाथ का संशोधन करने के बाद पाँचो अंगुलियों में अंगूठे से प्रारम्भ करके इस प्रकार न्यास करना चाहिये—ॐ ऐं नमः, ॐ ह्रीं नमः, ॐ श्रीं नमः, ॐ क्लीं नमः ॐ ह्सौः नमः। करतल में—ॐ जगत्प्रसूत्यै नमः।

अब मस्तक से चरण-पर्यन्त मूल मन्त्र से न्यास करना चाहिये। मस्तक पर ॐ ह्रीं नमः, हृदय में ॐ श्रीं नमः, गुह्य में ॐ क्लीं नमः, पाद में ॐ ह्सौः नमः मन्त्र से पञ्च बीज का न्यास करके हृदयस्थ त्वक्, रक्त (असृक्), मांस, मेद, अस्थि, मज्जा, शुक्र धातु में शेष अक्षरों को अर्थात् 'ॐ जगत्प्रसूत्यै नमः' इस मन्त्र के वर्णों से न्यास करने के बाद करांगन्यास करना चाहिये। जैसे—ॐ ऐं ज्ञानाय अंगुष्ठाभ्यां नमः, ॐ ह्रीं ऐश्वर्याय तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ श्रीं शक्तये मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ क्लीं बलाय अनामिकाभ्यां हुं, ॐ ह्सौः वीर्याय कनिष्ठाभ्यां वौषट्, ॐ जगत्प्रसूत्यै नमस्तेजसे करतलपृष्ठाभ्यां फट्। इस प्रकार उक्त मन्त्रों से करन्यास करने के उपरान्त ॐ ऐं ज्ञानाय हृदयाय नमः, ॐ ह्रीं ऐश्वर्याय शिरसे स्वाहा, ॐ श्रीं शक्तये शिखायै वषट्, ॐ क्लीं बलाय कवचाय हुं, ॐ ह्सौः वीर्याय नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ जगत्प्रसूत्यै नमस्तेजसे करतलपृष्ठाभ्यां फट् मन्त्र से अंगन्यास करने के पश्चात् ध्यान करना चाहिये।।२२।।

बालार्कद्युतिमिन्दुखण्डविलसत् कोटीरहारोज्ज्वलां
रत्नाकल्पविभूषितां कुचनतां शालैः करैर्मञ्जरीम्।
पद्मं कौस्तुभरत्नमप्यविरतं संविभ्रतीं सस्मितां
फुल्लाम्भोजविलोचनत्रययुतां ध्यायेत्परामम्बिकाम् ।।२३।।

बाल सूर्य के समान कान्तिमान, चन्द्रमा (अर्धचन्द्र) से भूषित मुकुट तथा हार के कारण उज्ज्वल, रत्नालंकार से विभूषित, स्तनभार से झुकी हुई, हाथों में शालि धान्य की मंजरी, पद्मद्वय तथा कौस्तुभ रत्न धारण करने वाली, सुस्मित विकसित पद्मपत्र के समान तीन नेत्रों से युक्त परा अम्बिका का ध्यान करना चाहिये।।२३।।

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्यार्घ्यं कृत्वा श्रीबीजोक्तपीठपूजां कृत्वा पुनर्ध्यात्वावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणानि पूजयेत्। यथा देव्या दक्षिणे—ॐ शङ्करनन्दनाय नमः। एवं वामे—पुष्पधन्वने। अग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च ऐं ज्ञानाय हृदयाय नमः इत्यादिना षडङ्गेनाभ्यर्च्य पूर्वादिपत्रेषु ॐ उमायै नमः। एवं श्रियै, सरस्वत्यै, दुर्गायै, धरण्यै, गायत्र्यै, देव्यै, उषायै। दक्षिणे—जह्नुसुतायै। वामे—सूर्यसुतायै। पुनर्दक्षिणे—शङ्खनिधये। वामे पद्मनिधये। पश्चिमे—वरुणाय।।२४।।

इस प्रकार से ध्यान करने के बाद मानसोपचार-पूजन, विशेषार्घ्य-स्थापन, श्रीबीजोक्त पीठपूजा, पुनः ध्यान, आवाहन से लेकर पञ्चपुष्पाञ्जलि दान-पर्यन्त कार्य करके आवरणदेवता की पूजा करनी चाहिये। जैसे देवी के दक्षिण में ॐ शंकरनन्दनाय नमः से एवं वाम में ॐ पुष्पधन्वने नमः से पूजा करनी चाहिये। तदनन्तर केशर के अग्न्यादि कोणों में, मध्य में तथा दिक्समूह में ॐ ऐं ज्ञानाय नमः हृदयाय नमः, ॐ ह्रीं ऐश्वर्याय नमः शिरसे स्वाहा, ॐ श्रीं शक्तये नमः शिखायै वषट्, ॐ क्लीं बलाय नमः कवचाय हुं, ॐ ह्सौः वीर्याय नमः नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ जगत्प्रसूत्यै नमस्तेजसे नमः करतलपृष्ठाभ्यां फट्। इस प्रकार से षड़ंग पूजनोपरान्त पूर्वादि दलों में ॐ उमायै नमः, ॐ श्रियै नमः, ॐ सरस्वत्यै नमः, ॐ धरण्यै नमः, ॐ गायत्र्यै नमः ॐ देव्यै नमः तथा ॐ उषायै नमः से पूजा करनी चाहिये।

दक्षिण में ॐ जह्नुसुतायै नमः, वाम में ॐ सूर्यसुतायै नमः, पुनः दक्षिण में ॐ शङ्खनिधये नमः एवं वाम में ॐ पद्मनिधये नमः तथा पश्चिम में ॐ वरुणाय नमः से तत्तत् देवताओं का पूजन करना चाहिये।।२४।।

यथा निबन्धे—

जह्नुसूर्यसुते पूज्ये पादप्रक्षालनोद्यते।

शङ्खपद्मनिधी पूज्यौ पार्श्वयोर्धृतचामरौ ।
धृतातपत्रं वरुणं पूजयेत् पश्चिमे ततः ॥२५॥

निबन्ध में कहा भी है कि पत्रमध्य में दक्षिण में पादप्रक्षालन के लिये उद्यत जह्नुसुता (जाह्नवी नदी) तथा सूर्यसुता (यमुना) की पूजा करनी चाहिये। दक्षिण पार्श्व में चामरधारी शंखनिधि की तथा वाम पार्श्व में चामरधारी पद्मनिधि की पूजा करनी चाहिये। पश्चिम में आतपत्र (छत्र) धारण करने वाले वरुण का पूजन करना चाहिये।।२५।।

ततस्तद्बहिर्द्वादशराशीन् नवग्रहान् तद्बहिरैरावताद्यष्टगजान् इन्द्रादीन् वज्रादींश्च सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। पुरश्चरणं द्वादशलक्षजपः। घृतेन दशांशहोमश्च॥२६॥

तदनन्तर दलमध्य में, उसके बाहर ॐ मेषाय नमः, ॐ वृषाय नमः, ॐ मिथुनाय नमः, ॐ कर्कटकाय नमः, ॐ सिंहाय नमः, ॐ कन्यायै नमः, ॐ तुलायै नमः, ॐ वृश्चिकाय नमः, ॐ धनवे नमः, ॐ मकराय नमः, ॐ कुम्भाय नमः, ॐ मीनाय नमः से बारह राशियों का पूजन करके ॐ सूर्याय नमः, ॐ चन्द्राय नमः, ॐ भौमाय नमः, ॐ बुधाय नमः, ॐ बृहस्पतये नमः, ॐ शुक्राय नमः, ॐ शनैश्चराय नमः, ॐ राहवे नमः, ॐ केतवे नमः से नवग्रहों की पूजा करनी चाहिये।

पुनः उसके बाहर चारो ओर अष्ट गजराज का पूजन करना चाहिये, जैसे—ॐ ऐरावताय नमः, ॐ पुण्डरीकाय नमः, ॐ वामनाय नमः, ॐ कुमुदाय नमः, ॐ अंजनाय नमः, ॐ पुष्पदन्ताय नमः, ॐ सार्वभौमाय नमः, ॐ सुप्रतीकाय नमः। अब दल के बहिर्भाग में इन्द्रादि लोकपालों तथा उनके वज्रादि अस्त्रों का पूजन करके धूपदान से लेकर विसर्जन-पर्यन्त समस्त विधान सम्पन्न करना चाहिये।

इस मन्त्र का पुरश्चरण बारह लाख जप तथा घृत द्वारा जप के दशांश होम से सम्पन्न होता है। होम के अनन्तर सुगन्धयुक्त शुद्ध जल द्वारा बीस हजार तर्पण करना चाहिये; क्योंकि दशांश तर्पण की जगह यहाँ बीस हजार तर्पण कहा गया है।।२६।।

ॐ श्रीं ह्रीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं महालक्ष्म्यै नमः। मन्त्रोऽयं सप्तविंशत्यक्षरः॥२७॥

महालक्ष्मी का सत्ताईस अक्षरों वाला एक अन्य मन्त्र है—ॐ श्रीं ह्रीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं महालक्ष्म्यै नमः।।२७।।

तन्त्रे—

शम्भुपत्नी प्रिया रुद्धा कमौ भगवती मही ।
ब्रह्मादितौ धरा दीर्घा लक्षादिर्भगवान् मरुत् ॥२८॥

प्रसीदयुगलं भूयः श्रीरुद्धा भुवनेश्वरी।
महालक्ष्म्यै नमोऽन्तः स्यात्प्रणवादिरयं मनुः ॥२९॥

शम्भुपत्नी मायाबीज (ह्रीं), श्रीबीज द्वारा रुद्ध (पुटित) हो। पश्चात् क तथा म एवं भग (ए) युक्त मही (ल), तदनन्तर ब्रह्मा (क) आदित्य (म) दीर्घ आकार युक्त ल (ला) क्षादि (मूर्धन्य ल) भगयुक्त मरुत् (य) प्रसीदद्वय, पुनः श्रीबीज से पुटित भुवनेश्वरी (ह्रीं)। इनके आदि एवं अन्त में क्रमशः प्रणव एवं नमः का योग करना चाहिये। मन्त्रोद्धार होता है—ॐ श्रीं ह्रीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद महालक्ष्म्यै नमः। यह मन्त्र समस्त प्रकार की समृद्धि प्रदान करने वाला कहा गया है।।२८-२९।।

शम्भुपत्नी मायाबीजम्। भग एकारः। मही लकारः। दीर्घा आकारयुक्ता। लक्षशब्दस्यादिर्लक्षादिर्लकारः। मरुत् यकारः। स च भगवानेकार-युक्तः॥३०॥

शम्भुपत्नी = मायाबीज। भग = ए। मही = ल। ब्रह्मा = क। आदित्य = म। धरा = ल। दीर्घा = आ की मात्रा लगाकर। क्षादि = ल। मरुत् = य।।३०।।

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादिऋष्यादिन्यासान्तमेकाक्षरीवद्विधाय कराङ्गन्यासौ कुर्यात्। यथा—श्रीं ह्रीं श्रीं कमले श्रीं ह्रीं श्रीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। एवं श्रीं ह्रीं श्रीं कमलालये श्रीं ह्रीं श्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। श्रीं ह्रीं श्रीं प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं मध्यमाभ्यां वषट्। श्रीं ह्रीं श्रीं प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं अनामिकाभ्यां हुं। श्रीं ह्रीं श्रीं महालक्ष्मि! श्रीं ह्रीं श्रीं कनिष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु॥३१॥

अब पूजापद्धति कहते हैं। प्रातःकृत्यादि से ऋष्यादिन्यास-पर्यन्त वैसे ही विधान का पालन करना चाहिये, जैसे एकाक्षरी में बताया गया है। तदनन्तर इस प्रकार करांगन्यास करना चाहिये—ॐ श्रीं ह्रीं श्रीं कमले श्रीं ह्रीं श्रीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ॐ श्री ह्रीं श्रीं कमलालये श्रीं ह्रीं श्रीं तजनीभ्यां स्वाहा, ॐ श्रीं ह्रीं श्रीं प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ श्रीं ह्रीं श्रीं प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं अनामिकाभ्यां हुं, ॐ श्रीं ह्रीं श्रीं महालक्ष्मि श्रीं ह्रीं श्रीं कनिष्ठाभ्यां फट्।

इसके बाद इस प्रकार अंगन्यास करना चाहिये—ॐ श्रीं ह्रीं श्रीं कमले श्रीं ह्रीं श्रीं हृदयाय नमः, ॐ श्रीं ह्रीं श्रीं कमलालये श्रीं ह्रीं श्रीं शिरसे स्वाहा, ॐ श्रीं ह्रीं श्रीं प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं शिखायै वषट्, ॐ श्रीं ह्रीं श्रीं प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं कवचाय हुं, ॐ श्रीं ह्रीं श्रीं महालक्ष्मि श्रीं ह्रीं श्रीं नमः करतलपृष्ठाभ्यां फट्।।३१।।

ततो ध्यानम्—

सिन्दूरारुणकान्तिमब्जवसतिं सोदर्यवारान्निधिं
कोटीराङ्गदहारकुण्डलकटीसूत्रादिभिर्भूषिताम् ।

हस्ताब्जैर्वसुपात्रमब्जयुगलादर्शौ वहन्तीं परा-
मावीतां परिचारिकाभिरनिशं ध्यायेत्प्रियां शार्ङ्गिणः ॥३२॥

वसुपात्रं धनपात्रम्।

तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करना चाहिये—सिन्दूर के समान अरुणवर्णा, पद्मनिवासिनी, सौन्दर्य की समुद्रस्वरूपा, मुकुट-वलय-हार-कुण्डल-करधनी द्वारा विभूषिता, हाथों में वसु (धन)-पात्र, दो कमल (दो हाथों में) तथा आदर्श धारण करने वाली, परिचारिकाओं द्वारा घिरी हुई श्रेष्ठ हरिप्रिया (महालक्ष्मी) की मैं सदा वन्दना करता हूँ।।३२।।

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्यार्घ्यस्थापनादि पीठपूजां पूर्ववद् विधाय पुनर्ध्यात्वावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणानि पूजयेत्। केशरेष्वग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च श्रीं ह्रीं श्रीं कमले हृदयाय नमः इत्यादि षडङ्गभ्यर्च्य पूर्वादिदलमूलेषु श्रीधरहृषीकेशवैकुण्ठविश्व-रूपवासुदेवसङ्कर्षणप्रद्युम्नानिरुद्धान् दलमध्येषु भारतीपार्वतीचान्द्रीशची-दमकसलिलगुग्गुलुकुरुण्टकान् सम्पूज्य दलाग्रेषु अनुरागं विसंवादं विजयं वल्लभं मदं हर्षं बलं तेज इति लक्ष्मीबाणान् सम्पूजयेत्। वाक्यन्तु—ॐ अनुरागाय लक्ष्मीबाणाय नमः इत्यादि। तद्बहिरिन्द्रान् वज्रादींश्च सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः। बिल्वफलैर्मधुरान्वितैर्दशांशहोमश्च॥३३॥

इस प्रकार ध्यान करने के उपरान्त मानसोपचार पूजन, विशेषार्घ्य-स्थापन, पीठपूजा, पुनः ध्यान, आवाहन से पञ्चपुष्पाञ्जलि दान-पर्यन्त कार्य करके आवरणपूजन करना चाहिये। जैसे केशर के अग्न्यादि कोणों में, मध्य में तथा दिक्समूह में 'एते गन्धपुष्पे ॐ श्रीं ह्रीं श्रीं कमले श्रीं ह्रीं श्रीं हृदयाय नमः'। इसी प्रकार से मन्त्रों से षडंगन्यास-विधि से षड़ङ्ग पूजन करके पूर्वादि दलों के मूल में 'एते गन्धपुष्पे ॐ श्रीधराय नमः, एते गन्धपुष्पे ॐ हृषीकेशाय नमः, एते गन्धपुष्पे ॐ वैकुण्ठाय नमः, एते गन्धपुष्पे ॐ विश्वरूपाय नमः, एते गन्धपुष्पे ॐ वासुदेवाय नमः, एते गन्धपुष्पे ॐ सङ्कर्षणाय नमः, एते गन्धपुष्पे ॐ प्रद्युम्नाय नमः, एते गन्धपुष्पे ॐ अनिरुद्धाय नमः' मन्त्रों से इनका पूजन करने के पश्चात् दिक्पत्र के मध्य में भारती, पार्वती, चान्द्री, शचि की तथा अग्न्यादि कोणों में (विदिक् में) दमक, सलिल, गुग्गुलु तथा कुरण्टक की पूजा करके दल के आगे 'ॐ अनुरागाय लक्ष्मीबाणाय नमः, ॐ विसंवादाय लक्ष्मीबाणाय नमः, ॐ विजयाय लक्ष्मीबाणाय नमः, ॐ वल्लभाय लक्ष्मीबाणाय नमः, ॐ मदाय लक्ष्मीबाणाय नमः, ॐ हर्षाय लक्ष्मीबाणाय नमः, ॐ बलाय

लक्ष्मीबाणाय नमः, ॐ तेजसे लक्ष्मीबाणाय नमः' इन मन्त्रों से लक्ष्मी के आठ बाणों का पूजन करने के पश्चात् दल के बहिर्भाग में इन्द्रादि लोकपालों तथा उनके वज्रादि अस्त्रों का पूजन करके धूपदान से विसर्जन-पर्यन्त कार्य-सम्पादन करना चाहिये। इस मन्त्र का पुरश्चरण एक लाख जप से सम्पन्न होता है। जप के अनन्तर त्रिमधुर से लिपटे बेलफल द्वारा जप का दशमांश होम करना चाहिये।।३३।।

●

अथ धनदा

ततुर्यं विन्दुसंयुक्तं लज्जाबीजं समुद्धरेत्।
लक्ष्मीबीजं ततो देवि! सम्बोध्या च रतिप्रिया।
वह्निजायावधिः प्रोक्तो मन्त्रराजः सुरद्रुमः ।।३४।।

'धं ह्रीं श्रीं रतिप्रिये! स्वाहा' इति नवाक्षरी।

अब धनदा का मन्त्र कहा जाता है। विन्दु से युक्त तवर्ग का चौथा वर्ण (ध), लज्जाबीज (ह्रीं), लक्ष्मीबीज (श्रीं) के पश्चात् सम्बोधनान्त रतिप्रिया (रतिप्रिये), वह्निजायावधि अर्थात् वह्निजायान्त (स्वाहा) लगाने से कल्पवृक्ष के समान मन्त्रराज कहा गया है। मन्त्रोद्धार होता है—धं ह्रीं श्रीं रतिप्रिये स्वाहा। यह नवाक्षर (९ अक्षरों का) मन्त्र होता है।।३४।।

तन्त्रान्तरे—

ततुर्यं विन्दुसंयुक्तं लक्ष्मीप्रणवमेव च।
मायाबीजं समुद्धृत्य सम्बुध्या च रतिप्रिया।
वह्निजायावधिः प्रोक्तो मन्त्रराजोत्तमोत्तमः ।।३५।।

लक्ष्मीप्रणवः श्रीबीजम्। तथा च धं श्रीं ह्रीं रतिप्रिये स्वाहा। कुबेरानुमतोऽयं मन्त्रः।

अन्य तन्त्र में कहा गया है कि बिन्दुसंयुक्त तवर्ग का चतुर्थ वर्ण (धं) लक्ष्मीप्रणव (श्रीं) मायाबीज (ह्रीं) का उद्धार करके सम्बोधनान्त रतिप्रिया (अर्थात् रतिप्रिये) के अन्त में वह्निजाया (स्वाहा) लगाने से उत्तमोत्तम मन्त्रराज निष्पन्न होता है। यहाँ मन्त्रोद्धार होता है—धं श्रीं ह्रीं रतिप्रिये स्वाहा। यह मन्त्र कुबेर द्वारा अनुमत है।।३५।।

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादि प्राणायामान्तं पीठन्यासञ्च ह्रीं ज्ञानात्मने नमः इत्यन्तं कृत्वा शिरसि कुबेरऋषये नमः, मुखे पङ्क्तिच्छन्दसे नमः, हृदि धनदायै देवतायै नमः। ततः कराङ्गन्यासौ षड्दीर्घभाजा मायया।।३६।।

इसकी पूजा इस प्रकार की जाती है—प्रातःकृत्यादि से लेकर प्राणायाम-पर्यन्त विधान सम्पादित करके 'ॐ ह्री ज्ञानात्मने नमः' इत्यादि मन्त्रों से पीठन्यास करके ऋष्यादि न्यास करना चाहिये; जैसे—मस्तक पर ॐ कुबेराय ऋषये नमः, मुख में पङ्क्तिच्छन्दसे नमः, हृदय में ॐ धनदायै देवतायै नमः। तदनन्तर छः दीर्घ मायाबीज द्वारा 'ॐ ह्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' इत्यादि मन्त्रों से करन्यास तथा 'ॐ ह्रां हृदयाय नम' इत्यादि मन्त्रों से अंगन्यास करना चाहिये।।३६।।

ततो ध्यानम्—

कुङ्कुमोदरगर्भाभां किञ्चिद्यौवनशालिनीम्।
मृणालकोमलभुजां केयूराङ्गदभूषणाम्।।३७।।
तुलाकोटिपरिभ्रान्तपादपद्मद्वयान्विताम्।
माणिक्यहारमुकुटकुण्डलादिविभूषिताम्।।३८।।
नीलोत्पलदृशां किञ्चिदुद्यत्कुचविराजिताम्।
कराभ्यां भ्राम्यत्कमलां रक्तवस्त्राङ्गरागिणीम्।।३९।।
हेमप्राकारमध्यस्थां रत्नसिंहासनोपरि।
ध्यायेत्कल्पतरोर्मूले देवीं तां धनदायिकाम्।।४०।।

तदनन्तर कुमकुम के समान अरुण वर्ण वाली, किञ्चित् यौवन वाली, मृणाल के समान कोमल बाहों वाली, केयूर तथा अंगद-जैसे आभूषणों से भूषित, नूपुर-मण्डित परिभ्रमणशील पादद्वय वाली, माणिक्य के हार, मुकुट तथा कुण्डलादि आभरणों से भूषित, नीलकमल के समान नयनों वाली, किञ्चित् उन्नत स्तनों से सुशोभित, करद्वय द्वारा भ्राम्यमान (हिलाये जा रहे) कमलों को धारण करने वाली, रक्त वस्त्र तथा रक्त अंगराग की अनुरागिणी, स्वर्णप्राकार से घिरे कल्पतरु के मूल में रत्नासिंहासन के ऊपर विराजमान धनदा देवी का ध्यान करना चाहिये।।३७-४०।।

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्यार्घ्यं संस्थाप्याधारशक्त्यादि ह्रीं ज्ञानात्मने नमः इत्यन्तं पीठपूजां विधाय ॐ पद्मासनाय नमः इति मध्ये सम्पूज्य पुनर्ध्यात्वावाह्य सम्पूज्य योनिमुद्रां प्रदर्श्य केशरेषु अग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च षडङ्गैः प्रपूज्य पूर्वादिदलेषु लक्ष्म्यै, पद्मायै, पद्मासनायै, श्रियै, हरिप्रियायै, इरायै, कमलायै, अब्जायै, चञ्चलायै, लोलायै। पुनर्मध्ये देवीं प्रपूज्य यथाशक्ति जपित्वा जपं समर्प्य नत्वां विसृजेत्।।४१।।

इस प्रकार ध्यान करने के उपरान्त मानसोपचार पूजन, विशेषार्घ्य-स्थापन, आवाहनादि से लेकर 'ह्रीं ज्ञानात्मने नमः' पर्यन्त पीठपूजा करके 'ॐ पद्मासनाय नमः'

मन्त्र द्वारा पूजा करके, पुनः ध्यान, आवाहन, पूजन, योनिमुद्रा-प्रदर्शन करके आग्नेयादि कोणों में, मध्य में, दिक्समूह में 'ॐ ह्रां हृदयाय नमः' इत्यादि मन्त्रों से षडङ्गादि पूजन करके पूर्वादि दल में क्रमशः 'ॐ लक्ष्म्यै नमः, ॐ पद्मायै नमः, ॐ पद्मासनायै नमः, ॐ श्रियै नमः, ॐ हरिप्रियायै नमः, ॐ इरायै नमः, ॐ कमलायै नमः, ॐ अब्जायै नमः, ॐ चञ्चलायै नमः, ॐ लोलायै नमः' मन्त्र से पूजन करके मध्य में देवी की पूजा करनी चाहिये। तदनन्तर यथाशक्ति जप करने के उपरान्त जप का समर्पण करके देवी को प्रणाम कर विसर्जन करना चाहिये।।४१।।

अस्याः पूजायन्त्रं यथा—

नवयोन्यात्मकं चक्रं विलिखेत् कर्णिकोपरि।
दिग्दलं पद्ममालिख्य चतुरस्रं लिखेद्
कोणेषु वज्रान् संलिख्य मध्ये बीजं समुल्लिखेत्।।४२।।

इसका पूजनयन्त्र इस प्रकार से बनाया जाता है—कर्णिका के ऊपर एक नवयोनि स्वरूप का चक्र अंकित करके उसमें एक दशदल पद्म अंकित करना चाहिये। उसके बहिर्भाग में चतुरस्र बनाकर कोण में वज्रों को लिखकर (बनाकर) मध्य में 'धं' बीजमन्त्र लिखना चाहिये।।४२।।

अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः।

प्रजपेदक्षसूत्रेण रत्नादिखचितेन तु।
लक्षे जप्ते मन्त्रसिद्धिः पुरश्चर्यां समाचरेत्।।४३।।
रात्रौ चेज्जप्यते चाष्टसहस्रं सप्तवासरान्।
एतेनैव सुसिद्धः स्यात्पुरश्चर्याधिको विधिः।।४४।।

तन्त्र में कहा गया है कि रत्न से खचित अक्षसूत्र की माला से इसका जप करना चाहिये। एक लाख जप से मन्त्र की सिद्धि होती है। यदि रात्रि में नित्य १००८ मन्त्र का सात दिन तक जप किया जाय तो यह मन्त्र सिद्ध हो जाता है। यही इसका पुरश्चरण होता है।।४३-४४।।

भुक्त्वा वाप्यथवाऽभुक्त्वा पायसान्नं प्रदाय च।
दशकृत्वोऽथवा शौचं कृत्वा वापि कुचैलताम्।
यः स्मरेद् देवि! विद्यां तां दारिद्र्यैर्नाभिभूयते।।४५।।

ईश्वर कहते हैं—हे देवि! भोजन करके अथवा न करके, दश बार शौच-प्रक्रिया से शुद्ध होकर अथवा बिना शौच-प्रक्रिया किये हुये ही देवी को पायसान्न प्रदान करके

जो इस धनदा विद्या (धनदा-मन्त्र) का स्मरण करता है, वह कभी भी दरिद्रता से अभिभूत नहीं होता।।४५।।

पूजान्ते च समायाति रात्रौ देवी धनेश्वरी।
सर्वालङ्कारमुत्सृज्य दत्त्वा याति निजालयम् ॥४६॥

पूजा के अन्त में देवी धनेश्वरी साधक के पास आती हैं तथा समस्त अलंकारों को अपने देह से उतार कर साधक को देकर अपने स्थान को चली जाती है।।४६।।

धनञ्च विपुलं दत्त्वा साधकस्य मनोरथान्।
पूरयित्वा महेशानि! वशगा जायते शुभा ॥४७॥

हे महेशानि! साथ ही विपुल धन प्रदान करती हुई साधक का मनोरथ पूर्ण करके वह मंगलमयी देवी साधक के वश में हो जाती है।।४७।।

यक्षिणी स्वयमाहेति यो मां स्मरति मानवः।
तस्य दारिद्र्यसंन्यासं दासीवत्करवाण्यहम् ॥४८॥

यक्षिणी स्वयं कहती है कि जो मुझे स्मरण करता है, मैं दासी के समान स्थित होकर उसकी दरिद्रता का मोचन करती हूँ।।४८।।

सहस्रं सप्तभिर्यावत् पुरश्चरणमिष्यते।
तथा घृतेन खण्डेन मधुना च दशांशतः।
होमोऽपि च विधातव्यः क्षणाद्दारिद्र्यशान्तये ॥४९॥

सात दिनों तक नित्य एक हजार जप इसका पुरश्चरण कहा गया है। जप के अन्त में दारिद्र्य दोष की शान्ति के लिये घृत, खांड तथा मधु को एक में मिलाकर जप का दशांश होम करना चाहिये।।४९।।

पूजा कार्या महादेव्याश्चन्दनेनानुलेपिते।
ताम्रपात्रे तथा कार्यं मण्डलं सुमनोहरम् ॥५०॥

महादेवी का पूजन भी कर्त्तव्य है। चन्दन द्वारा लिप्त ताम्रपात्र में उस प्रकार का मनोहारी मण्डल बनाये (इस मण्डल में ही मनीषी लोग इस प्रकार से देवी-पूजन किया करते थे)।।५०।।

तत्र पूजा विधातव्या देव्या एवं मनीषिणा।
कुतो दारिद्र्यशङ्काऽस्य स हि कोटीश्वरो भवेत् ॥५१॥

इस प्रकार से पूजा करने पर साधक को दारिद्र्य की आंशका क्यों? अर्थात् उसके पास दरिद्रता नहीं रहती; अपितु वह करोड़पति हो जाता है।।५१।।

वित्तं दृष्ट्वा तु लोकस्य जप्यतेऽष्टशतं मनूः।
तस्य वित्तं प्रविश्याशु ददाति सापि तत्क्षणात्॥५२॥

लोगों का वित्त देखकर एक सौ आठ बार मन्त्रजप करना चाहिये। इससे वह देवी तत्क्षण ही उसका वित्त विभक्त करके उसे प्रदान करती हैं।।५२।।

दृष्ट्वा तु साधकं भूपाः सर्वस्वं ददते हठात्।
यद्ययं जप्यते मन्त्रः श्वेतपुष्पेण पूजनम्॥५३॥

यदि साधक इस मन्त्र का जप तथा श्वेत पुष्पों से देवी का पूजन करता है तो राजन्य वर्ग वाले साधक को देखकर उसे शीघ्र ही सर्वस्व प्रदान कर देते हैं।।५३।।

कुबेरोऽपि स्वयं दत्ते गृहमानीय हेम च।
यक्षेणानीय सततं समर्पयति तद्धनम्॥५४॥

उस साधक को कुबेर भी स्वयं उसके घर आकर स्वर्ण प्रदान करते हैं और यक्षों द्वारा सर्वदा धन उसे भिजवाते रहते हैं।।५४।।

रम्यं दधि तथा खण्डं पायसं शर्करा मधु।
नैवेद्यं विविधं दत्त्वा रात्रौ पूजां समाचरेत्॥५५॥
भुक्त्वा तस्यै महादेवि! चन्दनेनानुलेपनम्।
नैवेद्यञ्च प्रदातव्यं नित्यं दारिद्र्यशान्तये॥५६॥

मनोहर दधि, खांड, पायस, चीनी, मधु तथा विविध नैवेद्य प्रदान करके रात्रि में पूजा करनी चाहिये। हे महादेवि! भोजन के अन्त में (नैवेद्य के पश्चात्) उनका चन्दन से अनुलेपन करना चाहिये। दारिद्र्य-शान्ति के लिये प्रतिदिन नैवेद्य अवश्य प्रदान करना चाहिये।।५५-५६।।

कामेदवं यजेत्पार्श्वे देव्याः प्रत्यहमादरात्।
तेन देव्या महाप्रीतिर्वाञ्छितार्थं ददाति च॥५७॥
अङ्गन्यासकरन्यासौ चाङ्गे चैवास्य देवता।
कुबेरस्य मतेनास्या पूजादि क्रियते तथा॥५८॥

देवी के पार्श्व में नित्य आदर के साथ कामदेव का पूजन करना चाहिये। उससे देवी में साधक के प्रति अतिशय प्रीति उत्पन्न होती है और वे उसे वाञ्छित अर्थ प्रदान करती हैं। इन देवता का अंगन्यास तथा करन्यास भी करना चाहिये; साथ ही कुबेर के मतानुसार इनकी पूजा करनी चाहिये।।५७-५८।।

ॐ ह्रीं रतिप्रिये स्वाहा—इत्यपरो मन्त्रः; यथा ताराप्रदीपे—

तारकं भुवनेशीञ्च पूर्ववच्च ततः परम्।
एवमष्टाक्षरीं जप्त्वा सर्वसौख्यमवाप्नुयात्॥५९॥

'ॐ ह्रीं रतिप्रिये स्वाहा' यह धनदा का अन्य मन्त्र कहा गया है। ताराप्रदीप में कहा है कि तारक (ॐ), भुवनशी (ह्रीं), इसके पश्चात् रतिप्रिये स्वाहा लगाने से देवी का अष्टाक्षर मन्त्र होता है। इस अष्टाक्षरी मन्त्र का जप करने से समस्त सुखों की प्राप्ति होती है।।५९।।

शङ्खलिप्तपटे देवीं गौरवर्णां घृतोत्पलाम्।
सर्वालङ्कारिणीं देवीं समालिख्यार्चयेत्ततः॥६०॥
जातिपुष्पैश्च धूपैश्च सहस्रं परिवर्त्तयेत्।
सप्ताहं मन्त्रमेतस्याः प्रयत्नेन च साधयेत्॥६१॥
अर्द्धरात्रं गते देवी समागत्य प्रयच्छति।
पञ्चविंशतिदीनारं प्रत्यहं पारितोषितम्॥६२॥

इति धनदाप्रकरणम्

शंखचूणसे लिप्त पट पर समस्त अलंकारों से विभूषित गौर वर्ण देवी को अच्छी तरह से अंकित करके उनका एक हजार जूही के पुष्पों से अर्चन करने के बाद धूप को एक हजार बार भ्रामित करना चाहिये अर्थात् एक हजार बार धूपबत्ती जलाकर उस चित्र के चतुर्दिक् घुमाना चाहिये) एक सप्ताह तक इन देवता के मन्त्र की यत्नपूर्वक उपासना करनी चाहिये। ऐसा करने से आधी रात व्यतीत होने पर देवी सन्तुष्ट होकर उपस्थित हो प्रतिदिन उसे बीस दीनार प्रदान करती है।।६०-६२।।

●

अथ सरस्वतीप्रकरणम्

अथ वागीश्वरीं वक्ष्ये वागीशत्वप्रदायिनीम्।
यस्याः प्रसादाद्धर्मार्थकाममोक्षाः करस्थिताः॥१॥

जिनकी कृपा से धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष अनायास ही प्राप्त हो जाते हैं, उन वागीशत्व प्रदान करने वाली वागीश्वरी को अब मैं कहता हूँ।।१।।

यथा निबन्धे—

अद्रिर्वरुणसंरुद्धो दवाग्वादिनि ठद्वयम्।
सरस्वत्या दशार्णोऽयं राजैश्वर्यफलप्रदः॥२॥

अद्रिर्दकारः। वरुणो वकारः। ठद्वयं स्वाहा। तेन वद वद वाग्वादिनि! स्वाहा इति दशाक्षरः॥३॥

अब सरस्वती का मन्त्र कहते हैं। निबन्ध में कहा गया है कि अद्रि (दकार) वरुण (वकार) द्वारा पुटित होकर 'वदव' होता है। तदनन्तर 'दवाग्वादिनि' तथा ठद्वय (स्वाहा) लगाने से सरस्वती का मन्त्रोद्धार होता है—ॐ वद वद वाग्वादिनि स्वाहा। यह दश अक्षरों वाला मन्त्र राजैश्वर्य फल को देने वाला होता है।।२-३।।

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादि पीठन्यासान्तं कृत्वा केशरेषु मध्ये च ॐ मेघायै नमः। एवं प्रज्ञायै, प्रभायै, विद्यायै, श्रियै, धृत्यै, स्मृत्यै, बुद्ध्यै, विद्येश्वर्यै। पुनर्मध्ये वर्णपद्मासनाय। तत ऋष्यादिन्यासः। कण्व ऋषिः विराट् छन्दः वागीश्वरी देवता। अथ वर्णन्यासः। शिरसि—वं नमः। श्रवणयोः—दं नमः, वं नमः। चक्षुषोः—दं नमः, वां नमः। नसोः ग्वां नमः, दिं नमः। मुखे—निं नमः। लिङ्गे—स्वां नमः। गुह्ये—हां नमः। ततो मातृकोक्तकराङ्गन्यासौ कृत्वा ध्यायेत्॥४॥

पूजा पद्धति—प्रातःकृत्यादि से पीठन्यास-पर्यन्त करके पूर्वादि केशरों में ॐ मेधायै नमः, ॐ प्रज्ञायै नमः, ॐ प्रभायै नमः, ॐ विद्यायै नमः, ॐ श्रियै नमः, ॐ धृत्यै नमः, ॐ विद्येश्वर्यै नमः से पूजन करने के उपरान्त मध्य में ॐ वर्णपद्मासनाय नमः से पूजन करके 'अस्य श्रीसरस्वतीमन्त्रस्य कण्वऋषिर्विराट् छन्दः वागीश्वरी देवता वाग्बीजं स्वाहा शक्तिर्वाग्विभवप्राप्त्यर्थं पूजने विनियोगः' इस प्रकार विनियोग करने के पश्चात् इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करना चाहिये—मस्तक पर ॐ कण्वाय ऋषये नमः, मुख में ॐ विराट् छन्दसे नमः, हृदय में ॐ वागीश्वर्यै देवतायै नमः, गुह्य में ॐ वाग्बीजाय नमः, पैरों में ॐ स्वाहा शक्तये नमः।

तदनन्तर इस प्रकार मन्त्रवर्ण का न्यास करना चाहिये—मस्तक पर वं नमः, दाहिने कान पर ॐ दं नमः, बाँयें कान पर ॐ वं नमः, दाहिने चक्षु पर ॐ दं नमः, वाम चक्षु पर ॐ वां नमः, दक्षिण नासिका पर ॐ ग्वां नमः, वाम नासिका पर ॐ दिं नमः, मुख में ॐ निं नमः, लिङ्ग में ॐ स्वां नमः, गुह्य में ॐ हां नमः।

तदनन्तर मातृकान्यासोक्त प्रकार से करन्यास तथा अङ्गन्यास करना चाहिये; जैसे—ॐ अं कं खं गं घं ङं आं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ॐ इं चं छं जं झं ञं ईं तर्जनीभ्यां स्वाहा इत्यादि रूप से करन्यास तथा ॐ अं कं खं गं घं ङं आं हृदयाय नमः, ॐ इं चं छं जं झं ञं ईं शिरसे स्वाहा इत्यादि प्रकार से अङ्गन्यास करना चाहिये। तदनन्तर ध्यान करना चाहिये।।४।।

यथा—

तरुणसकलमिन्दोर्विभ्रती शुभ्रकान्तिः
कुचभरनमिताङ्गी सन्निषण्णा सिताब्जे।
निजकरकमलोद्यल्लेखनीपुस्तकश्रीः
सकलविभवसिद्ध्यै पातु वाग्देवता नः ॥५॥

चन्द्र की तरुण कला (खण्ड)-धारिणी, शुभ्र कान्ति वाली, स्तनों के भार से झुकी हुई, श्वेत कमल पर आसीन, अपने बाँयें हाथ में (करकमल में) लेखनी एवं दाहिने हाथ में पुस्तक मुद्रा धारण करने वाली, समस्त विभवों की सिद्धि में हेतु वाग्देवता हमारी रक्षा करें।।५।।

एवं ध्यात्वा मानसैरभ्यर्च्यार्घ्यं संस्थाप्य पीठपूजां कृत्वा केशरेषु अग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च मेघादिपीठमन्वन्तं सम्पूज्य पुनर्ध्यात्वावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं कृत्वावरणाणि पूजयेत्। यथा— अग्निकोणे अं कं खं गं घं ङं आं हृदयाय नमः। नैर्ऋते—ईं चं छं जं झं ञं ईं शिरसे स्वाहा। वायौ—उं टं ठं डं ढं णं ऊं शिखायै वषट्। ईशाने—ऐं तं थं दं धं नं ऐं कवचाय हुं। मध्ये—ॐ पं फं बं भं मं औं नेत्रत्रयाय वौषट्। दिक्षु—अं यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं अः अस्त्राय फट्॥६॥

इस प्रकार ध्यान करके मानस उपचार से पूजा करके विशेषार्ध्य-स्थापन करने के बाद पीठपूजा करके केशर के मध्य तथा दिक्समूह में मेघादि पीठमन्त्र-पर्यन्त पूजा करके पुनः ध्यान-आवाहनादि से पञ्चपुष्पाञ्जलि निवेदन-पर्यन्त विधान सम्पन्न करके आवरणपूजन करना चाहिये। जैसे अग्निकोण में—ऊं इं चं छं जं झं नं ईं शिरसे स्वाहा नमः। वायुकोण में—ॐ उं टं ठं डं ढं पं ऊं शिखायै वषट् नमः। ईशाने—ॐ एं तं थं दं धं नं ऐं कचवाय हुं नमः। मध्य में—ॐ ओं पं फं बं झं मं औं नेत्राभ्यां वौषट् नमः। पूर्वदिकादि में—ॐ अं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं अः अस्त्राय फट् नमः।।६।।

पूर्वादि पत्रेषु—योगायै, सत्यायै, विमलायै, ज्ञानायै, बुद्ध्यै, स्मृत्यै, मेधायै, प्रज्ञायै। दलाग्रेषु—ब्राह्मयाद्या मातृः सम्पूज्य तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्॥७॥

अब पूर्वादि पत्रसमूह में दक्षिणादिक्रमेण (दक्षिण से प्रारम्भ करके) ॐ योगायै नमः, ॐ सत्यायै नमः, ॐ विमलायै नमः, ॐ ज्ञानायै नमः, ॐ बुद्ध्यै नमः, ॐ

स्मृत्यै नमः, ॐ मेधायै नमः, ॐ प्रज्ञायै नमः से पूजन करना चाहिये। इसके बाद दल के आगे ॐ ब्राह्म्यै नमः, ॐ माहेश्वर्यै नमः, ॐ कौमार्यै नमः, ॐ वैष्णव्यै नमः, ॐ वाराह्यै नमः, ॐ इन्द्राण्यै नमः, ॐ चामुण्डायै नमः, ॐ महालक्ष्म्यै नमः मन्त्रों से इनका पूजन करके उसके बाहरी भाग में चतुरस्र में इन्द्रादि लोकपालों तथा उनके वज्रादि अस्त्रों का पूजन करने के उपरान्त धूपदान से लेकर विसर्जन-पर्यन्त कार्य का समापन करना चाहिये।।७।।

पुरश्चरणं दशलक्षजपः। पयोऽभ्यक्तपुण्डरीकैर्मधुराप्लुततिलैर्वा दशांश-होमः, दशलक्षं जपेन्मन्त्रमित्यादिवचनात्॥८॥

'दशलक्षं जपेन्मत्रम्' इत्यादि वचन के अनुसार इसका पुरश्चरण दश लाख मन्त्र-जप से सम्पन्न होता है। जप के उपरान्त दुग्ध से सने सफेद कमल द्वारा अथवा त्रिमधुर से लिपटे तिल द्वारा जप का दशांश होम करना चाहिये।।८।।

अस्य पूजायन्त्रम्—

व्योमेन्दो रसनार्णकर्णिकमुचां द्वन्द्वैः स्फुरत्केशरी-
पात्रान्तर्गतपञ्चवर्गयशलार्णादित्रिवर्गं क्रमात्।
आशास्वस्त्रिषु लान्तलाङ्गलियुजा क्षोणीपुरेणावृतं
यन्त्रं वर्णतनोः परं निगदितं सर्वार्थसिद्धिप्रदम्॥९॥

इनका पूजनयन्त्र कहा जा रहा है—इस यन्त्र की कर्णिका में व्योम (ह्) इन्दु (स) औ एवं रसनार्ण (:) युक्त अर्थात् ह्सौः। अग्र पत्र से लगाकर पाँच पत्रों में प्रदक्षिण क्रम से कर्णिकाभिमुख ककारादि पाँच वर्ग (पच्चीस वर्ण), अवशिष्ट तीन पत्रों में यथाक्रम से य र ल व, श ष स ह तथा ळ क्ष अंकित करना चाहिये। आशा (दिक्) समूह में तथा कोणसमूह में यथाक्रम से लान्त (व) तथा लाङ्गली (ठ) से युक्त भूपुर से आवृत यह वर्णशरीर सरस्वती का सर्वसिद्धिप्रद यन्त्र कहा जाता है।।९।।

तन्त्रान्तरे—

कर्णिकायां प्रेतबीजं विधिना विलिखेद्गुरुः।
तत्षोडशकेशरेषु विलिखेत् षोडशस्वरान्॥१०॥

अन्य तन्त्र में कहा है कि गुरु को विधिपूर्वक कर्णिका में प्रेतबीज (ह्सौः) लिखना चाहिये। तदनन्तर उसके सोलह केशरों में सोलह स्वरों को लिखना चाहिये।।१०।।

तथाष्टदलमध्ये च वर्गाष्टकं यथाविधि।
कादिमान्ताः पञ्चपञ्चवर्गाः स्युर्मातृकोदिताः॥११॥

यादिवान्ताः शादिहान्ता ळक्षमीशे प्रविन्यसेत्।
चतुरस्रं चतुर्द्वारं वं ठं दिक्षु विदिक्षु च॥१२॥

दिक्षु वं विदिक्षु ठमित्यर्थः।

इस प्रकार आठ दलों के मध्य में यथाविधि आठ वर्ग बनाना चाहिये। मातृका वर्ण में ककार से लेकर मकार-पर्यन्त पाँच-पाँच वर्णों का वर्ग होता है। य से लेकर व पर्यन्त, श से ह पर्यन्त वर्गवर्ण तथा ळ-क्ष का ईशान में विन्यास करना चाहिये। इसके बाद उसे चतुरस्र तथा चतुर्द्वार से युक्त करना चाहिये। दिक्समूह में 'वं' तथा विदिक् (कोणों में) 'ठं' लिखना चाहिये।।११-१२।।

भुवनेशीसम्पुटोऽयं महासारस्वतप्रदः। तेन मायापुटितत्वेन द्वादशाक्षरः। अस्य प्रातःकृत्यादि सर्वं पूर्ववत्। विशेषन्तु बृहस्पति ऋषिः॥१३॥

यह मन्त्र भुवनेशी (ह्रीं) द्वारा पुटित होने पर महासारस्वतप्रद (विद्याप्रद) होता है। इसे मायाबीज (ह्रीं) से इस प्रकार पुटित करने से (भुवनेशी तथा मायाबीज (ह्रीं) से इस प्रकार पुटित करने से (भुवनेशी तथा मायाबीज दोनों ही 'ह्रीं' है) यह बारह अक्षरों वाला मन्त्र होता है। इसकी समस्त पूजापद्धति पूर्ववत् है। ऋष्यादि न्यास हेतु इसके ऋषि बृहस्पति कहे गये हैं।।१३।।

हृदयान्ते भगवति! वदशब्दयुगं ततः।
वाग्देवि वह्निजायान्तं वाग्भवाद्यं समुद्धरेत्॥१४॥

सरस्वती का मन्त्रान्तर इस प्रकार है—हृदय (नमः) के अन्त में भगवति, उसके पश्चात् दो बार 'वद' तथा 'वाग्देवि' शब्द तथा अन्त में वह्निजाया (स्वाहा) लगाकर मन्त्र के प्रारम्भ में वाग्भव बीज लगाना चाहिये।।१४।।

तथा च-ऐं नमो भगवति वद वद वाग्देवि स्वाहा इति षोडशाक्षरः। अस्य कराङ्गन्यासौ। ऐं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। नमस्तर्जनीभ्यां, भगवति मध्यमाभ्यां वषट्। वदवद अनामिकाभ्यां, वाग्देवि कनिष्ठाभ्यां वौषट्। स्वाहा करतलपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु॥१५॥

उससे मन्त्रोद्धार होता है—ऐं नमो भगवति वद वद वाग्देवि स्वाहा। यह सोलह अक्षरों का मन्त्र है। इसका ऋष्यादि न्यास पूर्व मन्त्र के समान ही होता है। करांगन्यास इस प्रकार होता है—ॐ ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ नमस्तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ भगवति मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ वद वद अनामिकाभ्यां हुं। ॐ वाग्देवि कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ॐ स्वाहा करतलपृष्ठाभ्यां फट्। इसी प्रकार से ॐ ऐं हृदयाय नमः इत्यादि प्रकार से अंगन्यास भी करना चाहिये।।१५।।

ध्यानन्तु—

शुभ्रां स्वच्छविलेपमाल्यवसनां पीतांशुखण्डोज्ज्वलां
व्याख्यामक्षगुणं सुधाढ्यकलशं विद्याञ्च हस्ताम्बुजैः।
बिभ्राणां कमलासनां कुचनतां वाग्देवतां सुस्मितां
वन्दे वाग्विभवप्रदां त्रिनयनां सौभाग्यसम्पत्करीम्।।१६।।

व्याख्या मुद्राविशेषः।

ध्यान इस प्रकार होता है—शुभ्र, स्वच्छ अंगराग, माला तथा वस्त्र धारण करने वाली, चन्द्रकला (खण्ड) से उज्ज्वल, चारो हाथों में व्याख्यान मुद्रा, अक्षमाला, सुधापूर्ण कलश तथा पुस्तक मुद्राधारिणी, श्वेत कमल पर आसीन, स्तनभार से अवनत, तीन नेत्र, सुन्दर हास्य से युक्त, वागैश्वर्य प्रदान करने वाली, सौभाग्य तथा सम्पत्ति-दायिनी वाग्देवी की मैं वन्दना करता हूँ।।१६।।

प्रातःकृत्यादि सर्वमन्यत् पूर्ववत्। अङ्गावरणपूजा त्वङ्गन्यासवत्। पुरश्चरण-मष्टलक्षजपः। आज्याक्ततिलैर्दशांशहोमश्च।।१७।।

प्रातःकृत्यादि से लेकर समस्त विधियाँ पूर्व मन्त्र के समान ही सम्पन्न होती हैं। पूर्ववत् अंगन्यास के समान ही अंगदेवताओं की आवपण-पूजा होती है। इसका पुरश्चरण आठ लाख मन्त्रजप तथा घृत से लिपटे तिलों द्वारा जप के दशांश होम से सम्पन्न होता है।।१७।।

मन्त्रान्तरम्—प्रणवो माया वाग्भवं माया प्रणवं सरस्वत्यै नमः इत्ये-कादशाक्षरः। अस्य पूजा ऋष्यादिन्यासञ्च पूर्ववत्। ऐं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ऐं तर्जनीभ्यां स्वाहेत्यादिना वाग्भवाद्येन कराङ्गन्यासौ।।१८।।

अब मन्त्रान्तर कहते हैं। प्रणव (ॐ), माया (ह्रीं), वाग्भव (ऐं), माया (ह्रीं), प्रणव (ॐ), सरस्वत्यै नमः। मन्त्रोद्धार होता है—ॐ ह्रीं ऐं ह्रीं ॐ सरस्वत्यै नमः। यह ग्यारह अक्षरों का मन्त्र होता है। इसकी पूजा दशाक्षर सरस्वती मन्त्र के अनुसार होती है एवं पूर्ववत् ही ऋष्यादि न्यास भी किया जाता है। करांगन्यास ॐ ऐं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ॐ ऐं तर्जनीभ्यां स्वाहा इत्यादि प्रकार से मन्त्र के आदि में 'ऐं' लगाकर करना चाहिये।।१८।।

ध्यानन्तु—

वाणीं पूर्वनिशाकरोज्ज्वलमुखीं कर्पूरकुन्दप्रभां
चन्द्रार्द्धाङ्कितमस्तकां निजकरैः संबिभ्रतीमादरात्।

वीणामक्षगुणं सुधाढ्यकलशं विद्याञ्च तुङ्गस्तनीं
दिव्यैराभरणैर्विभूषिततनुं हंसाधिरूढां भजे ॥१९॥

ध्यान इस प्रकार किया जाता है—पूर्ण चन्द्र के समान उज्ज्वल मुख वाली, कपूर तथा कुन्द के समान कान्ति वाली, मस्तक पर अर्धचन्द्र को धारण करने वाली, हाथों में वीणा, अक्षमाला, सुधापूर्ण कलश तथा विद्यामुद्रा धारण करने वाली, उत्तुंग स्तनों वाली, दिव्य आभूषणों से विभूषित शरीर वाली, हंस पर आरूढ़ वाणी (सरस्वती) का मैं भजन करता हूँ।।१९।।

विशेष—इस मन्त्र के अंगन्यास के पूर्व ब्रह्मरन्ध्र, भ्रूमध्य तथा नवरन्ध्र अर्थात् दोनों कान, दोनों नेत्र, दोनों नाक एवं मुख, लिंग तथा गुह्य में मन्त्रवर्णों का न्यास करने के लिये शारदातिलक में कहा गया है; साथ ही तन्त्रसार में भी यही उल्लिखित है; परन्तु इस ग्रन्थ में ऐसा कुछ भी अंकित नहीं है। अत: साधकों के हितार्थ शारदा-तिलक के अनुसार उसे यहाँ कहा जा रहा है; जैसे—ब्रह्मरन्ध्र में ॐ ॐ नमः, भ्रूमध्य में ॐ ह्रीं नमः, दक्षिण कर्ण में ॐ ऐं नमः, वाम कर्ण में ॐ ह्रीं नमः, दक्षिण चक्षु में ॐ ॐ नमः, वाम चक्षु में ॐ सं नमः, दक्षिण नासिका में ॐ रं नमः, वाम नासिका में ॐ स्वं नमः, मुख में ॐ त्यैं नमः, लिङ्ग में ॐ नं नमः, गुह्य में ॐ मं नमः।

प्रातःकृत्यादि सर्वमन्यत् पूर्ववत्। आवरणपूजा तु देव्या दक्षिणे ॐ संस्कृतायै नमः, ॐ वाङ्मय्यै नमः। वामे ॐ प्राकृतायै नमः, ॐ वाङ्मय्यै नमः। ततः षडङ्गेन। ततः पूर्वादिपत्रेषु प्रज्ञामेधाश्रुतिशान्ति-स्मृतिवागीश्वरीमतिस्वस्तिः। पत्राग्रेषु ब्राह्म्याद्यास्तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्॥२०॥

प्रात:कृत्यादि अन्य समस्त विधियाँ पूर्ववत् ही की जाती हैं अर्थात् ध्यान, मानसोपचार पूजन, विशेषार्घ्य-स्थापन, पीठपूजन करने के उपरान्त केशरसमूह में तथा मध्य में पूर्वोक्त पीठशक्ति तथा पीठमन्त्र की पूजा करनी चाहिये। तदनन्तर देवी के दक्षिण में ॐ संस्कृतायै नमः ॐ वाङ्मय्यै नमः एवं वाम में ॐ प्राकृतायै नमः ॐ वाङ्मय्यै नमः से पूजन करना चाहिये। तत्पश्चात् केशर के अग्निकोण में 'एते गन्धपुष्पे ॐ ऐं हृदयाय नमः, नैर्ऋत्य कोण में ॐ ऐं शिरसे स्वाहा नमः, वायुकोण में ॐ ऐं शिखायै वषट् नमः, ईशान कोण में ॐ ऐं कवचाय हुं नमः, मध्य में ॐ ऐं नेत्रत्रयाद्य वौषट् नमः, सामने ॐ ऐं अस्त्राय फट् नमः (सबके आगे 'एते गन्धपुष्पे' अवश्य लगाना चाहिये) मन्त्रों से पूजन करना चाहिये। अब पूर्वादि दिक्क्रम से ॐ

प्रज्ञायै नमः, ॐ मेधायै नमः, ॐ श्रुत्यै नमः, ॐ शान्त्यै नमः, ॐ स्मृत्यै नमः, ॐ वागीश्वर्यै नमः, ॐ मत्यै नमः, ॐ स्वस्त्यै नमः से पूजन करने के बाद पत्राग्र में ब्राह्मी प्रभृति मातृवर्ग का तथा दल के बाहरी भाग में इन्द्रादि लोकपालों तथा वज्रादि अस्त्रों का पूजन करके धूपदान से विसर्जन-पर्यन्त विधान सम्पन्न करना चाहिये।।२०।।

पुरश्चरणं द्वादशलक्षजपः। सिताम्बुजैर्नागचम्पकपुष्पैर्वा द्वादश-सहस्रहोमः॥२१॥

इस मन्त्र का पुरश्चरण बारह लाख जप से होता है। जप के उपरान्त श्वेत पद्म अथवा नागचम्पकपुष्प द्वारा बारह हजार होम करना चाहिये।।२१।।

मन्त्रान्तरम्—ऐं वाचस्पतये अमृते प्लूवः प्लूः एकादशाक्षरः। अस्य कराङ्गन्यासौ—ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः, वाचस्पते तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ अमृते मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ प्लूवः अनामिकाभ्यां हुं, ॐ प्लूः कनिष्ठाभ्यां फट्॥२२॥

इनका अन्य मन्त्र है—ऐं वाचस्पतये अमृते प्लूवः प्लूः। यह ग्यारह अक्षरों का मन्त्र है। इसका करन्यास इस प्रकार किया जाता है—ॐ ऐं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ॐ वाचस्पतये तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ अमृते मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ प्लूवः अनामिकाभ्यां हुं, ॐ प्लूः कनिष्ठाभ्यां फट्। इसी प्रकार ॐ ऐं हृदयाय नमः। ॐ वाचस्पते शिरसे स्वाहा। ॐ अमृते शिखायै वषट्। ॐ प्लूवः कवचाय हुं। ॐ प्लूः नेत्रत्रयाय अस्त्राय फट् मन्त्रों से अंगन्यास भी करना चाहिये।।२२।।

यथा निबन्धे—

कुर्यादङ्गानि विधिवद्वागाद्यैः पञ्चभिः पदैः।
मातृकां विन्यसेत्पूर्वं पूर्ववत्तां यथाविधि॥२३॥

निबन्ध में कहा भी गया है कि वाग्भव बीजादि पाँच पद द्वारा (अर्थात् पहले वाग्बीज लगाकर) विधिवत् शिरःप्रभृति पाँच स्थानों पर पञ्चांग न्यास करना चाहिये। यथाविधि उन मातृकावर्णों का पूर्ववत् पूर्व में न्यास करना चाहिये।।२३।।

मन्त्रेऽमृत इत्यत्र नाऽकारस्य लोपः। तथा च शारदायां—

वाचस्पतेऽमृते भूयः प्लूवः प्लूरिति कीर्त्तयेत्।
वागाद्यो मनुराख्यातो रुद्रसङ्ख्याक्षरो परः॥२४॥

प्लूवः प्लूरिति विसर्गान्तमुभयम्।

षड़ंग न्यास के पूर्व मातृकावर्ण का न्यास विहित होने पर भी मन्त्र में 'वाचस्पतेऽमृते'

यहाँ श्लोक में से 'अ' का लोप हो जाने पर भी 'अ' का लोप नहीं हुआ है। शारदा-तिलक में कहते हैं कि 'वाचस्पते अमृते' इन दोनों को कह कर पुनः 'प्लूवः प्लूः' इन दो पदों को कहना चाहिये। इन सबके आदि में वाग् अर्थात् 'ऐं' लगाना चाहिये। यह रुद्रसंख्यक (ग्यारह अक्षरों वाला) मन्त्र मुनियों द्वारा प्रशंसित है। यहाँ प्लूवः एवं प्लूः—यह दोनों ही विसर्गान्त हैं।।२४।।

ध्यानन्तु—

आसीना कमले करैर्जपवटीं पद्मद्वयं पुस्तकं
बिभ्राणा तरुणेन्दुबद्धमुकुटा मुक्तेन्दुकुन्दप्रभा।
भालोन्मीलितलोचना कुचभरक्लान्ता भवद्भूतये
भूयाद्वागधिदेवता मुनिगणैरासेव्यमानाऽनिशम्॥२५॥

जपवटी जपमाला।

ध्यान इस प्रकार किया जाता है—श्वेत कमल पर आसीन, चारो हाथों में जपमाला, दो कमल तथा पुस्तकमुद्रा धारण करने वाली, मुक्ता, चन्द्र एवं कुन्द के समान प्रभा वाली, ललाट में विकसित नयनों वाली, कुचों के भार से तनिक झुकी हुई, सर्वदा मुनिगणों द्वारा अहर्निश सेव्यमान, वाणी की अधिपति देवी सरस्वती आप लोगों के लिये ऐश्वर्य की हेतु बने।।२५।।

पुरश्चरणमेकादशलक्षजपः। घृतै होमः। प्रातःकृत्यादि सर्वमन्यत्पूर्ववत्॥२६॥

इसके पुरश्चरण में एकादश लाख जप करना चाहिये। घृत के द्वारा जप का दशांश होम करना चाहिये। शेष प्रातःकृत्यादि विधियाँ पूर्ववत् होती हैं।।२६।।

मन्त्रान्तरं शारदायाम्—

तोयस्थं शयनं विष्णोः सकेवलचतुर्मुखम्।
अर्घीशेन्दुयुतो वह्निर्विन्दुसत्याम्बुमान् भृगुः।
उक्तानि त्रीणि बीजानि सद्भिः सारस्वतार्थिनाम्॥२७॥

शारदातिलक में कहा है कि विष्णुशयन (शय्या) अनन्त, आकार, तोयस्थ (वकारस्थ) होने से 'वा' होता है। उसके आगे ककारमात्र (चतुर्मुख) अर्थात् 'वा' में 'क' मिलाकर वाक् होता है। इस वाक् पद में लक्षित लक्षणा द्वारा वाग्भव 'ऐं' गृहीत होने पर वह एक बीज बनता है। वह्नि (र) अर्घीश (ऊ) तथा बिन्दुयुक्त होने पर 'रुं' होता है, यह द्वितीय बीज होता है। भृगु (स) सद्य (ओ) अम्बु (व) तथा बिन्दुयुक्त होने

पर 'स्वों' बीज होता है। सारस्वतार्थीगण अर्थात् विद्या के कामी लोगों के लिये यह तीन बीज पण्डितों ने कहा है।।२७।।

तोयं वकारः, विष्णोः शयनमाकारः। केवलेन स्वररहितेन चतुर्मुखेन ककारेण सहितम्। तेन वाक् इति पदं सिद्धम्। तस्य च वाग्भवमर्थः। लक्षितलक्षणाबलात्। केचित् तु लक्षितलक्षणाभयादेवं वर्णयन्ति—के मस्तके बलते केवलोऽनुस्वारः तद्युक्तेन ककारेण सहितो वाकारः। तेन क्वामिति सिद्धिमिति, तन्न। निरूढलक्षणायाः शक्तितुल्यत्वात् वाक्पदस्य वाग्भवपर्यायत्वाच्च।।२८।।

तोय—वकार। विष्णु का शयन—अकार। केवल स्वररहित चतुर्मुख अर्थात् ककार के साथ। इससे वाक् पद सिद्ध हो जाता है। लक्षितलक्षणा के बल से इससे वाग्भव बीज का ग्रहण होता है। कोई-कोई लक्षितलक्षणा के भय से शब्द का इस प्रकार से अर्थ कहते हैं—'के' अर्थात् 'मस्तके बलते वर्त्तते' अर्थात् है कह कर जो। केवल है अनुस्वार। उससे युक्त ककार के साथ वाकार, इससे सिद्ध होता है 'क्वाम्' बी; किन्तु यह उचित नहीं है अर्थात् यह कथन असंगत है। क्योंकि निरूढ़ लक्षणा शक्तितुल्या है। और वाक् पद वाग्भव का पर्यायवाची भी है।।२८।।

वस्तुतस्तु—

द्वादशस्वरमुद्धृत्य बिन्दुनादविभूषितम्।
बिन्दुनादसमायुक्तं वह्निबीजं समुद्धरेत्।
षष्ठस्वरसमायुक्तं द्वितीयं बीजमुद्धरेत्।।२९।।
चन्द्रबीजं समुद्धृत्य वारुणं योजयेत्ततः।
त्रयोदशस्वरारूढं बिन्दुनादविभूषितम्।।३०।।

इति विश्वसारवचनात् वाग्भवबीजमेव।

विश्वसारतन्त्रानुसार वस्तुतः द्वादशवें स्वर 'ऐ'कार का उद्धार करके उसे बिन्दु-नाद द्वारा विभूषित करने से प्रथम बीज 'ऐं' का उद्धार होता है। बिन्दु-नादयुक्त षष्ठ स्वर से संयुक्त वह्निबीज को उद्धृत करने से द्वितीय बीज 'रुं' का उद्धार होता है। चन्द्रबीज 'स' का उद्धार करके उसमें वारुण बीज (व) का योग करने पर वह त्रयोदश स्वर पर आरूढ़ होकर बिन्दु-नाद से विभूषित होकर तृतीय बीज 'स्वों' बनता है।।२९-३०।।

अर्घीश ऊकारः। इन्दुः अनुस्वारः। तद्युतो वह्नि रेफः, इति द्वितीयबीजम्। सत्य ओकारः। अम्बु वकारः, ताभ्यां सहितो भृगुः सकार इति तृतीयबीजम्। तेनायं मन्त्रः 'ऐं रूं स्वों'।।३१।।

अर्घीश—ऊकार। इन्दु—अनुस्वार। उसके द्वारा युक्त वह्नि अर्थात् 'र'। यह द्वितीय बीज है। सत्य—ओकार। अम्बु—वकार। उससे युक्त भृगु—स। यह तृतीय बीज है। इससे मन्त्रोद्धार होता है—ऐं रूं स्वों।।३१।।

अस्य प्रातःकृत्यादि सर्वं पूर्ववत्। कराङ्गन्यासौ तु ऐं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, रूं तर्जनीभ्यां स्वाहा, स्वों मध्यमाभ्यां वषट्, ऐं अनामिकाभ्यां हुं, रूं कनिष्ठाभ्यां वौषट्, स्वों करतलपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु॥३२॥

इस मन्त्र का प्रातःकृत्यादि से लेकर सब कुछ पूर्ववत् है। ऋषि, छन्द, देवता भी पूर्ववत् ही हैं। मात्र बीज तथा शक्ति में परिवर्त्तन होता है। इस मन्त्र का बीज 'ऐं' तथा शक्ति 'स्वों' है। सारस्वत-कार्य के लिये इसका विनियोग कहा गया है। द्विरुक्त बीज से करन्यास किया जाता है। जैसे—ॐ ऐं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ॐ रूं तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ स्वों मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ ऐं अनामिकाभ्यां हुं, ॐ रूं कनिष्ठाभ्यां वौषट्, ॐ स्वों करतलपृष्ठाभ्यां फट्। इसी प्रकार हृदयादि न्यास भी करना चाहिये।।३२।।

ध्यानम्—

मुक्ताहारावदातां शिरसि शशिकलालंकृतां बाहुभिः स्वै-
र्वाख्यां वर्णाख्यमालां मणिमयकलशं पुस्तकं चोद्वहन्तीम्।
आपीनोत्तुङ्गवक्षोरुहभयविलसन्मध्यदेशामधीशां
वाचामीडे चिराय त्रिभुवननमितां पुण्डरीके निषण्णाम्॥३३॥

इसका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—मुक्ताहार के समान श्वेतवर्ण, मस्तक चन्द्रकला से अलंकृत, हाथों में व्याख्या मुद्रा, अक्षमाला, मणिमय कलश तथा पुस्तक मुद्रा धारण करने वाली, पीन उत्तुंग स्तनों के भार से अवनत शरीर वाली, श्वेत पद्म पर बैठी हुई, त्रिभुवन द्वारा नमस्कृत, वाणियों की अधिपति सरस्वती की हम सर्वदा स्तुति करते हैं।।३३।।

अस्य पुरश्चरणं लक्षत्रयजपः।
साज्यपायसैर्दशांशहोमः ॥३४॥

इस मन्त्र का पुरश्चरण तीन लाख जप से कहा गया है। घृत एवं पायस से जप का दशांश होम करना चाहिये।।३४।।

●

अथ परिजातसरस्वती

प्रणवो माया हकारसकारचतुर्दशस्वरबिन्द्वात्मकबीजं माया प्रणवः

सरस्वत्यै नम:। तेन ॐ ह्रीं ह्सौं ह्रीं ॐ सरस्वत्यै नमः इत्येकादशाक्षरः। अस्य कण्वऋषिस्त्रिष्टुप् छन्दः पारिजातसरस्वती देवता। कराङ्गन्यासौ तु ह्सां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ह्सीं तर्जनीभ्यां स्वाहेत्यादिना ह्सां हृदयाय नमः इत्यादिना च। सर्वमन्यत् पूर्ववत्॥३५॥

अब पारिजातसरस्वती का मन्त्र कहते हैं। प्रणव (ॐ) माया (ह्रीं), हस् को चतुर्दश स्वर 'ओ' बिन्दुरूप बीज। सब मिलाकर मन्त्र बनता है—ॐ ह्रीं ह्सौं ह्रीं ॐ सरस्वत्यै नम:। यह ग्यारह अक्षरों का मन्त्र है। इसके कण्व ऋषि, त्रिष्टुप् छन्द, एवं पारिजात सरस्वती देवता हैं। करांगन्यास इस प्रकार होता है—ॐ ह्सां अंगुष्ठाभ्यां नम:, ॐ ह्सीं तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ ह्सूं मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ ह्सैं अनामिकाभ्यां हुं, ॐ ह्सौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्, ॐ ह्सः करतलपृष्ठाभ्यां अस्त्राय फट्। इसी प्रकार ॐ ह्सां हृदयाय नम: इत्यादि रूप से अंगन्यास भी करना चाहिये। तदनन्तर मस्तक पर ॐ नम:, भ्रूमध्य में ह्रीं नम:, दक्ष नेत्र में ऐं नम:, वाम नेत्र में ह्रीं नम:, दक्षिण कर्ण में ॐ नम:, वाम कर्ण में सं नम:। दक्ष नासिका में रं नम:, वाम नासिका में स्वं नम:, मुख में त्यैं नम:, गुह्य में नं नम:, पैर में मं नम:—इस प्रकार से एकादश स्थानों में एकादश मन्त्र से न्यास करना चाहिये। अन्य समस्त विधियाँ दशाक्षर मन्त्र के विधानानुसार ही होती हैं।।३५।।

ध्यानन्तु—

हंसारूढा हरहसितहारेन्दुकुन्दावदाता
वाणी मन्दस्मिततरमुखी मौलिबद्धेन्दुरेखा।
विद्या वीणामृतमयघटाक्षस्त्रजा दीप्तहस्ता
शुभ्राब्जस्था भवदभिमतप्राप्तये भारती स्यात्॥३६॥

ध्यान इस प्रकार किया जाता है—हंस पर आरूढ़, हर से शोभित हार, कुन्द तथा चन्द्र के समान शुभ्र वर्ण वाली, किंचित् हास्ययुक्त मुख वाली, मस्तक पर अर्द्धचन्द्र को धारण करने वाली, विद्या, वीणा, अमृतघट तथा अक्षमाला से दीप्त हाथों वाली, श्वेत कमल पर आसीना आप सबके अभीष्ट-प्राप्ति की हेतु बने।।३६।।

अस्य पुरश्चरणं द्वादशलक्षजपः। पुण्डरीकैर्नागचम्पकपुष्पैर्वा द्वादशसहस्रहोमो वाचनिकः॥३७॥

इस मन्त्र का पुरश्चरण द्वादश लाख जप तथा पुण्डरीक अथवा नागचम्पा के पुष्पों से बारह हजार होम से सम्पन्न होता है।।३७।।

अथ सारस्वतकल्पः

नारद उवाच

केनोपायेन देवेश विद्योत्पत्तिर्भवेन्नृणाम्।
वेदविद्याप्रकाशश्च तन्मे ब्रूहि जगत्पते ॥१॥

अब सारस्वत कल्प कहते हैं। नारद पूछते हैं कि देवेश्वर! किस उपाय से मनुष्य में वेदविद्या का प्रकाश तथा विद्या की उत्पत्ति होती है? हे जगत्पति! मुझसे इन सबको कहिये।।१।।

ब्रह्मोवाच

साधु-साधु त्वया पृष्टं लोकानां हितकारकम्।
एतदेव पुरा पृष्टं कल्पादौ विष्णवे मया ॥२॥
ब्रह्मशब्दस्वरूपेण प्रसन्नेनान्तरात्मना।
यत्प्रोक्तं तेन मे ब्रह्मन् तत्ते वक्ष्यामि यत्नतः ॥३॥

ब्रह्मा कहते हैं—साधु-साधु। तुमने लोकों के हितार्थ यह प्रश्न किया है। मैंने पूर्वकाल के आदि में यही जिज्ञासा भगवान् विष्णु से किया था। उस समय ब्रह्म शब्दस्वरूप सबकी अन्तरात्मा विष्णु ने प्रसन्न होकर जो कुछ मुझे बताया, उसे यत्नपूर्वक तुमसे कहता हूँ।।२-३।।

भगवानुवाच

श्रृणु ब्रह्मन् परं गुह्यं कल्पं सारस्वतं मम।
यस्य विज्ञानमात्रेण जाड्यं प्रहरणं भवेत् ॥४॥
सर्वशास्त्रप्रकाशश्च सर्वज्ञो जायतेऽचिरात्।
अभ्यासाच्च ध्रुवं यस्य वाचश्चित्रो भवन्ति हि ॥५॥

भगवान कहते हैं—हे ब्रह्मन्! जिसके जानने-मात्र से जड़भाव का विनाश हो जाता है, उस गुप्त श्रेष्ठ सारस्वत कल्प को सुनो। जिसके निरन्तर जप से सभी शास्त्रों का प्रकाश होता है, सर्वज्ञत्व तथा विचित्र वाक् शक्ति मिलती है।।४-५।।

अवापुस्त्रिदशा राज्यं वागीशत्वं बृहस्पतिः।
द्वैपायनोऽपि यं ज्ञात्वा वेदव्यासोऽभवन्मुनिः।
मन्त्रोद्धारं प्रवक्ष्यामि स्वाङ्गावरणपूजनैः ॥६॥

इसे जानकर ही बृहस्पति ने तीनों लोकों में वागीशत्व प्राप्त किया है, साथ ही द्वैपायन वेदव्यास मुनि हुये हैं। अंगावरण तथा पूजा के साथ अब इसका मन्त्रोद्धार कहता हूँ।।६।।

अनन्तं बिन्दुना युक्तं वामगण्डान्तभूषितम्।
जपेद् द्वादशलक्षन्तु मूकोऽपि वाक्पतिर्भवेत्।।७।।

अनन्त = आ, इसे रकारान्त एकार से भूषित करने पर आ तथा ए मिलकर 'ऐ' सिद्ध होता है। उसे बिन्दुयुक्त करने से 'ऐं' रूप वाग्भव बीज उपस्थित होता है। इस एकाक्षर मन्त्र का बारह लाख जप करने से मूक भी वाक्पति हो जाता है।।७।।

तथा—

नाभौ शुद्धारविन्दञ्च ध्यायेद् दशदलं सुधीः।
तन्मध्ये भावयेन्मन्त्री मण्डलानां त्रयं चिरम्।।८।।
रत्नसिंहासनं ध्यायेद्वर्णं ज्योत्स्नामयं पुनः।
तस्योपरि पुनर्ध्यायेद् देवीं वागीश्वरीं ततः।।९।।

साथ ही कहते हैं कि सुधी साधक को नाभि में निर्मल दश दल वाले कमल का चिन्तन करके उसके मध्य में तीन मण्डल की भावना दीर्घकाल तक करनी चाहिये। इसके अनन्तर उसी पर रत्नमय सिंहासन की भावना करनी चाहिये। (उसी पर) इसके पश्चात् ज्योत्स्नायुक्त वर्ण का ध्यान करना चाहिये। तदनन्तर उसके ऊपर देवी वागीश्वरी का ध्यान करना चाहिये।।८-९।।

मुक्ताकान्तिनिभां देवीं ज्योत्स्नाजालविकाशिनीम्।
मुक्ताहारयुतां शुभ्रां शशिखण्डेन मण्डिताम्।।१०।।
बिभ्रतीं दक्षहस्ताभ्यां व्याख्यां वर्णस्य मालिकाम्।
अमृतेन तथा पूर्णं घटं दिव्यञ्च पुस्तकम्।।११।।
दधतीं वामहस्ताभ्यां पीनस्तनभरान्विताम्।
मध्ये क्षीणां तथा स्वच्छां नानारत्नविभूषिताम्।।१२।।

मुक्ता की कान्ति से युक्त, ज्योत्स्नाकिरणों का विकास करने वाली, मुक्ताहार से युक्त, चन्द्रकला से मण्डित, हाथों में व्याख्या मुद्रा, अक्षमाला, अमृतपूर्ण घट तथा पुस्तक मुद्रा धारण करने वाली, स्थूल स्तनों के भार से झुकी हुई, क्षीण कमर वाली, स्वच्छ, शुभ्र अनेक रत्नों से विभूषित देवी वागीश्वरी का ध्यान करना चाहिये।।१०-१२।।

आत्माभेदेन ध्यात्वैवं ततः सम्पूजयेत्क्रमात्।

आद्येन दीर्घयुक्तेन कुर्यादङ्गानि हस्तयोः।
हृदयादौ तथा कुर्याद्बीजेनाङ्गक्रिया पुनः ॥१३॥

इस प्रकार से अपनी आत्मा से अभिन्न रूप से देवी का ध्यान करके यथाक्रम से देवी का पूजन करना चाहिये। दीर्घयुक्त आद्य वर्ण द्वारा करन्यास एवं हृदयादि अंगन्यास करना चाहिये।।१३।।

अत्राद्य आकारस्तस्य दीर्घेणाकारादिना योग इत्यर्थः। तथा च—

स्वरं विहाय बीजन्तु दीर्घषट्केन योजयेत्।

इति स्वच्छन्दसंग्रहे वचनादाद्यस्वरत्यागेनात्र केवलदीर्घस्वराणामेव सविन्दुनामेव ग्रहणम्। तथा च आं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ईं तर्जनीभ्यां स्वाहा तथा आं हृदयाय नमः, ईं शिरसे स्वाहेत्यादिप्रयोगः॥१४॥

इस प्रकार से आद्य है—अकार, उसका दीर्घ है—आ। यह अर्थ है। तभी तो कहा है कि बीजस्वर का त्याग करके छ: दीर्घ स्वर द्वारा अंगन्यास की योजना करनी चाहिये।

स्वच्छन्दसंग्रह के इस वचन के बल से प्रथम स्वर का त्याग करके यहाँ केवल विन्दुयुक्त दीर्घ स्वर का ही ग्रहण करना चाहिये। इससे ॐ आं अङ्गुष्ठाभ्यां नम:, ॐ ईं तर्जनीभ्यां स्वाहा इत्यादि मन्त्रों से करन्यास एवं ॐ आं हृदयाय नम: इत्यादि मन्त्रों से अंगन्यास किया जाता है।।१४।।

भ्रुवोर्मध्ये तथा नाभौ गुह्ये च देशिकस्तथा।
न्यसेद्बीजं पुनर्वस्तौ व्यापकं विन्यसेत्ततः ॥१५॥
पीठन्यासं तनौ कुर्याद् देवताभावसिद्धये।
मातृकायास्तु यत्प्रोक्तं पीठमभ्यर्च्य यत्नतः ॥१६॥

पूजक को भ्रूमध्य में, नाभि में, गुह्य में तथा वस्ति में बीजन्यास करके व्यापक न्यास करना चाहिये। तदनन्तर देवताभाव की सिद्धि-हेतु शरीर में पीठन्यास करना चाहिये। पूर्व में जो मातृका न्यास कहा गया है, उसे करके यत्न से पीठदेवता की अर्चना करनी चाहिये।।१५-१६।।

वर्णाब्जेनासनं दद्यान्मूर्त्तिं मूलेन कल्पयेत्।
आवाह्य पूजयेत्तस्यां देवीं वागीश्वरीं ततः ॥१७॥

अर्चना के पश्चात् वर्णसमूहरूपी कमल पर 'ॐ वर्णकमलासनाय नम:' मन्त्र से आसन प्रदान करना चाहिये। तत्पश्चात् उस पीठ (आसन पर) वागीश्वरी का आवाहन करके पूजन करना चाहिये।।१७।।

अङ्गैः प्रथमावृत्तिः स्याद् द्वितीया शक्तिभिस्ततः ।
दलाग्रेषु समभ्यर्च्य ब्रह्माण्याद्या यथाविधि ॥१८॥

अंग (न्यास) द्वारा प्रथम आवरण तथा पीठशक्तियों द्वारा द्वितीय आवरण में पूजन किया जाता है। तदनन्तर दल के आगे वाले पत्र में ब्रह्माणी प्रभृति मातृवर्ग की अर्चना करनी चाहिये।।१८।।

लोकपाला बहिः पूज्यास्तेषामस्त्राणि तद्बहिः ।
एवं सम्प्रभजेन्मन्त्री जपपूजारतः सदा ॥१९॥

दल के बाहर लोकपाल की तथा उसके बाहर उनके अस्त्रों की पूजा करनी चाहिये। साधक को इस प्रकार वागीश्वरी की आराधना करके सर्वदा जप-पूजन में रत रहना चाहिये।।१९।।

कवित्वं लभते वाग्मी लक्षैर्द्वादशभिर्ध्रुवम् ।
प्रातर्जप्त्वा सहस्रन्तु ब्राह्मीं वचान्विताम् ।
न विस्मरति मेधावी श्रुतान् वेदागमानपि ॥२०॥

इसके बारह लाख जप द्वारा साधक वाग्मी तथा कवित्व शक्ति से युक्त हो जाता है। इस मन्त्र का प्रातःकाल एक हजार जप करके वचा तथा ब्राह्मी पीस कर पीने से साधक मेधावी हो जाता है और उसे सुना हुआ वेदागम कभी नहीं भूलता।।२०।।

कण्ठमात्रोदके स्थित्वा ध्यायेन्मार्तण्डमण्डले ।
ज्योतिःपुञ्जनिभां देवीं परिवारसमन्विताम् ।
वराभययुतां हस्ते मुद्रापुस्तकधारिणीम् ॥२१॥

कण्ठ तक जल में खड़े होकर सूर्यमण्डल के ज्योतिःपुञ्ज की कान्ति के समान तथा परिवारजनों से घिरी हुई एवं वर, अभय मुद्रा, व्याख्यानमुद्रा तथा पुस्तकधारिणी देवी का ध्यान करना चाहिये।।२१।।

जपेत्सहस्रमानेन षण्मासं विजितेन्द्रियः ।
भीमां सम्प्राप्य वाक्सिद्धिं कवीनामग्रणीर्भवेत् ॥२२॥

विजितेन्द्रय होकर छः माह तक प्रतिदिन मन्त्र के जप से साधक को अतीव वाक्सिद्धि तथा कविगणों में अग्रणी स्थान प्राप्त होता है।।२२।।

अथ प्रयोगं वक्ष्यामि जाड्यनाशकरं परम् ।
रात्रिशेषे समुत्थाय शुचिर्भूत्वा समाहितः ।
शुद्धभावेन चात्मानं गुरुञ्च परिकल्पयेत् ॥२३॥

अब प्रयोगों को कहता हूँ। जड़ता-नाश के लिये रात्रि शेष हो जाने पर शय्या से उठकर पवित्र होकर समाहित होकर शुद्ध भाव से आत्मा तथा गुरु का चिन्तन करना चाहिये।।२३।।

तत्प्रभापटलव्याप्तं जगत्सर्वं विचिन्तयेत्।
मूलाधारस्थितां देवीं कुण्डलीं परदेवताम्।
सुप्तां प्रोत्थाप्य तां शक्त्या क्रमाच्चक्राणि भेदयेत्॥२४॥

उस समय समस्त जगत् को उस गुरु की प्रभा से व्याप्त होने की भावना करनी चाहिये। तदनन्तर मूलाधारस्थ देवी परमदेवता कुण्डलिनी को शक्ति से जगाकर क्रमशः चक्रों का भेदन करना चाहिये।।२४।।

ततः परशिवे नीत्वा सौधीञ्च प्रापयेत्ततः।
ऊर्ध्वं ग्रन्थिं विनिर्भिद्य जित्वा दीपस्वरूपिणीम्॥२५॥

बीजरूपां स्वशक्त्या तु प्रोल्लसन्तीं परात्मिकाम्।
शब्दब्रह्मस्वरूपाञ्च निःस्वनां चिन्तयेत्ततः।
तत्प्रभापटलव्याप्तं शरीरं चिन्तयेत्ततः॥२६॥

तदनन्तर उस कुण्डलिनी को परम शिव के साथ लेकर मूलाधार में मिलाना चाहिये। तत्पश्चात् ऊर्ध्वग्रन्थि का भेदन करके तथा अपनी शक्ति द्वारा उसे विजित करके दीपशिखा बीजरूपिणी दीप्तिमती परमस्वरूपा शब्दब्रह्ममयी शब्दहीना कुण्डलिनी का चिन्तन करना चाहिये।।२५-२६।।

नित्यं सहस्रमानेन जपेत् संवत्सरं यदि।
ततः सञ्जायते मन्त्री वाचस्पतिरिवापरः॥२७॥

साधक यदि नित्य एक हजार जप एक वर्ष तक करता है, तो वह द्वितीय बृहस्पति के समान हो जाता है।।२७।।

छन्दोऽलङ्कारतर्कादिनानाशास्त्रार्थविद्भवेत्।
कवित्वं ज्ञानशक्त्या तु पाण्डित्यमधिकं भवेत्॥२८॥

वह छन्द, अलंकार, तर्कादि नाना शास्त्रों का ज्ञाता एवं कवि होकर ज्ञानशक्ति के कारण पण्डितों में अग्रणी हो जाता है।।२८।।

अथापरं प्रवक्ष्यामि योगं भुवि सुदुर्लभम्।
नाभिचक्रस्थितां सौम्यां रक्ताकारां विचिन्तयेत्॥२९॥

क्षौमाबद्धनितम्बाञ्च रक्ताभरणभूषिताम् ।
पाशाङ्कुशधरां दिव्यां वराभययुतां पुनः ॥३०॥
दृष्ट्या चामृतवर्षिण्या पूरयन्तीं मनोरथान् ।
एवं ध्यात्वा जपेल्लक्षं मनुजो विहितं ततः ॥३१॥
होमं कुर्यात् त्रिमध्वक्तै रक्तोत्पलयुतैर्द्विजः ।
ततः सन्तर्पयेद् देवीं दुग्धयुक्तेन सर्पिषा ॥३२॥

अब अन्य सुदुर्लभ प्रयोग कहते हैं। नाभिचक्रस्थ सौम्य रक्तवर्ण, क्षौम वस्त्र से ढ़की हुई नितम्बों वाली, रक्ताभरण से भूषित, हाथों में पाश-अंकुश-वर-अभय को धारण करने वाली, अमृतवर्षा से मनोरथों को पूर्ण करने वाली देवी का ध्यान करके एक लाख जप तथा त्रिमधुर में लिपटे लाल कमलों से विहित संख्यक होम करने के उपरान्त दूध में सरसो मिलाकर देवी का तर्पण करना चाहिये।।२९-३२।।

पायसेन बलिं दद्याद् दधिपिष्टैर्मधुप्लुतैः ।
एवं कृत्वा विधानन्तु साक्षाद्वैश्रवणो भवेत् ॥३३॥

मधु द्वारा आप्लुत दधि तथा पिष्टक और पायस की बलि प्रदान करनी चाहिये। इस प्रकार से साधनानुष्ठान करके साधक साक्षात् कुबेर के समान हो जाता है।।३३।।

सिद्धार्थैस्त्रिमधुरोपेतैर्हूत्वा जगद्वशं नयेत् ।
पद्महोमेन महतीं प्राप्नुयात् श्रियमूर्त्तिजाम् ॥३४॥

त्रिमधुर-युक्त सिद्धार्थ द्वारा होम से समस्त जगत् वशीभूत होता है। कमल के होम से महान् ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है।।३४।।

सिद्धमन्त्रो यदा मन्त्री बालीशस्यापि मूर्धनि ।
हस्तं दत्वा स्पृशेत् सोऽपि सौरीं वाचमनर्गलाम् ।
गद्यपद्यमयीं ब्रूते सिद्धविद्याप्रसादतः ॥३५॥

इति सारस्वतकल्पः

इति श्रीरघुनाथतर्कवागीशभट्टाचार्यकृते आगमतत्त्वविलासे तृतीयः खण्डः

यह मन्त्र साधक को जब सिद्ध हो जाता है तो उसके बाद वह साधक यदि मूर्ख के मस्तक का भी स्पर्श कर लेता है तो मन्त्र के प्रभाव से वह मूर्ख भी गद्य-पद्यमयी दैवी वाणी बोलने लगता है।।३५।।

आगमतत्त्वविलास का तृतीय खण्ड समाप्त

तन्त्रशास्त्र-ग्रन्थाः

अन्नदाकल्पतन्त्रम्। हिन्दी टीका सहित। श्री एस. एन.खण्डेलवाल
अहिर्बुध्न्यसंहिता (श्रीपाञ्चरात्रागमान्तर्गता) 'सरला' हिन्दीटीकासहित। डॉ. सुधाकर मालवीय
आगमतत्त्वविलास। हिन्दी-टीका सहित। श्री एस. एन.खण्डेलवाल। (1-4 भाग सम्पूर्ण)
ईश्वरप्रत्यभिज्ञाविवृत्तिविमर्शिनी। अभिनवगुप्त। सम्पादक-मधुसूदनकौल शास्त्री (1-3 भाग)
ईश्वरप्रत्यभिज्ञाविमर्शिनी। (ज्ञानाधिकार)। (प्रथम अधिकार के पाँचवे आह्निक की सप्तम कारिका से लेकर आह्निक के अन्त तक की 'लीला' हिन्दी व्याख्या। टीकाकार-डॉ. दयाशङ्कर शास्त्री
एकजटातारासाधनतन्त्रम्। हिन्दी टीका सहित। श्री एस. एन.खण्डेलवाल
Kamakala Vilasa : Text with 'Cidwalli' Sanskrit Commentary and English Translation, Notes etc. Dr. R. P. Dwivedi & Dr. S. Malaviya
कामकलाविलासः। चिद्वल्या संवलितः। सरोजिनी हिन्दी व्याख्या सहित। डॉ. श्यामकान्त द्विवेदी 'आनन्द'
कामाख्यातन्त्रम्। 'ज्ञानवती' हिन्दी टीका सहित। आचार्य राधेश्याम चतुर्वेदी
कुण्डलिनी शक्ति। (योग-तान्त्रिक साधना-प्रसङ्ग) श्री अरुणकुमार शर्मा
कुलार्णवतन्त्रम्। 'नीरक्षीरविवेक' हिन्दीटीका। डॉ. परमहंस मिश्र
गायत्री-मन्त्रार्थ भास्कर। भाषा टीका सहित। पं. यमुना प्रसाद द्विवेदी
गायत्रीमहातन्त्रम्। आचार्य राधेश्याम चतुर्वेदिप्रणीत। हिन्दीभाष्य विभूषित
तन्त्रविज्ञान और साधना। श्री सीताराम चतुर्वेदी
तन्त्रसारः। अभिनवगुप्तपादाचार्य विरचित। हिन्दीटीका सहित। (1-2 भाग)। डॉ. परमहंस मिश्र
तन्त्रराजतन्त्रम्। हिन्दी टीका सहित। श्रीकपिलदेव नारायण
तन्त्रसारसङ्ग्रहः। नारायण विरचित। सव्याख्या। आंग्ल एवं संस्कृत भूमिका सहित।
तन्त्रालोक। अभिनवगुप्तपादाचार्य। जयरथकृत'विवेक' टीका एवं पं. राधेश्याम चतुर्वेदीकृत हिन्दीटीका
त्रिपुरारहस्यम्। डॉ. जगदीशचन्द्र मिश्रकृतहिन्दी अनुवाद सहित। ज्ञानखण्ड एवं महात्म्यखण्ड
त्रिपुरार्णवतन्त्रम्। (उपासनाखण्ड) हिन्दीटीका सहित। डॉ. जगदीशचन्द्र मिश्र
दक्षिणकालिकासपर्यापद्धतिः। डा. रामप्रिय पाण्डेय
दुर्गासप्तशती। दुर्गाप्रदीप-गुप्तवती-चतुर्धरी-शान्तनवी-नागोजीभट्टी-जगच्चन्द्रिका-दंशोद्धार नामक सप्तटीकायुक्त।
दुर्गासप्तशती। मूलमात्र। नव-शत-सहस्रचण्डी-पल्लवयोजनाविधि-कवचअर्गला-कीलक-कुञ्जिकास्तोत्र सहित।
दुर्गासप्तशती। पं. रामतेज पाण्डेय शास्त्रीकृत हिन्दी व्याख्या सहित। सम्पादक-डॉ. ब्रह्मानन्द त्रिपाठी
देवीरहस्यम्। (परिशिष्ट सहित) श्रीरुद्रयामलतन्त्रान्तर्गत हिन्दीटीका सहित। श्री कपिलदेव नारायण
नीलसरस्वतीतन्त्रम्। श्री एस. एन. खण्डेवालकृत हिन्दी टीका।
नित्याषोडशिकार्णवः। संस्कृत एवं हिन्दी-टीका सहित। श्री एस.एन. खण्डेलवाल
नित्योत्सव। हिन्दी-टीका सहित। श्रीपरमहंस मिश्र
नेत्रतन्त्रम्। क्षेमराजकृत 'नेत्रोद्योत' संस्कृत एवं श्रीराधेश्याम चतुर्वेदीकृत 'ज्ञानवती' हिन्दीटीका सहित
परलोकविज्ञान। श्री अरुणकुमार शर्मा
प्राणतोषिणी। मूलमात्र। श्रीरामतोषण भट्टाचार्य।
पुरश्चर्यार्णवः। श्रीनेपालमहाराजाधिराज प्रतापसिंह साहदेवविरचित। सम्पादक-म. म. मुरलीधर झा
प्रपञ्चसारसारसंग्रहः। गीर्वाणेन्द्रसरस्वतीविरचित। के. एस. सुब्रह्मण्यशास्त्री सम्पादित।

ब्रह्मास्त्रविद्या एवं बगलामुखी साधना। डॉ. श्यामाकान्त द्विवेदी
भूतडामरतन्त्रम्। श्री एस. एन. खण्डेलवालकृत हिन्दी टीका
भारतीय शक्ति-साधना। (शक्ति-विज्ञान : स्वरूप एवं सिद्धान्त)। डॉ. श्यामाकान्त द्विवेदी 'आनन्द'
Mahanirvanatantram. Sanskrit Text, Transliteration and English Translation with Copious Notes. Edited by M. N. Dutta
मन्त्र और मातृकाओं का रहस्य। डॉ. शिवशङ्कर अवस्थी
महाकालसंहिता (कामकला कालीखण्ड)। 'ज्ञानवती' हिन्दीभाष्य सहित। प्रो. राधेश्याम चतुर्वेदी
महाकालसंहिता (गुह्यकालीखण्ड)। 'ज्ञानवती'हिन्दीभाष्यसहित। प्रो. राधेश्याम चतुर्वेदी। (1-5 भाग)
मन्त्रमहोदधि। 'नौका' संस्कृत टीका तथा 'अरित्र' हिन्दी व्याख्या। व्याख्याकार–डॉ. सुधाकर मालवीय
महानिर्वाणतन्त्र। हिन्दी टीका सहित। श्रीकपिल देव नारायण
मुद्राविज्ञान-साधना। डॉ. श्यामाकान्त द्विवेदी
राधातन्त्रम्। हिन्दी टीका सहित। श्री एस. एन.खण्डेलवाल
रुद्रयामलतन्त्र। हिन्दी टीका सहित। टीकाकार–डॉ. सुधाकर मालवीय
रेणुकातन्त्रम्। हिन्दी टीका सहित। श्रीकपिल देव नारायण
ललितासहस्रनाम। भास्करराय प्रणीत 'सौभाग्यभास्करभाष्य' एवं श्रीभारतभूषणकृत विस्तृत हिन्दी व्याख्या।
ललितोपाख्यानम्। (तन्त्र)। मूलमात्र
वर्णबीजप्रकाश। श्रीसरयूप्रसाद द्विवेदी। सम्पा.–डॉ. परमहंसमिश्र
वरिवस्यारहस्यम्। 'प्रकाश' संस्कृत एवं डॉ. श्यामाकान्त द्विवेदी 'आनन्द' कृत हिन्दी टीका सहित।
विज्ञानभैरवः। श्रीबापूलाल आँजना विरचित कारिकानुवाद विवृतभागस्थ हिन्दी व्याख्या
वृहत्तन्त्रसारः। कृष्णानन्द आगमवागीशकृत। 'साधनात्मक' हिन्दीटीका सहित। श्रीकपिलदेव नारायण
श्रीविद्यार्णवतन्त्रम् । 'साधनात्मक' हिन्दीटीका सहित। श्रीकपिलदेव नारायण (1-5 भाग सम्पूर्ण)
श्रीविद्यासपर्या पद्धति। ब्रह्मश्रीशङ्कररामशास्त्री
श्रीविद्या-साधना। (श्रीविद्या का सर्वाङ्गपूर्ण शास्त्रीय विवेचन)। डॉ. श्यामाकान्त द्विवेदी
शारदातिलकम्। 'पदार्थादर्श' संस्कृत टीका एवं डॉ. सुधाकर मालवीयकृत हिन्दी-टीका सहित।
षट्चक्रनिरूपणम्। पूर्णानन्दयति। शिवोक्त पादुकापञ्चक सहित। श्रीभारतभूषणकृत हिन्दी व्याख्या सहित।
सप्तशतीसर्वस्वम्। नानाविधसप्तशतीरहस्यसंग्रहः। पं. सरयू प्रसाद द्विवेदी
सर्वोल्लासतन्त्रम्। हिन्दी टीका सहित। टीकाकार–श्री एस. एन. खण्डेलवाल।
सार्द्ध-नवचण्डि-पुरश्चरण। डा. रामप्रिय पाण्डेय
सिद्धनागार्जुनतन्त्रम्। श्री एस. एन. खण्डेलवाल कृत हिन्दी टीका सहित।
सौन्दर्यलहरी। 'लक्ष्मीधरी' संस्कृत एवं 'सरला' हिन्दी व्याख्या। सुधाकर मालवीय
स्पन्दकारिका। विस्तृत हिन्दी व्याख्या, तुलनात्मक अध्ययन एवं टिप्पणी सहित। डॉ. श्यामाकान्त द्विवेदी
Spandanirnaya (The Divine Vibration). Sanskrit with English Translation by Madhusudan Kaul.
स्वच्छन्दतन्त्रम्। संस्कृत-हिन्दी टीका सहित। प्रो. राधेश्याम चतुर्वेदी (1-2 भाग)
सिद्धसिद्धान्तपद्धति। हिन्दी अनुवाद सहित। स्वामी द्वारकादास शास्त्री।
The Doctrine of the Tantrayukti-s (Methodology of Ancient Indian Sciences)
Dr. W. K. Lele

●